ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित लेखिका का सर्वप्रिय उपन्यास

गृहस्थी

लेखिका

आशापूर्णा देवी

अनुवाद

देवलीना



विद्या प्रकाशन मन्दिर

नई दिल्ली—110002

लेखिका / अनुवादिका
संस्करण प्रथम 1986
मूल्य रु० 35 00
प्रकाशक विद्या प्रकाशन मंदिर
1681 दरियागंज, नई दिल्ली 110002
मुद्रक हिंदुस्तान प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली 1100032

GRIHSTHI (A Navel) by Ashapurna Debi
Rs 35 00

भूमिका

ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता बंगला की सुप्रसिद्ध लेखिका आशापूर्णा देवी का लिखा हुआ 'गृहस्थी' (बंगला नाम 'शशिबाबूर संसार') एक कालजयी उपन्यास है।

एक बार उनके घर पर उनकी साहित्यिक कृतियों और अनुवाद के बारे में बातचीत के सिलसिले में उन्होंने मुझसे कहा था "मेरा एक उपन्यास है, 'शशिबाबूर संसार।' मेरी बड़ी इच्छा है कि इस पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद हो। मेरी यह रचना मुझे बड़ी ही प्रिय है।"

इस किताब को अनुवाद करने का यही मेरी प्रेरणास्रोत रहा है।

'गृहस्थी' की यही सबसे बड़ी बात है कि इसकी कहानी हर गृहस्थी की अपनी कहानी जैसी लगेगी। कोई भी गृहस्थी चाहे वह कितनी ही छोटी क्यों न हो, उसमें छोटी छोटी बातें, छोटे मोटे सुख दुख और छोटी छोटी समस्याओं से जो तूफान खड़ा होता है, छोटा नहीं होता। उसका रूप विशाल होता है और उसकी जड़ें गहराई तक उतर आती हैं। इस विराट क्षय से बचने का कोई उपाय भी नहीं, क्योंकि गृहस्थी के हर व्यक्ति का स्वार्थ अलग होता है, दृष्टिकोण अलग होता है इस हर अलग को एक सूत्र में जोड़ने का जो मंत्र होता है, मध्यमवर्गीय वंचित जीवन में उसकी उम्मीद रखना शायद गलत होगा। इसलिए हम देखेंगे कि शशिबाबू की गृहस्थी में भी जटिलताओं का कोई अंत नहीं।

कहानी शुरू होती है, उस समय से जब शशिबाबू नौकरी से अवकाश प्राप्त कर प्राविडेंट फंड के पैसों से एक छोटा सा घर बनाकर जीवन के बाकी के वर्ष सुख से बिताना चाहते हैं। उन्होंने कभी यह नहीं सोचा कि उनकी इस इच्छा को साकार करने में कितनी समस्याएं सामने आएंगी।

बहुत वर्ष पहले, जब यह उपन्यास लिखा गया था, पच्चीस हजार रुपए कुछ अर्थ रखते थे। इस रकम में अपने परिवार के साथ सुख से, सारे कर्तव्यों को निभाकर ठीक ठीक तरीके से रहा जा सकता था। पर सारी जिंदगी की इस पूंजी को शशिबाबू के परिवार का हर सदस्य अपने ढंग से खर्च करना चाहता था।

आशापूर्णा देवी पिछले साठ साल से साहित्य साधना में रत हैं।

उन्होने किसी स्कूल या कालेज मे शिक्षा प्राप्त नही की थी। उस युग मे, जैसा होता था, किशोर वय म ही जिस विशाल-परिवार की वहू बनकर वो आयी, उस सयुक्त परिवार म, दिन पर दिन, लम्बे समय से जिन लोगो के साथ उन्होने गहस्थी निभायी। विभिन्न उम्र तथा स्तरा की उन सारी पदानशीन स्त्रियो ने ही उनम कलम पकडने की प्रेरणा जगायी।

'साहित्य' नाम से जो समझा जाता है—जैसे कहानी उपन्यास, कविता या नाटक सब कुछ इस नारी के इद गिद ही घूमता रहता है। जिस तरह महामानव के सष्टि की मूल मे नारी ही थी उसी तरह दुनिया की जो कुछ श्रेष्ठ और महत्वपूण साहित्य कृति है उसकी मूल म भी नारी ही है।

मोटे तौर पर नारी जीवन की जितनी भी समस्याए हैं—उनका मान अपमान, अन्याय अविचार, विधि निषेध, कुसस्कार, यानि कि नारी के विकास मे घर या वाहर जितनी भी बाधाए है उनके विरुद्ध आशापूर्णा देवी ने आवाज उठायी है।

ज्ञानपीठ पुरस्कार लेते समय उन्होंने कहा था—"इन्सान के बनाए हुए समाज म नारी-पुरुष का मूल्याकन एक जैसा क्यो नही होता? समाज, व्यवस्था मे इतनी असमता क्यो है? पुरुष की बडी कमजोरी समाज पचा लेता है। पर थोडी सी भूल के लिए नारी को कठोर दड का सामना करना पडता है, क्यो? क्योकि यहाँ अधिकारो का अभाव है, क्योकि उसका जीवन अवरोध के बीच ही कटता है। इसीलिए मैंने नारी के बारे मे ही अधिक सोचा है। क्योकि मैंने उनकी असहाय दशा को अच्छी तरह से देखा जाना है। मेरे प्रश्न मुखर मन मे प्रतिवाद का पहाड जम चुका था। उस प्रतिवाद का प्रतीक थी 'प्रथम प्रतिश्रुति'। इसको ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला था। उसकी नायिका सत्यवती की स्वच्छ दष्टि के आईने म तत्कालीन समाज की सारी असगतिया और असमानताए झलक उठती हैं और वह मूक न रहकर प्रतिवाद से मुखर हो उठी थी।"

ऐसी बात नही है कि नारी लेखिका के नाते वह नारी मन की ही खबर अधिक रखती हो। पुरुष-मन के क्षेत्र मे वे और भी अधिक अचेतन, और अधिक ममताशील हैं। एक वाक्य मे यदि कहा जाए तो मानव मन के सभी कोना मे आशापूर्णा जी की गहरी पैंठ है। —देवलीना

सत रामप्रसाद कह गए हैं, "यह ससार एक गोरखधधा है।" भक्ति रस म डूबे भाव विभोर कवि को इस ससार मे ऐसी कौन सी तकलीफ उठानी पडी, जिसके कारण उन्हे ऐसी बात कहनी पडी, क्या मालूम, पर उनकी बात बडे पते की है, इसमे कोई सदेह नही।

ऊपर से मजे की बात तो यह कि गोरखधधे मे पडे बिना भी इस किसी को चैन नही, भले ही आदमी हर क्षण विद्रोह करे, छटपटाए, अपने ही लोगो के साथ आपस मे टकराए और उस टकराव से आग लग जाए, और भले ही उस आग मे उसका बहुत कुछ जल कर राख हो जाए। मन ही मन आपस मे एक दूसरे के प्रति शिकायत रखने, और अशाति का कारण क्या है, उसे ढूढे बिना ही एक दूसरे पर आरोप लगाने पर जो नतीजा होता है, होता ही है।

यही सब देखकर जीवन के आखिरी छोर पर पहुचकर लम्बी सास छोडकर कहना ही पडता है, 'यह ससार, यह घर गहस्थी सब एक गोरखधधा है।'

ऐसी ही एक घर गृहस्थी का पर्दा मैं पाठको के सामने से उठाती हू। छोटी छोटी बातें, छोटी मोटी समस्याए, छोटे से सुख, छोटे से दुख, फिर भी इन्ही के बीच जो आधी उठती है वह छोटी नही होती। जो द्वद्व उत्पन्न होता है, वह एक विराट रूप धारण कर लेता है।

मध्यमवर्गीय गहस्थी की यह एक बहुत बडी ट्रेजिडी है। कुछ मामूली समाज व्यवस्थाए उसके जीवन पर पत्थर होकर बैठी हैं, वह जीवन की मुक्ति की आकाक्षा मे छटपटा जाता है उसका दम घुटता है, फिर भी वह उस पत्थर को हटाने की हिम्मत नही करता। बिना किसी की कुछ भी परवाह किए जो लोग इसकी कोशिश करते हैं, उन्हे भाग्य म बदनामी मिलती है।

इस बार मामाजी का आगमन काफी दिनों के बाद हुआ था। इस कारण उल्लास भी ज्यादा था। मन्दाकिनी बोल उठी, 'भैया। क्या खुश-किस्मती हमारी कि आपको मेरी याद आयी।'

शशि बाबू ने आदर के साथ कहा, 'क्या बात है ? आपके पैरों की धूल इन दिनों बडी महगी हो गई है क्या ?'

मुकुन्द बाबू हा-हाकर हस पडे। बोले, 'क्या उपाय ? वैसे मदा दिनों-दिन जिस तरह वहमी होती जा रही है, शायद किसी दिन यह न कह बैठे कि भैया, कही तुम भगी के झाडू की धूल अपनी चप्पलो के साथ तो लेकर घर नही आये न ?'

सालेजान के ऐसे जवाब म खुश होकर शशि बाबू ने पत्नी की तरफ कटाक्ष से देखा, मानो कहना चाह रहे हो कि मैं ही अकेला तुम्हारे वहम पर टोकने वाला नही हू। तुम्हारा अपना भाई भी बोल रहा है।

भाई की बात सुनकर मदाकिनी नाराज हो गई। गाल पर हाथ रख-कर बोली, "तो यह बात है भैया। तुम मुझे बदनाम कर रहे हो ? मैंने कब तुम्हे यह सब कहा ?'

'मुह से तो तूने कुछ कहा नही, यह तो सच है, पर मन मे तो कहा ही होगा।' कहकर मुकुन्द बाबू हसने लगे। फिर बोले—'बहू, अरी ओ बहू कहा गई ? मैंने कहा—केतली की सारी चाय क्या खास ससुर जी को पिला दी। फालतू के इस ससुर के लिय कुछ नही छोडा।'

वधु सुमित्रा धीमी आवाज मे बोली, 'नही मामाजी, ठण्डी चाय क्या पिएगे ? आपके लिए मैं फिर से बना के लाती हू।'

'सिफ चाय ? मुकुन्द बाबू नकली गम्भीरता दिखाकर बोले।

'चाय के साथ खाय का एक अटूट सम्बन्ध है। कजूस ससुर के चगुल म पडकर बेटी क्या तुमने वो भी भुला दिया ?'

'कजूस' शब्द से चौक कर शशि बाबू गम्भीर भाव से हस कर बोले, कह लो भया, कह लो। जिसे मौका मिल रहा है वही एक हाथ ले रहा है। फिर तुम क्यो पीछे रहोगे ?'

मदाकिनी बोल उठी, 'भैया के सामने जो मर्जी कह रहे हो। कौन तुम्हे क्या कह रहा है, जरा सुन तो सही ?'

'नही, वैसे तो देखने-सुनने के लिए कुछ नही है, पर जानती हा, अन-सुनी वात की भी एक अनुभूति होती है, समझी ?'

फिर बोले, 'जानते हो मुकुद भैया, रिटायर करने के बाद मेरी पाकिट छोटी हो गयी है, इस बात का ख्याल मेरे बेटे-बेटी नही रखते। व सोचते हैं कि बुढापे मे उनके वाप की नजर भी छोटी हो गयी है।'

मुकुद बोले, 'सोचने दो भैया, सोचने दो। सोचने की आजादी तो सभी को है। खैर, यह तो बताओ कि तुम्हारे यहा आखिर किस वात की वठक बैठी थी ? बाहर से तो आधी का आभास मिल रहा था।'

रेखा ने कहा, 'मामाजी, हम लोग किसी खास बात पर राय विचार कर रहे थे।'

'वह तो मैं समझ ही रहा हू। मुहल्ले भर को पता न चले तो वह राय विचार ही क्या। लेकिन विचार किस बात पर हो रहा था ? तुम्हारी शादी पर ?'

इस बार परेश बोला, 'असली बात सुनिए मामाजी। पिताजी के प्रोविडेट फड के रुपयो का क्या किया जाए, यानी उसे किस तरह से खच किया जाए, इसी बात को लेकर हम सभी चिता मे पड गए है।'

'अरे क्या कह रहे हो परेशचद्र ?' मुकुद बाबू मानो चौंक कर बोले, 'रुपया को किस तरह से खच करोगे इस वात का लेकर सोच मे पड गए हो ? मैं आखिर हिदी भाषा ही तो सुन रहा हू न, या कोई देव भाषा ?'

छोटा भाई सौतेश अपनी आदत के मुताबिक हडबडा कर वाला 'बात यह है मामाजी कि पिताजी तो कह रहे हैं कि 'मकान', पर दूसरी तरफ '

'रुको रुको, आहिस्ता बोलो। मुझे अच्छी तरह से सब समझने-बूझने दो।' मुकुद वाबू बोले, घर पर अचानक कुछ रुपए आ गए हैं। यही वात है न और अब बोझ नही सभल रहा है। इसलिए इस वोझ का हल्का करने के लिए इस गोलमेज वठक का आयोजन किया गया है, और ।

मदाकिनी बोली, 'भया को तो हर बात मे मजाक ही सूझता है। तुम्ही कहो न भैया, घर मे रुपया आते ही उसे फिजूल खच करना तो ठीक

नहीं होगा न ? लडकी सयानी हो गई है, उसकी शादी क लिए भी सोचना जरूरी है, इसके अलावा मेरे लिए भी तो साचना जरूरी है—मेरा भी तो कुछ भविष्य है।

शशिभूषण कौतुक के साथ बोले, 'आय। तुम्हारी भी शादी के लिए साचना है क्या ?'

'आहा। मजाक के भी ढग हाते हैं', मदाकिनी गुस्से से बोली—'जुबान पर लगाम नहीं ?'

शशिभूषण निराश होने का ढाग रचाकर बाल, 'वाह ! अभी अभी तुम्हीं ने तो कहा कि लडकी की शादी के लिए साचना पडेगा और तुम्हारे लिए भी साचना पडेगा।

'चुप भी रहो। भया, मैंने ता यह कहा कि रुपए अगर बक म मेरे नाम से जमा रहते हैं ता, सब तरह से ही अच्छा रहता कि नहीं ? चाहे कैसे भी हालात क्यो न हा, स्त्री धन पर किसी का हक नहीं होता और वह जरूरत के समय समझ बूझकर खच किया जा सकता है।

अपनी बुद्धि की विलक्षणता पर मदाकिनी के चेहरे पर आत्मसताप की खुशी छलक उठी। मुकुन्द बाबू हस कर बोले, 'तुम्हारा पक्ष लू तो बात ठीक लगती है, पर सबको यह बात पसद आएगी, इसकी उम्मीद कुछ कम ही है।'

परेश नाराजगी के साथ बोला—'अच्छा मामाजी आप ही बताइए, यह भी कोई बात हुई ? रुपया बक म जमाकर डाला, साल म ज्यादा से ज्यादा दो ढाई रुपया प्रति सैकडा ब्याज मिलेगा, बस। इसका भी कोई अथ होता है ? रुपयो का कैसे जल्दी बढाया जाए साचन की बात तो यह हानी चाहिए। मेरी राय म ता इन रुपया का किसी बिजनेस मे लगा देना ही उचित रहगा ताकि—'

'बिजनेस ? किस चीज का बिजनेस ?'

'कुछ भी। चल जाए तो किस बिजनेस म फायदा नहीं है, कहिए ?"

'वह तो ठीक है। लेकिन चल जाए तब तो ।'

शशि बाबू व्यग्यात्मक ढग से बोले, 'साले बाबू, इस छोटी-सी बात का ही ता बेटे को समझा नहीं पा रहा हू। बेटा मेरे पच्चीस हजार को पच्चीस

लाख बनाने का सपना तो देख रहा है पर मेरा कहना है, बिजनेस कहने ही से तो बिजनेस नही हो जाता। जो बिजनस कर सकते हैं, उनका हाड मास ही अलग किस्म का होता है।'

परेश कुछ कहने ही जा रहा था कि सुमित्रा नाश्ता और गरमागरम चाय ले आई। फिर मुलायम आवाज मे बोली, 'मामाजी आपकी चाय।'

मुकुन्द बाबू अपने स्वभाव के मुताबिक उल्लसित होकर बोले, 'अरे वाह! चाय-वाय सब हाजिर सुहाल तो बडे करारे हैं। देख मदा, मेरी राय मे तो रुपया का सही सदुपयोग तो अतिथि सेवा मे ही है। सनातन भारत का चिरन्तन आदर्श भी यही रहा है।'

बात कुछ मदाकिनी के पल्ले नही पडी। विस्मय के साथ बोली, 'अतिथि सेवा ? कैसी अतिथि सेवा ?'

मुकुन्द बाबू बडे विनय के साथ बोले, 'हमारे जैसे अतिथियो की सेवा। ज्यादा खटने की भी जरूरत नही है। सिर्फ कुछ दिनो तक जान पहचान वालो की, रिश्तेदारो अर्थात सगे-सम्बन्धियो की खोज खबर लेनी शुरू कर दो। घर आने के लिए, खाना खाने के लिए उनसे अनुरोध करो, उनके आने के बाद अपना कृत कृतार्थ भाव व्यक्त करो और फिर देखो कि रुपयो का अक किस तरह जीरो हो जाता है।'

सीतेश लाड के साथ बोला, 'फालतू बातो को छोडिए मामाजी, आप पिताजी को अच्छी तरह समझा कर जाइए। मैं इतना समझा रहा हू पर पिताजी समझना ही नही चाहते। अगर वे भविष्य के लिए निश्चिन्त रहना चाहते हैं तो इन रुपयो को मुझ पर लगा दें।'

बात मामा भाजे मे चल रही थी, इसलिए बाकी सदस्य चुपचाप थे। इसके अलावा सीतेश का तक अब तक बासी पड चुका था। मुकुन्द बाबू ने पूछा, 'तुम्हारे ऊपर लगा देने का मतलब ?'

'मतलब और क्या हो सकता है। मुझे बाहर भेज दें। एक बार बाहर समुद्र पार कर लू तो उन्नति होनी ही होनी है। घर का एक लडका अगर लायक बने तो घर के सभी लोगो को लाभ पहुचता है। इस बात को कोई नकार नही सकता, है न ? रातो-रात धनी बन जाने का सपना तो सपना ही है। उसका कोई अर्थ नही होता। मेरी समझ से आहिस्ता-

आहिस्ता अमीर बनना चाहिए।'

शशि बाबू अब और चुप नहीं रह सके। छोटे बेटे की तरफ व्यग्य से देखकर बोले —'ठीक बेटे ठीक। तुम लोग आहिस्ता से, सब्र से ही पसे वाले बनना। इस गरीब की इस छोटी सी पूजी मे सर छुपाने के लिय एक छत हो तो बस मेरी तो छुट्टी। इन रुपया को नाहक बरबाद न कर अगर मैं इतना ही कर सका तो मर कर भी मुझे सतोष मिलेगा। उफ! जिन्दगी भर किराय के मकान म रहते रहते

इसके पहले भी य बाते बहुत बार दुहरायी गई थी, फिर भी मुकुन्द बाबू के सामने आलोचना मे नई जान आ गयी। और इसीलिय रेखा की तरफ से भी जवाब जानदार मिला।

रेखा बोली, 'जीवन भर किराये के मकान म रहे तो सही, पर अच्छे ही ना रह। अब इस आखिरी समय मे सर छुपाने लायक किसी घर मे रह सकेगे क्या? और क्या उस रह सकने का कुछ अथ होगा? आपके इन रुपयो से तो एक मजिला मकान ही तो बनेगा।'

शशि बाबू अवहेलना की दृष्टि स बोले 'एक मजिला बन जाये इतना ही बहुत है। मैं उतने म ही अपना भाग्य मानूगा।

बस तो रेखा अपने पिता का मानती थी पर कोई बात पसन्द न आने पर विरोध करने से चूकती भी नही थी। इसलिय पिता की बात पूरी होते ही उसन तडाक से कहा फिर तो इन पैसो से कुछ मुसीबत मोल लेना होगा। यही बात है न पिताजी? जीवन भर तो आप दो मजिले, तीन-मजिले मकान म रहते आय हैं। अब जैसे तसे कोई मकान बनाना और उसमे रहना का अथ ही है मुसीबत मोल लेना।'

शशि बाबू ने लडकी की तरफ कडी नजर से देखा और बोले, 'तो फिर तुम लोगो की राय म इन पैसो की साथकता किस बात मे है?'

रेखा तपाक से बोली, किस बात म? यह भी कोई प्रश्न है पिताजी? रुपया की साथकता तो आराम और चन से रहने मे है। मेरी राय म एक मोटरगाडी खरीदना ही सबसे अच्छा रहेगा। गाडी खरीदने के बाद जो पैसा बचेगा, पट्रोल खरीदने के लिये उसे बचत खाते मे रख दिया जाएगा। अलग से रुपया रखने पर बाद म पेट्रोल खरीदना भारी नहीं पडेगा। मेरी

एक सहेली के पिताजी ने 'मौरिस कार' खरीद कर उसे घर बैठा रखा है। कहते हैं पेट्रोल का खर्च कोई मामूली बात है।'

शशि बाबू कुछ कह पाए, इससे पहले ही मदाकिनी ने कहा—'लड़की की बात तो जरा सुनो। सब कुछ लुटाकर गाडी खरीदना चाहती है। पगली कहीं की।'

रेखा सहजभाव से बोली—'क्यो? गाडी रहने से अधिक सुख और किसमे है? गाडी मानो जीवन मे गति का प्रतीक है।'

मुकुन्द बाबू बडे कौतुक के साथ बोले, 'क्या कहा? तूने क्या कहा? लगता है बहुत जबदस्त कुछ कह गयी।'

'थोडी देर आप और ठहरिये तो आपको और जबदस्त और सब तरह की बातें सुनने को मिलेंगी।'

सीतेश और परेश दोनो भाई भुने मुरमुरे खा रहे थे, इसलिये इच्छा रहने पर भी वे लोग कुछ कह नही पाये। रेखा ही बोली, 'इस घर का क्या हाल है जानते है मामाजी? कोई किसी की सलाह ता मानता नही, उल्टा तक मे हारने पर व्यग्य के छीटे कसते है।'

'बुरी बात है, बहुत बुरी बात है।' मुकुन्द बाबू बोले, 'यह कोई मजाक या व्यग्य की बात तो है नही? यह एक भारी समस्या वाली बात है। घर म पाच व्यक्ति हैं तो पाच तरह की राय भी रहेगी ही। एसी समस्या के समान समस्या कम ही देखने को मिलती है। तू गाडी खरीदना चाहती है, तेरे पिता मकान बनवाना चाहते है, तेरी मा अपने नाम से नकद रुपया रखकर उस पर जम कर बैठना चाहती है, तरे भाईया मे एक इन रुपयो को व्यापार म लगाकर बहुत रुपया कमाना चाहता है, और दूसरा उन रुपया के पख पर चढ कर नीले आकाश मे उडना चाहता है। इतनी सारी समस्याओ से सघष करने पर गृहस्थी के मच पर आधी, पानी बिजली, क्या नही गिर सकती? पर सुमित्रा बेटी, तुम क्या चुपचाप बैठी हो? तुम्हारी राय तो मैंने सुनी ही नही? तुम भी कुछ कह डालो।'

मेरी कोई राय नही है मामाजी।' धीमी पर दृढ आवाज मे सुमित्रा ने कहा।

'राय नही है? क्या?'

"क्योंकि इस विषय पर अपनी कोई राय दे सकू, यह अधिकार मुझे है, ऐसा मैं नहीं समझती।

'क्यों नहीं, तुम तो घर की लक्ष्मी हो '

यह बात तो अर्थहीन है मामाजी। जो चीज हमारी नहीं है उस विषय पर कुछ कहना मेरी राय में बेवकूफी है।'

सुमित्रा पढ़ी लिखी सभ्य और शान्त लड़की थी। बात कम करती थी। अपने बड़ों के साथ बातें करते समय बहुत ही धीमी आवाज में बोलती थी, पर जो भी जवाब देती अच्छी तरह देती। उसकी नम्रता के पीछे एक लौह दृढ़ता थी जो कभी कभी पकड़ में आती थी।

इस जवाब के पीछे उसी दृढ़ता की झलक चमक उठी और जो निर्दोष थे वे उसकी इस बात पर शर्म से सकुचित हो गए। मुकुन्द बाबू ने झट से एक नजर सबकी तरफ डाली और समझ गये कि मामला कुछ और रुख अपनाता जा रहा है। और यदि अभी पाल को नहीं पकड़ा गया तो नाव डूब जायेगी, इसलिए हसकर बोले, 'अरे भाई, तुमने तो जटिल समस्या को और जटिल बना दिया।'

शशि बाबू गभीर हसी हसकर बोले, 'हा भैया जी, घर गहस्थी तो तुमने बसायी नहीं, सारी जिन्दगी तो समस्याओं से बचते बचाते काट ली। तुमने तो कुछ जाना नहीं कि गहस्थी क्या है। मैं तुमको बताता हू। गहस्थी हजार समस्याओं के छेद से बनी एक छलनी के समान है। समझे कुछ? मामले का हल निकले यह उम्मीद कहा?'

'मुझसे ईर्ष्या हो रही है?' मुकुन्द बाबू बोले—लेकिन भाई मेरी समझ से तुम लोग अपनी बुद्धि की भूल से ही समस्याओं को और जटिल बनाते जा रहे हो।

लड़के लड़कियों की बातों को शशि बाबू ने उतना महत्त्व नहीं दिया, पर जब उनकी अपनी ही पत्नी ने मकान बनाने के विषय को नजरअन्दाज कर दिया तो शशिबाबू स्वाभिमानवश चुप तो रह पर मन ही मन उनका गुस्सा बढ़ता गया। सोचा—मकान बनाने जैसी गलत बात अब जुबान पर भी नहीं लाऊगा। किसके लिये मकान बनाऊ? उनकी अपनी जरूरत भी कितनी है? मरने दो। व जियेंगे भी और कितने दिन? आख मूदने पर

इस दुनिया मे कौन किसका है ? उस समय बेटे बेटी, पत्नी, सडक पर रह या पेड की छाह तले, कौन देखने आता है ? गुस्से से, दु ख से इसी तरह की और अपने वैराग्य की बातें उनके मन मे उठ खडी हुई। दूसरे दिन से ही उन्होने जमीन देखने और इट, चूना और सुर्खी की कीमतें बाजार म जा जाकर पूछने का काम भी छोड दिया।

लेकिन मदाकिनी को भी कैसे गलत ठहराया जा सकता था ? सब कुछ उस ही तो सभालना पडता था। मदाकिनी को जब पता चला कि शहर के बीच नही, शहर के बाहर शशिबाबू जमीन देख रह है और तीन-चार कट्ठे जमीन खरीदने और उसमे दो-तीन कमरे और एक दालान बनाने मे ही सारे पैसे खच हो जायेंगे, तो ऐसे मे मदाकिनी चुप भी कसे रह सकती थी ?

भले ही यह किराये का मकान था, पर था तो अच्छा। ऊपर-नीचे कुल मिलाकर छ कमरे थे। फिर भी जब बडी लडकी कमला महीन दो-महीने के लिये आकर ठहरती थी तो दिक्कत हो जाती थी। लगता था इस मकान को छोडकर किसी और बडे मकान मे जाना ही ठीक रहेगा। ऐसी हालत म शशिबाबू के बनाये तीन कमरो के मकान मे कैसे गुजारा चल सकता था ?

घर क मालिक का तो अवकाश लेने के बाद से घर पर शतरज के अड्डे से ही फुरसत नही मिलती थी। आधी-आधी रात तक उनके कमरे मे बाहर के लोग जमे रहते। उधर रेखा के सगीत शिक्षक सप्ताह मे तीन दिन आते थे। पढाने के शिक्षक हर रोज। इनके लिये भी एक कमरे की जरूरत थी। सीतू दिन भर मटरगश्ती करता फिरता था। जो कुछ पढता था, रात को ही। उसके कमरे मे रात को डेढ दो बजे तक बत्ती जलती थी। उसे भी एक कमरा चाहिए। फिर विवाहित पुत्र के लिये कमरा चाहिये ही। मदाकिनी तीज-त्योहार, पूजा पाठ करती थी, उसके लिये भी थोडी जगह की जरूरत थी। और फिर लम्बे समय से जमायी गयी घर-गृहस्थी के सामान का भण्डार भी विशाल हो चुका था। तीन कमरे वाले मकान मे जाकर मदाकिनी आखिर क्या-क्या कर सकती थी ?

मदाकिनी मन ही मन बडबडाई, 'थले के अन्दर हाथी तो भरा नही

जा सकता न ?'

शशि बाबू ने भी गुस्से मे जवाब दिया, 'कौन कह रहा है हाथी भरन के लिये ? महल बनाने की सामर्थ्य जब मुझमे नही है तो फिर बात बढान से फायदा क्या ?'

वैसे मदाकिनी भी स्वाभिमानी है। महल बनवाने की जिद उसने कब की थी ? लेकिन घर के सभी सदस्यो को ठीक-ठाक से रहने के लिए जगह तो चाहिए। हा, जिद नही, पर एक इच्छा उसकी थी जरूर। वक्त-बेवक्त कल्पना मे उसने एक महल बनाया था जिसके पूरब और दक्षिण की तरफ खुला खुला सा रहेगा, लम्बे चौडे दालान, आगन और सब के नाम से दो दो अलग-अलग कमरे। कनकनाते ठडे सफेद सगमरमर का बना पूजा वाला कमरा होगा। मकान का फश टाइलो का होगा। बडे बडे खिडकी दरवाजे होगे, घर के आगे छोटा सा बगीचा। उस घर मे कहा क्या रखन से घर की शोभा बढेगी—मदाकिनी समझ-बूझकर इस बात का ध्यान मे रख कर नया सामान खरीदेगी।

पर वह मकान मदाकिनी की कल्पना की दुनिया मे बद पडा था। मदाकिनी कोई पागल तो थी नही कि जो सभव ही नही, जिस बात की हसी उडायी जाए ऐसी बातें दूसरो को जाकर कहे। लाटरी म पसे मिले बगर टाइलो वाले फश पर चल फिरन का सौभाग्य मदाकिनी को नही मिल सकता था, इसलिए काम काज क बीच मे कल्पना की लगाम ढीली छोड कभी-कभी मदाकिनी असभव का सपना देखा करती। कल्पना की इस दुनिया मे दूसरे किसी को प्रवशाधिकार नही था। यह मदाकिनी का निजी धन था। इसीलिए तो पति के मुह से 'महल' का ताना सनते ही मदाकिनी को धक्का सा पहुचता। फिर मदाकिनी बोल ही पडती 'हा, हा, तमाम जिदगी शहजादियो की तरह भोग ही करती आयी हू न। अब और मागूगी इसम ताज्जुब की क्या बात है ? पर इतना कहे देती हू—उस जगलनुमा उज्जड जगह म तीन कमरा का एक मकान बनाकर इतने सामान समत इतने लोगो को अगर अटा सको तो मैं तुम्हे समझूगी। मैं चुप ही रहूगी।

मदाकिनी की राय मे सारे कलकत्ते शहर मे इधर भवानीपुर और

दूसरी तरफ श्याम बाजार के इलाको को छोड कर बाकी का इलाका बिलकुल बीहड गाव था। उज्जड गाव का नाम सुनते ही शशि बाबू झल्ला उठे। बोले, 'बस। बस। बात का बतगड बनाने से कुछ भी होने-जाने का नही। मकान नही बनेगा। बस। और कुछ ?'

हालांकि गुस्सा अधिक देर तक टिका नही। मकान भी नही बना। पर रुपए खुदरा खर्च के पख लगाकर उडने लगे।

कही कुछ पैसा का भरोसा रहता है तो जरूरी सामान की लिस्ट भी बढती जाती है। जिन जरूरतो को पहले कभी पूरा नही किया जाता था, जिन्हे करने पर ठीक रहता, पर न करने पर भी कुछ बनता बिगडता नही, ऐसे काम भी अब अपरिहार्य बन गए थे।

शशि बाबू सभालने की कोशिश तो करते पर रेत के बाध के समान सब कुछ ढह जाता। मदाकिनी और सभी लडके-लडकी एक तरफ। दूसरी तरफ शशि बाबू अकेले थे। घर के मालिक और मालकिन दोनो का दृष्टिकोण अलग-अलग था। मालिक की इच्छा थी कि जितनी चादर थी उसी मे उनका परिवार अच्छी तरह गुजर बसर कर ले, पर मालकिन चाहती थी, दस जनो के बीच एक बनकर मान सम्मान के साथ जीना। दोनो के जीने के मानदड अगर अलग-अलग हो तो सघर्ष भी अनिवार्य था। सघर्ष तो हमेशा से ही होता आया था और उम्र के साथ-साथ बढा भी था। सघर्ष का चेहरा बहुत बडा तो नही था, पर छोटे मोटे विरोधो मे पल पल कर वह बडे रूप मे सामने आ जाता।

सुबह की डाक से आयी एक चिटठी को लेकर आज भी दोनो के बीच खटपट हो गई। वह चिटठी निमत्रण पत्र था पर विवाह का नही, श्राद्ध का। बडी लडकी कमला के ससुर काफी दिनो से बीमार चल रहे थे, अब जाकर उन्हे परलोक प्राप्त हुआ था। उसी अवसर पर सामान वगरह भेजने की बात को लेकर पति पत्नी मे खटपट लग गई।

मदाकिनी बोली, 'जवाई के पिता का देहान्त हो गया है। हम लोगो की तरफ से जवाई, नाति नातियो और समधिन के लिये कपडे, फल, मिठाई, मक्खन, अनाज आदि तो भेजना ही पडेगा। इसके अलावा श्राद्ध

के दिन नकद रुपए, पचास या सौ, जो भी अपने से बन पड़ेगा देना होगा।'

शशि बाबू खाना खाने बैठे थे। (पत्नी के लिये बात करने का इससे अच्छा मौका और नही होता।) रोटी तोडते हुए शशि बाबू आखें दिखा कर बोले 'क्या कहा? यह सब मुझे देना पडेगा? मैं पूछता हू श्राद्ध समधी का है या मेरा? इतना सब कुछ मुझसे नही होगा। जितना कर सकता हू उतना ही करूगा।'

मदाकिनी भारी आवाज मे बोली, 'मैंने कोई राजसी यज्ञ की सूची तो दी नही है। समझ-बूझ कर ही कुछ कहा है। इतना भी अगर नही कर सको तो समाज मे रहने की जरूरत क्या है?'

जो समाज म रहत है क्या सभी इम तरह का व्यवहार निभाते हैं?' शशि बाबू न कहा।

'निभाते नही तो क्या?' मदाकिनी मिजाज दिखाकर बोली—'जो नही कर सकते, वो दूसरा के आग छोटे बनते हैं। हम लोगो की तरफ से इतना भी अगर न हो, अपनी कमली को अपने ससुराल मे कितना नीचा देखना पडेगा, यह बात तुमने कभी सोची भी है?'

'मैं जो इधर डूबता जा रहा हू, तुमने यह बात सोची है? नियमित आय कुछ नही—'

मदाकिनी नासमझ बन कर बोली, 'नियमित आय रुक गई है, इसलिये समाज और ससार बदल तो नही जायेंगे? इतने मे ही हैरान हो रहे हो, पर मैं कहती हू तुम्हारे मा-बाप भी तो एक दिन मरे थे, मेरे पिता जी ने क्या व्यवहार नही निभाया था? पर ये बातें तो तुम भूल ही चुके होग। सिफ मेरे ही नही, पूरे घर भर के लिए कपडा और सामान आया था। ननद, जेठ सब क लिये—।'

खर, यह बात सच मे ही शशि भूषण बाबू को याद नही थी। और याद रहने लायक बात भी नही थी। मर्दो की याददाश्त इतनी तज नही होती लेकिन पत्नी की बात को वे काटें इसका भी उपाय नही था।

फिर भी उन्होंने तक दिया, 'जरूर दिया होगा। पर उस युग की बात तो सोचो। उन दिनो तीन रुपए की साडी भेजने पर भी लोग वा वाह

जुटे, दूसरा के आगे अपना मान बचाना ही पडता है, मेरी तो यही राय है। कहावत है न अपना मान-सम्मान अपने ही हाथो मे होता है। कान अगर कटा हो, तो उसे बालो से ढकना पडता है। अपना बुरा हाल दूसरा के आगे जाहिर करने म कोई गौरव नही है।'

शशि बाबू गभीर भाव से बोले—'अपनी ताकत से बाहर जाकर दिखावा करना भी बडा अपराध है।'

मदाकिनी और भी गभीर भाव से बोली—'तुम्हारे जैसे महापुरुषो के लिए घर गहस्थी बसाना और भी बडा अपराध है।

शशि बाबू बोले, 'तुम चाहे कुछ भी कह लो, समधी के श्राद्ध मे तीन सौ रुपए मैं नही खच कर सकता ।

उनकी बात खतम भी न हो पायी थी कि मदाकिनी डपट कर बोली, 'ठीक है तुम्ह करने की जरूरत नही, मैं अपना एक जेवर बेच कर यह रीत निभाऊगी। दूसरो के आगे कमली को मैं छोटा नही होने दूगी।'

अततोगत्वा शशि बाबू के तीन सौ रुपए निकल ही गए। पिछले दो-चार महीना म उनकी कुल पचीस हजार की पूजी घटते घटते तेईस हजार तक आ पहुची थी, पर वे इस दुख की बात को किससे जाकर कहते ? दोस्तो को कहने से उनकी उलटे हसी ही होती। दोस्त उन्हे बेवकूफ बताते। पत्नी के कानो मे तो जू तक नहा रेंगने वाली थी और बच्चो का तो कहना ही क्या। उधर एक एक दो-दो सौ करके बक से पैसा निकालना पड रहा था। इसी तरह से खच चलने पर गगरी खाली होने मे क्या देर लगने वाली थी ? अब शशि बाबू को जब भी बक से रुपया निकालना पडता उनके दिल के अन्दर एक मरोड-सा उठता। इस जीवन मे तो अब उनके लिए पैसे जोडने का कोई सवाल ही नही था। वे सिफ खच के हक-दार रह गये थे। मदाकिनी अपने पति की शारीरिक सुख-सुविधाओ के प्रति जितनी सजग रहती थी, काश उसका चौथाई हिस्सा भी उनके मन के हालत पर ध्यान देती।

शशि बाबू अपनी आखिरी कोशिश कर बोले, 'कपडे लत्ता की बात छोडो। इस बार फिर मिठाई वगैरह भेज दो। आखिर लोग कितनी बद-नामी करेंगे ? हार मानकर चुप हो जाएगे।'

मदाकिनी दृढता के साथ बोली, 'रहने दो ये बातें। मैंने तो कहा ही है कि मैं अपना एक जेवर बेच दूगी।'

शशि बाबू धैर्य खो बैठे। तीखे स्वर मे बोले, 'जेवर बेचकर रीति-रिवाज चलाना होगा क्या ? इतना ही कडा कानून है ? किसने बनाया यह कानून ?'

मदाकिनी डरी नही, गभीर भाव से बोली, 'शायद मैंने ही बनाया होगा।'

'आजकल इतना सब कुछ कोई करता-वरता नही।' शशि बाबू न सहमते हुए उदाहरण पेश किया। 'हाल ही मे महल्ले मे यतीश बाबू का देहान्त हो गया था। कही से तो कुछ आया वाया नही। यतीश बाबू का बडा लडका मेरे ही हाथो मे रुपयो की गड्डी पकडा कर बाला 'चाचाजी, मुझे तो कुछ मालूम नही। जो करना है आप कीजिये। फिर मैं खुद बाजार मे जाकर उन तीनो भाईयो और बहुओ के लिये कपडे, फल, मिठाई आदि खरीद लाया था। पर इतने स्पष्ट दृष्टात से भी मदाकिनी सहमी नही। अवहेलना का भाव चेहरे पर लाकर बोली, 'महल्ले मे किसने क्या किया, इसे देखने की मुझे जरूरत नही। मा-दादी के समय से जो देखती आयी हू, वही करूगी बस।

शशि बाबू भी पलट कर बोले, 'तो यह बात है ? कभी तो युग की बातें करती हो, कभी मा-दादी का हवाला देती हो। दो नावा पर पैर रख कर नही चल सकती श्रीमती जी !'

मदाकिनी के चेहरे पर सूक्ष्म व्यग्य की मुस्कराहट खिल गई। बोली, "दो नावो मे पैर रखकर सारी दुनिया चल रही है। मैं ही अकेली कौन-सा तीर मार रही हू। ला अब उठो, काफी दर हो गई है। बहू को जाकर खाना देना है।'

खैर उठना ही पडा, पर मन ही मन असतोप, विद्रोह और गुस्से से शशि बाबू बेचन थे। वे एक बहाना ढूढने लगे। 'यहा साबुन कौन छोड गया है ? पानी के हौज के किनारे यह साबुन किसका है ?' अचानक शशि बाबू चिल्लाने लगे। बोले, 'नहाने वाला कीमती साबुन पानी मे भीग कर आधा गल गया है। मैं पूछता हू, पैसा किसका इतना सस्ता हो गया है ?'

जुट, दूसरों के सामने अपना मान बचाना ही पड़ता है। सही तो यही राय है। महाशय हैं न अपना मान-सम्मान अपने ही हाथों में होता है। पर अगर घटा हो तो उस बात को ढकना पड़ता है। अपना बुरा हाल दूसरों के आगे जाहिर करने में कोई गौरव नहीं है।

शशि बाबू गंभीर भाव से बोले—अपनी ताकत से बाहर जाकर दिखावा करना भी बड़ा अपराध है।

मन्दाकिनी और भी गंभीर भाव से बोली—तुम्हारे जैसे महापुरुषों के लिए घर गृहस्थी चलाना और भी बड़ा अपराध है।'

शशि बाबू बोले तुम चाहे कुछ भी कहो, समधी के श्राद्ध में तीन सौ रुपए मैं नहीं नष्ट कर सकता।

उनकी बात खत्म भी न हो पायी थी कि मन्दाकिनी डांट कर बोली ठीक है तुम्हें करने की जरूरत नहीं, मैं अपना एक जेवर बेच कर यह रीत निभाऊंगी। दूसरों के आगे समधी को मैं छोटा नहीं होने दूंगी।'

अन्ततोगत्वा शशि बाबू के तीन सौ रुपए खर्च हो ही गए। पिछले चार-चार महीनों में उनकी कुल पचीस हजार की पूंजी घटते घटते दस हजार तक आ पहुंची थी पर वे इस दुःख की बात को किसको जाकर कहें? दोस्तों को कहा तो उनकी उल्टे हंसी ही होगी। दोस्त उन्हें बेवकूफ बताते। पत्नी के कानों में तो जूं तक नहीं रेंगने वाली थी और बच्चों का तो कहना ही क्या। उधर एक-एक दाने को करके बैंक से पैसा निकालना पड़ रहा था। इसी तरह से खर्च चलने पर गगरी खाली होने में क्या देर लगने वाली थी? अब शशि बाबू को जब भी बैंक से रुपया निकालना पड़ता उनके दिल के अन्दर एक मरोड़-सा उठता। इस जीवन में तो अब उनके लिए पैसे जोड़ने का कोई सवाल ही नहीं था। वे सिर्फ खर्च के हकदार रह गये थे। मंदाकिनी अपने पति की शारीरिक सुख-सुविधाओं के प्रति जितनी सजग रहती थी, काश उसका चौथाई हिस्सा भी उनके मन के हालत पर ध्यान देती।

शशि बाबू अपनी आखिरी कोशिश करते बोले 'कपड़े लत्ते की बात छोड़ो। इस बार फल मिठाई वगैरह भेज दो। आखिर लोग कितनी बदनामी करेंगे? हार मानकर चुप हो जाएंगे।

यह घटना कोई नयी नहीं थी। साबुन अक्सर होज के किनारे पड़ा रहता था। सुमित्रा इस मामले पर बिल्कुल ध्यान नहीं देती थी, हालांकि रमा और मीनू भी बिल्कुल निर्दोष नहीं थी। पर इतना पहले क्या दानि बाबू ने ध्यान नहीं दिया था? देखा तो था, पर आज उन्हें अन्दर का गुस्सा निकालने के लिए एक बहाने की जरूरत थी।

पहले तो मन्दाकिनी ने उनकी बात अनसुनी कर दी, और रसोई सम्भालने में व्यस्त रही पर फिर ध्यान न देना नामुमकिन हो गया। रसोई से निकल कर बाहर आयी। दानि बाबू दफ्तर से बाहर निकल कर सब को सुना रहे थे 'मैं पूछता हूँ यह घर है या और कुछ। किसी को किसी चीज की कुछ परवाह नहीं। बात अनसुनी कर दी जाती है। साबुन यहां कौन फेंक गया है?'

मन्दाकिनी आगे बढ़कर बोली 'इतनी सी बात पर क्या इतना गरज रहे हो? यह शायद भूल कर छोड़ गयी होगी। इतनी सी तो बात है?'

अब की बार मन्दाकिनी का विष भरा एक मौका दानि बाबू को मिल ही गया। तीखे व्यंग्य से बोले 'तुम लोगों के लिए तो मामूली बात है ही। पैसे नहीं से आए जिन्हें इस बात को जानने की जरूरत नहीं पड़ती, उनके आगे सारी चीजें ही इतनी सी मामूली सी बात ही होती है। आटे दाल का भाव मालूम करना पड़ता तो ...। फिर वे न अपनी बात पूरी करें इससे न समझ पा कर दानि बाबू चुप हो गए।

मन्दाकिनी कठोर आवाज में बोली 'गप शप करने के लिए लोगों का जुगाड़ कर पाओ तो जाओ जाकर सो जाओ।'

इस आवाज के आगे दानि बाबू की बोलती बंद हो गई। वे चुपचाप अपने कमरे में चले गए। मन्दाकिनी भी चुपचाप खाना खाने के लिए रसोई में जाकर बैठी। बहू के झुके हुए कठोर चेहरे को देख कर वह ठगी पड़ गयी थी।

घर के मालिक सठिया गए हैं, ऐसा कुछ कह कर मामले को हल्का कर दे, इसकी हिम्मत मदाकिनी नहीं जुटा पायी। सुमित्रा बातें कम करती थी, पर जो कुछ कहती थी, वह अर्थ रखता था, ऐसी बहू से सास डरती नहीं तो क्या करती?

उपाय सिर्फ एक ही बचा। वह यह कि वह मालिक पर ही गुस्सा उतारे। अब वह पुराना जमाना तो रहा नहीं। मंदाकिनी को याद आया कि वह जब बहू बनकर आयी ही थी कि ससुराल में उसके हाथ से शीशे का एक गिलास टूट गया था। इस छोटे से अपराध के कारण उस घर की पालतू बिल्ली तक ने उस पर ताना कसा था। सभी ने एक ही राय जाहिर की जिस घर मे ऐसी शांत शिष्ट बहू रहेगी, उस घर की लक्ष्मी का भाग खड़ा होने में क्या देर लगेगी।

गुस्सा कर सके इतनी हिम्मत मंदाकिनी उस दिन भी नहीं जुटा पायी थी। ज्वाब मे कुछ बोल सके उसकी कल्पना भी वह नहीं कर सकती थी। सब की नजर बचाकर उसने आंसू बहाया था, और अपने लिए भगवान के आगे कातर स्वर मे विनती की थी, 'हे भगवान इसी रात मुझे मृत्यु देकर मुझे रिहाई दे।' तब उसकी कितनी उम्र रही ही होगी ? बहुत ज्यादा भी तो तेरह या चौदह साल की रही होगी। और उसका अपराध क्या था ? असावधानी से शीशे का ग्लास टूट गया था।

और इस जमाने मे ?

इस जमाने की बहुएं ऐसे अपराध के लिए डांट सुनने की बात सोच भी नहीं सकती थी। उल्टे घर के बड़े ही डर से सहमे रहते है। शशि भूषण क्या ये बातें भूल गए थे ?

सुमित्रा चुपचाप जिस तरह खाना खा रही थी, खा कर चुपचाप उसी तरह उठ कर चली गयी। मंदाकिनी ने आड़े नजर उसकी तरफ एक नजर देख लिया।

नहीं, उसके चेहरे पर क्षमा याचना का आभास तक नहीं था। लड़की के ससुराल मे ससुर के श्राद्ध के अवसर पर सामान आदि भेजने की बात मंदाकिनी भूल गयी। उसके दिमाग म अब एक ही बात घूमती रही— मालिक को थोड़ी डांट पिलानी पड़ेगी तभी उनके होश ठिकाने आएंगे। मंदाकिनी यही समझती रही कि शशि भूषण बाबू को धमका देने पर ही शायद घर की समस्याएं सुलझ जाएंगी।

तुरत हुई विधवा हिन्दू नारी की और तुरत अवकाश प्राप्त पुरुष की मनोदशा करीब करीब एक सी होती है। चलते हुए जीवन की धारा अचा-

जैसे ही रेगिस्तानों की रेतीली भूमि में आकर थम जाती है, जीवन के सभी समारोह, सभी आशाएं मानो एकाएक समाप्त हो जाती हैं। नारी के जीवन के लिए एक मटमैला सूनापन रह जाता है।

यह बात कोई स्पष्ट नहीं करता, न ही किसी की जुबान पर होता है पर लगता है कि जैसे हारकर भी मानो सभी घोषित कर रहे हैं कि तुम्हारा बाजार भाव गिर चुका है। तुम्हारी अब तक जरूरत रही हो पर अब तुम फालतू हो। दूसरों की नजर में गृहिणी की कीमत घट जाती है और बिना कारण ही दूसरों के प्रति स्वाभिमान से मन भारी हो उठता है। मन में असंतोष बढ़ता है और फिर उस मूल्यहीनता की धारा में अपने को मूल्यवान साबित करने के लिए चेतन-अचेतन के बीच कशमकश-सी चलती रहती है। इसका सबसे पहला लक्षण होता है किसी महापुरुष का अता-पता जुगाड़ कर उससे मंत्र लेना। इससे वे अपने मन को सांत्वना पहुंचाना चाहते हैं। मानो वे कह रहे हों 'संसार के सारे सुख दुःखों से हम ऊपर उठ आए हैं जहां तुम्हारे हाथ पहुंच भी नहीं सकते।' पर घोर संसारी व्यक्ति से यह भी नहीं होता। इसलिए अधिकतर युवती विधवाएं अपने भतीजे भतीजी या जेठ के लड़के या लड़की को प्यार से अपने करीब खींच लेती हैं और उसी की सेवा में जुटी रहती हैं। और जो अधेड़ उम्र की विधवाएं होती हैं, वे थोड़े से काम को अधिक मानकर दिन भर खटपट कर कोयले के चूरे से गोलियां बनाकर और जले हुए कोयले में से दुबारा जलने लायक कोयले के टुकड़ों को चुनकर घर गृहस्थी के खर्च में बचाव करती हैं।

दूसरी तरफ अवकाश प्राप्त पुरुष घर गृहस्थी की हर छोटी बात पर टांग अड़ाते हैं और बेवजह ही सभी का तिरस्कार करते रहते हैं। इस तरह से वे शायद अपने पुराने आसन में टिके रहना चाहते हैं। और रोज मर्रे की जरूरतों, सब्जी भाजी लाने या बाजार के खुदरा कामों को कर देने जैसे कार्यों को पकड़कर अपने को आवश्यक बनाने की साधना में जुटे रहते हैं। इससे घर की सुविधा बढ़ती या घटती है, इसकी वे परवाह नहीं करते। भुक्तभोगी गृहिणी को ही मालूम है कि इन सब बातों का असर क्या होता है। रसोई का काम खत्म नहीं होता। सुबह स्कूल और दफ्तर

यह भी नहीं सुना होगा कि घर की बहू दफ्तर में नौकरी करने जा रही है।

सुनकर मन्दाकिनी का दिल कांप उठा। घबराकर बोली, 'क्या ऊल जुलूल बक रहे हो।

ऊल जुलूल ? नहीं मालकिन जी, नहीं। जो ठीक है, वही कह रहा हूं। तुम्हारी बहू ने नौकरी के लिए दफ्तर में दरख्वास्त दिया है। अब इंटरव्यू के लिए बुलायी गयी है। उसी की चिट्ठी है यह।'

फिर शशिबाबू ने मुट्ठी में बन्द चिट्ठी का हाथ उठाकर मन्दाकिनी को दिखाया।

'उन लोगों ने तुम्हें लिखा है ?' मन्दाकिनी ने हैरान होकर पूछा।

'मुझे क्या लिखने लगे ? जिसकी जरूरत है, उसे ही लिखा है। बहू के नाम किसी दफ्तर की चिट्ठी देखकर यानि कि मैं चिट्ठी को खोल ही बैठा।'

मदाकिनी धीमी आवाज में बोली—'क्या चिट्ठी खोली यहां तो ? फिर दूसरों की चिट्ठी पढ़ना बहू पसंद नहीं करती। पोस्टकार्ड होतो और बात है।

गृहिणी की अधूरी बात के बीच तीखे स्वर में शशिबाबू व्यंग से बोले 'अच्छा यह बात है। बहुत बड़ी गलती हो गई है मुझसे। अब मुझे क्या करना होगा ? हाथ जोड़कर माफी मांगनी पड़ेगी ?'

मन्दाकिनी अवाक रह गई। आखिर वो इतना विचलित उसने बहुत बार नहीं देखा था। बहू के लिए व्यंग के छींटे कसना शशि बाबू के लिए स्वाभाविक नहीं था। पर बुद्धिमति मन्दाकिनी ने आग लगने के कारण का पता करने से पहले आग बुझा डालना ही उचित समझा, इसलिए धीमी आवाज से झटपट बोली 'तुम्हें आखिर हो क्या गया है ? किस बात पर क्या कह रहे हो। बस भी करो। कैसी चिट्ठी है, क्या मामला है, सारी बातें बहू से जाकर पूछ कर आती हूं।

पर आग तो इतनी जल्दी बुझती नहीं। शशि बाबू रोबीली आवाज में बोले, 'पूछताछ करने जैसी कौन सी बात है ? चिट्ठी पढ़कर मैं क्या समझ नहीं सकता कि कैसी चिट्ठी है ? बहू ने नौकरी के लिए दरखास्त



दिया था और अब आफिस वालो ने उसे बुला भेजा है। बात यह है। पर जो बात समझ मे नही आती, वह यह है कि घर पर कौन सी मुसीबत आ पडी कि बहू को नौकरी करने की जरूरत आ पडी।'

मदाकिनी एकाएक गुमसुम हो गयी। उसके बाद भिन्न स्वर म बोली, 'मैं समझ गयी कि उसे क्यो नौकरी की जरूरत आ पडी है। मैं तुम्ह बार बार सावधान करती रही, पर फिर भी तुम मानते नही। जो मुह म आए बक देते हो, नतीजे की सोचते तक नही। आजकल के लडके-लडकिया अपने मान-अपमान के बारे म बडे सतक रहते है। थाडी सी बात पर उनके मन को ठेस पहुच जाती है। कडी बात की हवा तक बदाश्त नही कर पाते। पर तुम तो इस बात को समझोगे नही। जो भी जी मे आए कहोगे ही।'

'ओ, तो यह बात है। मैंने क्या गलत कहा है, जिससे तुम्हारे बेटे बहू के मान को ठेस लगी है।

'ऊफ! थोडा धीरे भी तो बोल सकते हो। उस दिन नहाने घर के हौज के किनारे बहू साबुन छोड आयी थी, और तुमने अनाप शनाप कह दिया, उसी समय बहू का चेहरा देखकर मेरे कलेजे की तो धडकन ही बन्द हो गयी। यह शायद तुम्हारे ही ताने कसने का नतीजा है।'

'ताना? मैंने ताना कसा?' धीरे से बात करने के मदाकिनी के निर्देश को भूल कर शशिबाबू गरज उठे, 'ऐसा भी मैंने क्या कह दिया, जरा सुनू तो सही।'

'कहा तो था बहुत कुछ। परेश के रोजगार के रुपए साबुन सेंट म ही खत्म हो जाते ह। आटे दाल का भाव मालूम पडेगा आदि आदि कहा नही था क्या?'

'ओ! तो यह बात है? उस बात से ही तुम्हारी बहू का इतना अपमान हुआ कि ससुर के घर का अब और खाएगी नही? वाह! बहुत अच्छा। कोई ताला-चाबी है मालकिन? तो एक ताला ही दे दो मुझे, जिससे बाकी जीवन अपना मुह बन्द कर लू।'

मदाकिनी निस्तेज भाव से बोली, 'गुस्सा करने पर मैं क्या कर सकती हू कहो? जिस युग का जो धम है ..।'

'अच्छा ? युग क्या इतना प्रबल है कि घर का मालिक घर की फिजूलखर्ची या किसी गलती पर रोक-टोक नहीं कर सकता ? कुछ कह नहीं सकता ?'

'नहीं। नहीं कह सकते।' मन्दाकिनी शान्त स्वर में बोली, 'इस युग का यही कानून है। जब मैं छोटी थी तो जानती थी कि बड़े जो कहते हैं, ठीक कहते हैं। उनकी इच्छा हो तो हम मार सकते हैं, डांट सकते हैं। प्रतिवाद करना बेअदबी समझती थी और न्याय अन्याय की बात ? उस बारे में तो जुबान ही नहीं खुल पाती थी। हाथ जोड़कर बड़ों के हुक्म की तामील करनी पड़ती थी। उनके गुस्से से डर कर सहम कर रहना पड़ता था। पर बूढ़े होने के बाद हमेशा की यह धारणा ही बदल गयी। आज के जमाने में बड़ों को ही अपने छोटों से डर कर चलना पड़ता है, नहीं तो घर नहीं चल सकता। तुम लोग सैंडविच वगैरह खाते हो न ? हम लोगों की हालत कुछ वैसी ही है। बीते हुए कल और आज के बीच हम पिस कर रह गए हैं।'

शशिबाबू गृहिणी का यह लम्बा भाषण कान लगाकर सिर्फ इसलिए सुन रहे थे क्योंकि कभी-कभी चुप्पी साध लेना उनकी आदत थी पर गृहिणी की बात खत्म होते ही वे गरज उठे, 'चुप रहो। मैं अभी तुम्हारी तरह दार्शनिक नहीं बना। मानकर चलना होगा। हूं। नहीं मानेगा तो क्या मुझे फांसी पर चढ़ा देंगे या कालापानी भेजेंगे। फालतू की बातें मत किया करो। शशि मुखर्जी जब तक जिंदा है, इस घर के सभी लोग उसके मतानुसार चलने के लिए बाध्य हैं। यह मेरी आखिरी बात है। शशि मुखर्जी के जिंदा रहते हुए इस घर की बहू दफ्तर में नौकरी के लिए दरखास्त भेजेगी ? इतनी हिम्मत ? मैं इसे नहीं सहूंगा मालकिन ! मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता—तुम बहू से कह देना।'

म्लान हंसी हंसकर मंदाकिनी बोली, 'मुझे कुछ कहने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। तुम्हारी आवाज सड़क के चौराहे तक पहुंच रही है।'

मंदाकिनी अपनी काम में जुट गयी। मन ही मन बोली, 'नौकर मधु को आज बाजार भेजना ही पड़ेगा। शशि बाबू के सर पर खून सवार है। आज उनका बाजार जाना मुश्किल ही लगता है।'

पति को समझाने के लिए मदाकिनी ने भले ही दार्शनिक की भूमिका निभाई हो, पर सही मे बहू के दुस्साहस पर वह स्वय भी स्तभित रह गयी थी।

क्या ही भयकर जमाना आ गया था।

यह तो डसने के लिए तैयार साप के साथ रहन के समान था।

उस दिन के साबुन प्रसग पर बहू का मुखडा देखते ही मदाकिनी का कलेजा कठ मे आ गया था, यह तो सच था, पर फिर उसके मन मे इतनी बडी आशका नही उठी थी। सोची थी, स्वाभिमान वश शायद बहू खच कम कर देगी। फिर वैसा कुछ न देखकर उसके दिमाग मे वह प्रसग ही निकल गया था। अन्दर ही अन्दर बहू ससुर के मुह पर इतनी बडी चपत लगाने की तैयारी कर रही थी, यह मदाकिनी ने सपने म भी नही सोचा था।

दो-तीन डिग्रिया हासिल की हुई लडकी, आत्म-सम्मान का बोध और हिम्मत तो रख ही सकती है। मदाकिनी की तरह पडे पडे मार खाने की शिक्षा इन लोगो को किसी ने नही दी। यह सोच कर मदाकिनी को अपने वधू जीवन की कई तस्वीरें याद हो आयी। उस असहाय बालिका वधू के प्रति करुणा से मदाकिनी की आखें छलछला उठी। फुफेरी सास के जिम्मे रसोई का भार था। प्यार से वह मदाकिनी की थाली पर आधा सेर चावल खाने के लिए रख देती थी, पर उस पवत के समान भात को न खा सकने पर फुफेरी सास जमीन-आसमान एक कर देती थी। थाली म जूठा खाना छोडना सास का अपमान करना होता था। भले ही बुखार आया हो, मदाकिनी को उस बुखार मे ही काम काज करना पडता था। वह इतना भी कहने की हिम्मत नही जुटा पाती कि उसकी तबियत खराब है। फुफेरी सास की डाट-फटकार के आगे बुखार ही भाग खडा होता था।

खैर, छोडो उन बातो को। जिस युग का जा धम है।

अभी तो पति को मदाकिनी यही बात समझा कर आयी थी फिर बहू से क्या कह सकती थी। इतने बडे मामले मे उसके अपने बेटे की कोई भूमिका न हो, यह तो नामुमकिन था। बहू को कुछ कहे ता हो, लडके से उपदेश सुनना पडे।

हालांकि परेश उनका कोई बुरा लड़का नहीं था। सभ्य, विनयी भद्र।

पर उसका यह विनयी भद्र रूप इसीलिए बरकरार था, क्योंकि मन्दा-किनी स्वयं बुद्धिमती मां थी।

शशि बाबू की आवाज अन्दर तक पहुंच गयी थी, यह कहने की जरूरत नहीं। सीतेश और रेखा कालेज जाने की तैयारी कर रहे थे। वे पिताजी के गरजने से घबरा उठे। भाभी के इस दुस्साहसिक अभियान से वे दोनों नाराज नहीं थे। सीतेश तो भाभी का पक्षधर था ही, क्योंकि लड़कियों का स्वावलम्बन उसे पसंद था। और उसकी राय में भाभी के नौकरी पर जाने से घर का अपमान नहीं, बल्कि घर का गौरव बढ़ता था। इसलिए वह इस काम में भाभी का सहायक भी रहा था। हालांकि पिताजी के मुंह पर तमाचा लगने के मामले में रेखा विशेष उत्साहित नहीं थी, फिर भी इस बात को लेकर उसने कोई हंगामा इसलिए नहीं किया, क्योंकि वह सोच रही थी, देखें अब क्या होता है? भाभी अगर रास्ता खोल ही देती है तो भविष्य में उसकी भी गाड़ी उसी पटरी से होकर गुजर सकती थी।

पिताजी के गरजने पर सीतेश ने भाभी की तरफ देखा—चेहरा अपरिवर्तित था। जिस मुद्रा में बैठी पान लगा रही थी, लगाने लगी। थोड़ा सहम कर सीतेश ने कहा, कहावत है कि जहां शेर का डर है, वहां शाम भी जल्दी ढलती है। चिट्ठी को आखिर पिताजी के हाथ में ही पड़ना था।'

सुमित्रा स्थिर आवाज में बोली, 'सुना है चिट्ठी पोस्टकार्ड पर नहीं, लिफाफे में आयी थी।'

उसका इतना कहना ही काफी था।

अपने मन की बात समझाने के लिए इससे अधिक बोलना सुमित्रा समय और बात की फिजूलखर्ची समझती थी।

यह सुनकर शर्म और गुस्से के मारे रेखा अपने पिता पर लाल पीली होने लगी। सच में भाभी के नाम से आयी हुई चिट्ठी को शशि बाबू को खोलने की जरूरत ही क्या थी। उनके इस अन्याय भरे आचरण के आगे सुमित्रा का अपराध मानो छोटा पड़ गया।

भाभी का चेहरा देखकर सीतेश थोड़ा तो डर ही गया, फिर भी

हिम्मत जुटा कर बोला, 'मजा किरकिरा हो गया, है न भाभी ? हम लोगों ने तो आइडिया लगाया था कि अगर इंटरव्यू में बुलाया गया तो घूमने जाने का बहाना कर इंटरव्यू दे आएंगे और जब नौकरी मिल जाएगी तो सब को खबर सुनाकर हैरान कर देंगे। पर बात ही बिगड़ गयी।

सुमित्रा के चेहरे पर एक कठोर मुस्कराहट का आभास दिखाई दिया। पान का मोड़ते हुए हसकर ही बोली, 'सच म लोगों को हैरान कर देने का मौका हम लोग चूक गए।'

सीतेश बोला, 'अब कैसे जाया जाएगा। पिताजी सारा मामला ही चौपट न कर दें।'

इस बात का जवाब दिए बिना सुमित्रा बोली, 'तुम्हारे कालेज जाने में देर नहीं हो रही है ?'

'कालेज ! इधर घर में कुरुक्षेत्र जो मचा है।'

खैर। सीतेश के बाहर निकलने के बाद ही रेखा निकलती थी, क्योंकि उसका कालेज घर के पास ही था। रेखा रसोई में आकर धीरे स्वर में बोली, 'अच्छा मां। भाभी के नाम से आयी हुई चिट्ठी को पिताजी को खोलने की क्या जरूरत थी ?'

मदाकिनी के हृदय पर समस्याओं का तरंग उच्छ्वास मार रहा था। लड़की की बात सुनकर नाराज होकर बोली, क्या जरूरत थी मैं क्या जानू ? गैर कानूनी काम जिन्होंने किया है, उन्हीं से जाकर पूछ।

'मुझे पूछने की जरूरत नहीं है।' रेखा बोलती गयी—'यह है जान-बूझकर अपमानित होना।' गुर्राती हुई रेखा बाहर निकल गयी। रेखा और सीतेश के बाहर जाते ही शनि बाबू की छाती का दर्द दुगुना हो गया। खासकर लड़की से उन्हें थोड़ा डर सा लगता था। कब तो वह मित्र पक्ष की तरफ होती थी और कब दुश्मन के साथ इसे शनि बाबू भांप ही रहा पाते।

चहल-कदमी करते हुए शनि बाबू घर के अन्दर आए। फिर पुकारा, 'बहू ! बहू !'

गीले हाथों को छाटे म तौलिए से पोंछती हुई सुमित्रा कमरे से बाहर आयी। बोली, 'आपने मुझे बुलाया है पिताजी ?'

'हूं! बुलाया है।' फिर बहू को आपादमस्तक एक नजर देखकर शशि बाबू गंभीर आवाज में बोले, 'यह चिट्ठी कैसी है बहू?'

'मुझे तो अभी तक पढ़ने का मौका नहीं मिला है पिताजी?'

धीर ठंडी आवाज थी सुमित्रा की।

पर यह ठंडी आवाज शशि बाबू को अपमान-बोध की ज्वाला से झुलसा गयी।

वे तीव्र स्वर में बोले, 'न पढ़ने पर भी समझ नहीं पा रही हो, यह बात तो नहीं है बहू। मैं तो सिर्फ इतना पूछना चाहता हूं कि तुम्हारे इतने दुस्साहस के पीछे किस व्यक्ति का हाथ है?'

'मुझे किसी ने कोई साहस नहीं दिया है पिताजी!'

शशि बाबू व्यंग्य से बोले, 'अच्छा! तो यह बात है! तुम्हें साहस दिलाए इतना साहस है भी किसे? पर तुम्हें एक बात कहे देता हूं बहू। शशि मुखर्जी के जिंदा रहते हुए उसके मुंह पर और कालिख मत पोतो।'

'आप इसे इस दृष्टि से क्यों देख रहे हैं पिताजी?'

'देखने सुनने की बात मैं नहीं जानता बहू। हमेशा से जिस तौर-तरीके से देखने सुनने का अभ्यस्त हूं उसी तरह से आगे भी देखना चाहता हूं। सीधी सी बात है। नौकरी करने की इजाजत मैं तुम्हें नहीं दे सकता। शशि मुखर्जी के जीवित होते हुए उसी की नाक के सामने से उसके बेटे की बहू नौकरी करने के लिए जाए यह नहीं हो सकता। कदापि नहीं। यह मेरी आखिरी बात है। इंटरव्यू देने के लिए तुम नहीं जाओगी।

इतना कह कर चिट्ठी को अवहेलना के भाव से शशि बाबू ने एक तरफ रख दिया।

फेंकी हुई चिट्ठी को हाथ में उठाकर पहले की ही तरह धीर भाव से सुमित्रा बोली, इंटरव्यू में बुलाने से ही नौकरी मिल जाएगी, ऐसी तो बात नहीं है पिताजी।

'बात क्या है और क्या नहीं, इस उम्र में मैं तुमसे सीखना नहीं चाहता। कुल बात समझाए देता हूं—मेरी राय नहीं है बस।'

सुमित्रा कुछ बोली नहीं। चुपचाप अपने कमरे में चली गयी।

बहू को खूब अच्छी तरह समझाया, इस खुशी से शशि बाबू चिल्ला

उठे 'मधु। ओ म धु ऊ। हरामजादे सुनाई नही देता। बाजार नही जाना है क्या?'

मधु कही दिखाई नही पडा।

मदाकिनी रसोई से बाहर निकल कर भारी मुह से बोली, 'मधु बाजार ही गया है।'

'बाजार गया है? वाह भई। क्यो तुमसे थोडा भी सब्र नही हुआ?'

'दिन काफी निकल आया है, कुछ ख्याल भी है?

"याल? तुम्हारी तरह निश्चित दिमाग होता तो ख्याल भी रहता।'

मन्दाकिनी के चेहरे पर क्षोभ की हसी खिल गई। रसोई मे जाते जाते बोली, 'कुछ कहने को जी नही चाहता। सिर्फ एक बार मर कर सब कुछ देखने का जी चाहता है।'

उस दिन दोपहर मे शशि बाबू को अच्छी नीद नही आयी। करवट बदलते बदलते आखिर बेचैन होकर उठ पडे। एक किताब खोलकर बठे, ठीक उसी समय रेखा कालेज से आती हुई दिखाई पडी।

एकाएक उनके मन मे हुआ—वह बी०ए० पास है। रेखा भी बी० ए० पढ रही है। अगले महीने से उसका कालेज छुडवा देंगे। तीन चार डिग्रिया लेने की कोई जरूरत नही। इससे लडकियो का केवल दुस्साहस ही बढता है। सोचता था—पढ लिख रही है, अच्छी बात है। मन उन्नत होगा, भविष्य मे बच्चो को अच्छी शिक्षा दे सकेगी, मास्टर के पीछे पैसे नही खचने पडेंगे। और फिर जब तक शादी नही होती है, करेगी भी क्या। पर अब देख रहा हू यह मेरी गलत धारणा है। औरतजात को ज्यादा पढाना लिखाना चाहिए ही नही।

ऐसी ही तरह तरह की चिंताए शशि बाबू के दिमाग मे फिरती रही। लडके लडकियो को पढाए आजकल की माओ से ऐसी उम्मीद भी कहा? पहले की मूख माए भी बच्चा को पहला पाठ सिखा सकती थी, फिर स्कूल भेजा करती थी, पर आज की विदुषी माताए तो दो साल के बच्चो को ही नसरी स्कूल मे धकेल देती है। पहले जमाने मे एम० ए०, बी० ए० पास करने मे जो खच पडता था आजकल तो दो-तीन साल के लडके लडकियो को पढने मे उससे अधिक खच बैठ जाता है। तो फिर शिक्षित मा का

होने से लाभ ही क्या ? नही। अगले महीने से वे रेखा की पढाई बद कर देंगे।

दूसरी तरफ कालेज से लौटते ही रखा मुह हाथ धोकर हीटर जला-कर फटाफट चाय बनाकर पिता के पास ले कर हाजिर हुई।

दिन ढलते ही चाय मिलने पर शशि बाबू प्रसन्न हो जाते थे। थोडी प्रसन्नता के साथ बोले, 'आज बडी जल्दी चाय ले आयी ?'

'यो ही। अभी चूल्हा जलाने म देर थी। इसलिए हीटर में बनाकर ले आयी।'

ताखे से बिस्कुट का डब्बा उतार कर प्लेट पर कुछ बिस्कुट रखती हुई धीमी आवाज म रेखा बोली, 'एक बात कहू पिताजी ?'

शशि बाबू चौकन्ने हो गए। 'कुछ कहू' कहने के पीछे जरूर कोई माग होगी और आवेदन शशि बाबू की इच्छा के विरुद्ध ही कुछ होगा। झट से मन को कठोर कर बोले, 'जो कुछ कहना है, कह डालो। अर्जी की क्या बात है ?'

'मैं कह रही थी कि भाभी जो कुछ कर रही है, करने दीजिए। आप मना मत कीजिए।'

'क्या ? किस बात के लिए मना नही करू ? सुनू तो जरा ?'

रेखा पिता की झुलसती आखो को देखकर भी हिम्मत जुटा कर बोल पडी, 'भाभी अगर नौकरी करना चाहे तो करने दीजिएगा।'

'ओ ह ! तो बहू ने तुझे अपना वकील बनाया है ?'

'नही। भाभी ने मुझसे कुछ नही कहा।'

'अच्छा तो फिर भाभी की तरफ से मुझे चैलेंज करने आयी हो ?'

'भाभी की तरफ से कुछ कहने के लिए मैं नही आयी हू, पिताजी !' स्वाभिमान के कारण रेखा की आखें छलछला उठी। रुधी आवाज मे बोली, 'मैं आपके लिए ही कह रही हू। जिस बात मे आपकी मान मर्यादा न हो, खामखाह वहा ।

मान नही रहेगा ?' शशि बाबू गरज उठे, 'मेरे मान को ठेस पहुचेगी क्यो ? कह सकती हो क्यो ? घर के मालिक का पोस्ट एकाएक घर के मुनीम के पोस्ट म कैसे बदल गया ?'

रेखा निरुत्तर खडी रही।

शशि बाबू चौकी से उठ पडे। दबे आक्रोश के साथ कमरे मे चहल-कदमी करने लगे। बोले, 'बस घर गृहस्थी, ससार, सब कुछ अब भी मेरा है। मेरी ही मर्जी से तुम सब का चलना होगा, समझी ? तुम्हे भी चेतावनी दिए देता हू। तुम्हारी भी पढाई लिखाई सब बद। अगले महीने से कालेज से नाम कटवा दूगा, समझी। इसीलिए तो औरतजात का ज्यादा पढाना लिखाना मना है। जिन लोगो ने मना कर रखा था, वे विवेकशील थे। पढ लिखकर लडकिया उद्दत और अविनयी ही तो होगी।'

हालाकि इसके बाद भी शशि बाबू का यह आशा करना गलत था कि रेखा वहा बैठी रहेगी। अब तक का आक्रमण विपरीतमुखी था। पर अब तो तोप उसी की ओर घूम गयी थी और गोली उसी की तरफ बरसने लगी थी। रेखा वहा से भागती नही तो करती क्या ?

'सुनो। रुको।'

घर मे घुसता, इससे पहले ही चौंक कर परेश रुक गया। अधेरे मे बैठक मे पिताजी चुपचाप बैठे होंगे, यह धारणा ही उस नही हो सकती थी। अनमना सा वह घर के अन्दर जा रहा था कि एकाएक बाप की गुरु-गभीर आवाज सुनकर रुक गया।

विस्मय के साथ बोला, 'बत्ती नही जलायी आपने ?'

उस बात का जवाब दिए बिना शशि बाबू पूर्ववत् गभीर स्वर मे बोले, 'तुमसे एक बात करनी है।'

परेश चुप रहा।

शशि बाबू अपने खास अदाज मे चहलकदमी करते हुए बोले, 'सुनो, अपनी पत्नी से कह देना कि इस घर की माली हालत अभी इतनी बिगडी नही कि घर की बहू अगर नौकरी नही करे तो दाल रोटी नही जुटेगी। समझे। इस बात से तुम्हे आगाह कर देने के लिए ही मैं तुम्हारी राह देख रहा था।'

बात खत्म कर शशि बाबू कुर्सी खीच कर उस पर बैठ गए। परेश

होने न पाये ही क्या ? नहीं। अच्छा करो। न वे रेखा की पढ़ाई बन्द कर देंगे।

दूसरी तरफ का रुख न लोगों ही रेखा मुँह हाथ धोकर हटा रसा कर पटापट चाय बनाकर दिन में पास आ कर हाजिर हुई।

दिन ढलते ही चार बजे कर शान्ति बाबू प्रसन्न हो आये थे। दोनों प्रसन्नता न गाय को ? आज बड़ी जल्दी याद आ आयी ?

हाँ जी। अभी पूजा समाप्त न हुई थी। इसलिए मैं उठ कर चली आयी।'

रास्ते में बिस्कुट का डब्बा उठा कर प्लेट पर कुछ बिस्कुट रखती हुई धीमी आवाज में रेखा बोली। 'आप कब लिखी ?'

शान्ति बाबू बोले, 'हाँ हाँ। कुछ बड़े काम से आज कोई बात होगी और आपके शान्ति बाबू की इच्छा के विरुद्ध ही कुछ हाल। उन्होंने मन को कठोर कर बोले, 'तो कुछ कहना है कह डालो। यहीं का क्या बात है ?'

'मैं कह रही थी कि भाभी जो कुछ कर रही है, करने दीजिए। आप मना मत कीजिए।'

'क्या ? किस बात के लिए मना नहीं करूँ ? सुनूँ तो जरा ?'

रेखा पिता की भृकुटी आंखों को देखकर भी हिम्मत जुटा कर बोल पड़ी, 'भाभी अगर नौकरी करना चाहे तो करने दीजिएगा।'

'ओ हूँ ! तो यह तुम्हें अपना वकील बनाया है ?'

'नहीं। भाभी ने मुझसे कुछ नहीं कहा।'

'अच्छा तो फिर भाभी की तरफ से मुझे चैलेंज करने आयी हो ?'

'भाभी की तरफ से कुछ कहने के लिए मैं नहीं आयी हूँ, पिताजी !'

स्वाभिमान के कारण रेखा की आँखें छलछला उठीं। रुंधी आवाज में बोली मैं आपके लिए ही कह रही हूँ। जिस बात में आपका मान मर्यादा न हो, खामखाह वहाँ।

'मान नहीं रहेगा ?' शान्ति बाबू गरज उठे, मेरे मान को ठेस पहुँचाने क्या ? वह सकती हो क्यों ? घर के मालिक का पोस्ट एकाएक घर के मुनीम के पोस्ट में कैसे बदल गया ?'

रेखा निरुत्तर खडी रही।

शशि बाबू चौकी से उठ पडे। दबे आक्रोश के साथ कमरे म चहल-कदमी करने लगे। बोले, 'बस घर-गृहस्थी, ससार, सब कुछ अब भी मेरा है। मेरी ही मर्जी से तुम सब को चलना होगा, समझी ? तुम्हे भी चेतावनी दिए देता हू। तुम्हारी भी पढाई लिखाई सब बद। अगले महीने से कालेज से नाम कटवा दूगा, समझी। इसीलिए तो औरतजात को ज्यादा पढाना लिखाना मना है। जिन लोगो ने मना कर रखा था, वे विवेकशील थे। पढ लिखकर लडकिया उद्धत और अविनयी ही तो होगी।'

हालाकि इसके बाद भी शशि बाबू का यह आशा करना गलत था कि रेखा वहा बैठी रहेगी। अब तक का आक्रमण विपरीतमुखी था। पर अब तो तोप उसी की ओर घूम गयी थी और गोली उसी की तरफ बरसने लगी थी। रेखा वहा से भागती नही तो करती क्या ?

'सुनो। रुको।'

घर मे घुसता, इससे पहले ही चौंक कर परेश रुक गया। अन्धेरे मे बैठक मे पिताजी चुपचाप बैठे होंगे, यह धारणा ही उसे नही हो सकती थी। अनमना सा वह घर के अन्दर जा रहा था कि एकाएक बाप की गुरु-गभीर आवाज सुनकर रुक गया।

विस्मय के साथ बोला, 'बत्ती नही जलायी आपने ?'

उस बात का जवाब दिए बिना शशि बाबू पूर्ववत गभीर स्वर मे बोले, 'तुमसे एक बात करनी है।'

परेश चुप रहा।

शशि बाबू अपने खास अदाज म चहलकदमी करते हुए बोले, 'सुनो, अपनी पत्नी से कह देना कि इस घर की माली हालत अभी इतनी बिगडी नही कि घर की बहू अगर नौकरी नही कर तो दाल रोटी नही जुटगी। समझे। इस बात से तुम्ह आगाह कर देने के लिए ही मैं तुम्हारी राह देख रहा था।'

बात खत्म कर शशि बाबू कुर्सी खीच कर उस पर बैठ गए। परेश

होने से लाभ ही क्या ? नही। अगले महीने से वे रेखा की पढाई बंद कर देंगे।

दूसरी तरफ कालेज से लौटते ही रेखा मुह हाथ धोकर हीटर जला कर फटाफट चाय बनाकर पिता के पास ले कर हाजिर हुई।

दिन ढलते ही चाय मिलने पर शशि बाबू प्रसन्न हो जाते थे। थोडी प्रसन्नता के साथ बोले, 'आज बडी जल्दी चाय ले आयी ?'

'यो ही। अभी चूल्हा जलाने मे देर थी। इसलिए हीटर म बनाकर ले आयी।'

ताखे से बिस्कुट का डब्बा उतार कर प्लेट पर कुछ बिस्कुट रखती हुई धीमी आवाज म रेखा बोली 'एक बात कहू पिताजी ?'

शशि बाबू चौकन्ने हो गए। 'कुछ कहू' कहने के पीछे जरूर कोई माग होगी और आवेदन शशि बाबू की इच्छा के विरुद्ध ही कुछ होगा। झट से मन को कठोर कर बोले, 'जो कुछ कहना है, कह डालो। अर्जी की क्या बात है ?'

'मैं कह रही थी कि भाभी जो कुछ कर रही है, करने दीजिए। आप मना मत कीजिए।'

'क्या ? किस बात के लिए मना नही करू ? सुनू तो जरा ?'

रेखा पिता की झुलसती आखो को देखकर भी हिम्मत जुटा कर बोल पडी, 'भाभी अगर नौकरी करना चाहे तो करने दीजिएगा।'

'ओ ह ! तो बहू ने तुझे अपना वकील बनाया है ?'

'नही। भाभी ने मुझसे कुछ नही कहा।'

'अच्छा तो फिर भाभी की तरफ से मुझे चैलेंज करने आयी हो ?'

'भाभी की तरफ से कुछ कहने के लिए मैं नही आयी हू, पिताजी !' स्वाभिमान के कारण रेखा की आखें छलछला उठी। रुधी आवाज मे बोली, मैं आपके लिए ही कह रही हू। जिस बात मे आपकी मान मर्यादा न हो, खामखाह वहा ।'

मान नही रहेगा ?' शशि बाबू गरज उठे, मेरे मान को ठेस पहुचगी क्यो ? कह सकती हो क्यो ? घर के मालिक का पोस्ट एकाएक घर के मुनीम के पोस्ट म कैसे बदल गया ?'

रेखा निरुत्तर खडी रही।

शशि बाबू चौकी से उठ पडे। दबे आक्रोश के साथ कमरे म चहल कदमी करने लगे। बाले, 'वस घर गृहस्थी, ससार, सब कुछ अब भी मेरा है। मेरी ही मर्जी से तुम सब का चलना होगा, समझी ? तुम्ह भी चेतावनी दिए देता हू। तुम्हारी भी पढाई लिखाई सब वद। अगले महीने से कालेज से नाम कटवा दूगा, समझी। इसीलिए तो औरतजात को ज्यादा पढाना लिखाना मना है। जिन लोगो ने मना कर रखा था, वे विवेकशील थे। पढ लिखकर लडकिया उद्दत और अविनयी ही तो हागी।'

हालाकि इसके वाद भी शशि बाबू का यह आशा करना गलत था कि रेखा वहा बैठी रहेगी। अब तक का आक्रमण विपरीतमुखी था। पर अब तो तोप उसी की ओर घूम गयी थी और गोली उसी की तरफ बरसने लगी थी। रेखा वहा से भागती नही तो करती क्या ?

'सुनो। रुको।'

घर मे घुसता, इससे पहले ही चौंक कर परेश रुक गया। अधेरे मे बैठक मे पिताजी चुपचाप बैठे होगे, यह धारणा ही उसे नही हो सकती थी। अनमना सा वह घर के अदर जा रहा था कि एकाएक बाप की गुरु-गभीर आवाज सुनकर रुक गया।

विस्मय के साथ बोला, 'बत्ती नही जलायी आपने ?'

उस बात का जवाब दिए बिना शशि बाबू पूर्ववत गभीर स्वर मे बोले, 'तुमसे एक बात करनी है।'

परेश चुप रहा।

शशि बाबू अपने खास अदाज मे चहलकदमी करते हुए बोले, 'सुनो, अपनी पत्नी से कह देना कि इस घर की माली हालत अभी इतनी बिगडी नही कि घर की बहू अगर नौकरी नही करे तो दाल रोटी नही जुटेगी। समझे। इस बात से तुम्ह आगाह कर देने के लिए ही मैं तुम्हारी राह देख रहा था।'

बात खत्म कर शशि बाबू कुर्सी खीच कर उस पर बठ गए। परेश

धीरे पाव से अदर की तरफ बढा।

मामला इस तरह से मोड लेगा, परेश ने सपने मे भी नही सोचा था। सुमित्रा की नौकरी के लिए दरखास्त भेजने की बात से वह अनजान नही था, पर इस मामले को उसने इतना महत्त्व नही दिया था। उसने सारी बात को मजाक मे ही लिया था। उसने सुमित्रा को मना नही किया था, उसके पीछे भी उसकी थोडी शैतानी थी। उसने सोचा था, 'बहुत शौक है न नौकरी का। अभी दरखास्त तो भेजने दो। नौकरी का बाजार यदि इतना ही सस्ता होता तो चिंता किस बात की थी ? दरखास्त भेजने पर नौकरी थोडे ही हो जाती है। इटरव्यू देते देते जूते के तलवे घिस जाते हैं।'

पर अब शशि बाबू जिस तरह का भयकर रूप धारण किये बैठे थे, उससे तो लगता नही था कि वह सुमित्रा को आटे दाल का भाव मालूम करा सकेगा। चुपचाप सुमित्रा से जाकर कहना पडेगा, 'इरादा छोडो। क्या जल्दी पडी थी पिताजी को नौकरी की बात कहने की।

कमरे मे जाकर यही बात उसने सुमित्रा से कही, 'पिताजी को नौकरी की बात बताने की इतनी जल्दी भी क्या पडी थी ?

परेश के आने की आहट पाकर सुमित्रा ने चाय का पानी स्टोव पर रख दिया था। चाय बनाती हुई शात भाव से वह बोली, 'बताने मैं नही गई थी पर न बताने पर भी सब कुछ जान लेने का उपाय तुम लोगो को मालूम है, यह मुझे नही मालूम था।

परेश मन ही मन घबरा उठा। आज लगता है किसी का मिजाज सही नही है। खैर, पहले सुमित्रा को ठडा करना पडेगा। इसलिए हल्के मिजाज मे बोला, 'कमाऊ बीबी मेरे नसीब मे कहा। पिताजी का रग ढग देखकर तो ।'

सुमित्रा चुप रही।

परेश थोडा हिल डुल कर बैठकर बोला, 'आखिर मामला क्या है ? पिताजी को कैसे सब मालूम पडा ?'

'मालूम करने मे दिक्कत किस बात की है जबकि घर की सारी चिट्ठिया पहले उन्ही के हाथो मे आती हैं।'

'क्या ? फिर कही लिख रही थी क्या ?'

'मैंने और कही लिखा नही। उन लोगो ने ही मुझे इटरव्यू मे लिए बुलाया है।'

'अच्छा ?'

'हा कल ही आखिरी तारीख है। एक से तीन बजे के बीच बुलाया है।'

'बुलाने की बात छोडो।' परेश निराश होने का भाव दिखाकर बोला, 'जान कौन देगा ? पिताजी ने हुक्मनामा निकाल दिया है—यह सब कुछ नही चलेगा।'

इतनी देर के बाद सुमित्रा के चेहरे पर मुस्कुराहट खिली, पर वह गभीर भाव से ही बोली, 'कितनी अचल चीज भी चल निकलती है ससार मे।'

'इसका अर्थ ? 'चल' 'अचल' का क्या प्रश्न उठता है ?'

'और कुछ नही। तुमने कहा न कि हुक्मनामा निकल चुका है, 'यह सब कुछ नही चलेगा' इसलिए कह रही थी।'

भाग्य से बी० ए० बीवी मिली थी, परेश इस बात पर अपने को कृत-कृतार्थ मानता था। पर बीवी नौकरी भी कर सकती थी, यह उसने सपने मे भी नही सोचा था। और जबरदस्ती किसी से किसी बात के लिए मना करे, इतनी हिम्मत भी उसके पास नही थी। बाप के बल से बल पाकर वह मन ही मन खुश था। इसलिए सुमित्रा की बात के जवाब मे उसने कहा, 'पिताजी के साफ साफ मना करने पर तो और कुछ किया नही जा सकता, सभव भी नही। जिस तरह से नाराज है उसे देख कर तो लगता नही कि खुशामद करने के बाद भी वे 'हा' भर देंगे।'

पिताजी की राय होगी तभी नौकरी पर जा सकूगी, ऐसी असभव कल्पना मैंने कभी की भी नही थी। उनके विरुद्ध जाकर ही नौकरी करनी होगी यह जानकर ही मैंने नौकरी के लिए दरखास्त भेजा था।'

'क्या कह रही हो ?' परेश सचेतन होकर बोला। 'पिताजी जिस तरह से नाराज है, इसके बाद भी उनकी मर्जी के खिलाफ तुम काम करोगी ?'

'उपाय क्या है ? काम पर तो मैं जाउगी ही। यदि यहा नौकरी नही

मिली तो बाहर कही चली जाऊगी।

बीवी पर नाराजगी प्रकट करे, इतना साहस परेश को नही था। वह विस्मय से बोला, 'क्या कर रही हो ? इससे पिता जी का असम्मान होगा, एक बार सोचा भी है ?'

'बिल्कुल नही सोचा, यह बात नही है। पर एक बात मैं तुमसे पूछना चाहती हू—मान-सम्मान पर क्या सिर्फ बडो का ही एकमात्र अधिकार होता है ? जो छोटे है, किसी के अधीन होते हैं, उनका कोई मान-सम्मान नही होता, ऐसा कोई कानून है ? इसके अलावा भी मैं एक बात और कहना चाहूगी। अपनी मर्यादा की रक्षा स्वय ही करनी पडती है। तुम्हारे रोजगार से तुम्हारी पत्नी का भरण-पोषण पूरी तरह नही होता—अगर तुम्हारे पिताजी ऐसी बात कहते है, तो थोडा सा असम्मान उन्हे सहना भी पडेगा।'

साबुन सम्बन्धित घटना के बारे मे परेश को थोडा बहुत मालूम था, इसलिए सुमित्रा की बात वह समझ सका। फिर भी सुमित्रा की शिकायत का हल्का करने के लिए बोला, 'ऐसी बातें बडे बुजुर्ग किया करते हैं। हर बात का इस तरह से अर्थ थोडे ही निकाला जाता है।'

सुमित्रा दृढ स्वर मे बोली 'ठीक है, फिर मेरे काम का भी इतना बुरा अर्थ क्यो लगाया जा रहा है ? मेरे हाथ हैं पर है, कुछ रोजगार की क्षमता भी है। उस क्षमता को अब मैं काम मे लगाना चाहती हू—बात को इस तरह से भी तो लिया जा सकता है।'

'यह भी कोई बात हुई।

क्यो नही ' तीखी विद्रूप की हसी हसकर सुमित्रा बोली—'सच बात तो यह है कि उपाय रहते हुए भी औरतें निरुपाय की भूमिकाए निभाती रहेंगी। न मान-अपमान, धिक्कार किसी बात का बोध नही रहेगा, क्यो ? तुम्हारी बीवी के सच का भार यदि उठा सकने की हिम्मत तुममे नही है तो अपनी व्यवस्था मुझे स्वय करनी पडेगी। मेरी भी आखिरी बात यही है।'

'पिताजी के मुह पर यह सब कुछ कह सकोगी ?'

'जरूरत पडे तो कहूगी। मैं बडो की श्रद्धा और उनका सम्मान अवश्य

करूंगी, पर यदि वे अपने स्थान से नीचे नही गिरें तो। श्रद्धा-सम्मान और खामख्वाह का डरना एक बात नही।'

इस प्रकार आलोचना पर पानी फेर कर सुमित्रा उठ कर चली गई। *असहनीय अपमान* के बोध से परेश भी पैरो मे चप्पल डाल कर घर से बाहर निकल पडा। उसे अपने पर धिक्कार आ रहा था। सच मे, आज वह एक मामूली किरानी के बदले अगर अच्छा रोजगारी लडका होता तो शशि बाबू को क्या साहस होता कि व बहू की छोटी भूल पर कटाक्ष कर पाते—वह भी एक मामूली साबुन का लेकर? और सुमित्रा? क्या उसे हिम्मत होती कि वह इस तरह उसी के मुह पर अपमान का चाटा कसे?

परेश अच्छी तरह समझता था कि वह सुमित्रा की बात को भी युक्ति से नही काट सकता था। इसी बात को लेकर उसे और भी जलन थी।

युक्ति और अयुक्ति को अनदेखी कर औरतो के हर वक्तव्य को टाल कर उस धमकाकर चुप करा देने के दिन अब रहे नही—इस बात को समझने के बाद तो पुरुष की निश्चितता और उसकी शाति ही खत्म हो गई है।

थोडी देर घूम फिर कर मामा के घर जाने के उद्देश्य से परेश एक बस पर चढ गया। वह मामा को ही सबसे विलक्षण व्यक्ति समझता था। विलक्षणता का सबसे उत्कृष्ठ प्रमाण तो मुकुद बाबू ने ही दिया था—विवाह न करके। वे चिरकुमार रह कर कितने खुश थे। परेश वैसे स्वभाव मे चिताशील व्यक्ति नही था, फिर भी आज वह बहुत कुछ सोचता रहा। आदमी आदमी के बीच टकराव है। पिता पुत्र के बीच टकराव है पति पत्नी के बीच टकराव है। कोई किसी को सुनाने मे कसर नही रखता।

आत्मिक प्यार, नि स्वार्थ प्रेम, ये सारे शब्द सिर्फ शब्दकोश के शब्द मात्र रह गए थे?

भाग्य के तूफानो से बचने का उपाय इसान के हाथो मे नही होता, क्योकि वह चोट उसे विधाता की ओर से मिलती है पर ससार के आक्रमण से आत्मरक्षा के लिए एक सुरक्षित किला है, और वह किला है—अखबार।

कई विरक्त वरागी गहस्वामी इस दुर्भेद्य किले की आड म छुप कर ससार के आक्रमण से अपने को वचा लेने की कोशिश करते हैं।

हमारे शशि वावू भी इन दिना इन्ही लागा मे से थे। सुवह का सारा वक्त शशिवावू अखवार के पन्नो के वीच मुह ढँककर विता देते थे। और मदाकिनी का यह बात सर्वाधिक नापसद थी। मालिक चीखते चिल्लाते रहें, यह बात भी उसे पसद नही थी पर अखवार पढना असहनीय ही था इसलिए जब न तव वह हाफ्ती दौडती एक बार शशि वावू के सामने आ धमकती और जाती भी उत्तेजित भाव मे—कोई न काई शिकायत लेकर। आज भी कमरे म दाखिल होते ही वोली, मैं पूछती हू कि कुछ सुना भी है ? वस तुम्ह क्या ? अखबार मे मुह छुपाये वैठे हो, इधर घर गहस्थी कसे चल रही है, कुछ मोचा भी है ?'

अखवार की आड से मुखडा निकाल कर गभीर हसी हसकर शशिवावू वोले, 'गहस्थी का मतलव ही है टूटे पहिया वाली बलगाडी। वह चलती कहा है ? पर अभी अचल अवस्था किस वात को लेकर है ?'

मदाकिनी तीव्र स्वर मे बोली 'आसमान म वैठो हो ? मधु गाव जाने की जिद पकडे बैठा है, मालूम नही तुम्हें ?'

हा, हा ऐसा कुछ कह तो रहा था। गाव से चिटठी आयी है, उसे जाना ही पडेगा। सचमुच ही जा रहा है क्या ?

झूठ होता तो क्या आखो के आगे सरसो के फूल दिखाई पडते ? लगता है बिना गए मानेगा नही।'

शशिवावू बाले, कौन-सा राज काय आ पडा है छोकरे को ? वह आखिर गया किधर ? मधु ओ मधु।

कधे के अँगोछे स पसीना पोछत हुए मधु आकर सामने खडा हा गया धीरे से वोला, 'आपने मुझे बुलाया वावूजी ?'

'मैं पूछ रहा था, तूने गाव जाने की कसम खा रखी है ?

मधु सिर खुजलाकर वोला, 'जी वावूजी, गाव म कुछ जमीन-वमीन है, रिश्तेदार ने लूट मचा रखी है। इसलिए मैया की चिटठी आयी है। एक बार तो जाना ही पडेगा वाबूजी !'

मदाकिनी अवहेलना से बोली, 'हू ! जाना ही पड़ेगा ? कौन सी नौ सौ पचास बीघे की जमीदारी है जो रिश्तेदार लोग लूट रहे हैं, और उसी सोच मे मरा जा रहा है तू।'

नौकर था। इसलिए मधु इतने बडे अपमान को हजम कर लेता एसी बात नही थी। उसने तपाक से जवाब दिया, 'नौ सौ पचास बीघा जमीन न सही मालकिन, पर गरीब के लिए तो हर चमकती चीज ही सोना है।'

शशिबाबू गभीर भाव से बोले, 'वाह ! मधु बाबू बोलने चालने म होशियार हो गए हैं। खैर। लौटगा तो ? या देश म रह जाएगा ?'

'क्या कह रहे हैं मालिक', मधु उत्साह से बोला, 'लौटूगा क्या नही ? आज पाच साल से मधु आपका ही नो नमक खा रहा है। जरूर लौट कर आऊगा हुजूर। बहुत ज्यादा तो महीने दो महीने लग जाएगे।'

'दो म ही ने।' मदाकिनी घबरा उठी। बोली, 'क्या कह रहा है मधु ? तू मुझे मार टालना चाहता है ?'

गृहिणी के दीन भाव की तरफ शशि बाबू ने अग्नि दृष्टि से देखा। नौकर-चाकर के सामने यह क्या ? आत्म सम्मान का ख्याल ही नही।

मधु मालिक के भाव को पढ न सका। बोला, 'नही मा जी, पर मुकदमे की बात है। दो महीने से कम मे क्या तय हो पाएगा ? सम्पत्ति की सुरक्षा की बात है।'

'तेरी सम्पत्ति की रक्षा ता हो जाएगी, पर मेरी गृहस्थी की रक्षा कसे होगी।' मदाकिनी बोली।

शशि बाबू और नही सह सके। पत्नी को डपटकर बोले, 'चुप भी करो। राजा के बिना राजकाज चल सकता है और मधु के बिना तुम्हारी गृहस्थी नही चलेगी ? फालतू बातें मत करो। हू ! एक बाजार से चीज-चीज लाने का ही तो चक्कर है, सो कल से कुली के जरिए बाजार से मैं ले आऊगा बस।'

मधु खुश होकर बोला—'फिर मैं जाने की तैयारी करू।'

मदाकिनी गरज उठी। शशि बाबू को सुनाकर बोली, 'बाजार से साग सब्जी लाकर देने से क्या सब कुछ हो जाएगा और कोई काम-काज नही है ?'

शशि बाबू भी समान तेजी से बोले, 'घर का बाकी काम तुम लोग क्या नही चला सकोगी ?'

'तुम लोग। यानि ?' मदाकिनी तीखे स्वर मे बोली, 'तुम लोगो का क्या मतलब ? लोग कौन हैं जरा सुनू भी। बहू दौडेगी दफ्तर, लडकी जाएगी कालेज। सब काम अतत इस बूढी के कधे पर ही तो पटेगा ? इस बचारी ने कौन-सी चोरी की है जो इसे ही सब भुगतना पडेगा।

शशि बाबू जानते थे, तक आगे चलाने पर मदाकिनी की क्रोधाग्नि भडक उठेगी, इस लिए उन्होने दुबारा अखबार के किले के अन्दर अपना मुह छिपा लिया। मदाकिनी भी धम् धम आवाज करती हुई चली गई।

शशि बाबू की मर्यादा अक्षुण्य तो रही, पर दो ही चार दिन मे 'मधु' के न होने से घर मे इतनी कडवाहट पैदा हो गई कि कुछ कहने का नही। बहू सुमित्रा वैसे तो सभ्य, शिष्ट और शात थी। बात भी धीरे करती थी, काम भी तरीके से करती थी, हालाकि उसके काम की मदाकिनी परवाह नही करती थी, फिर भी जितना उससे हो सकता था, वह करने मे पीछे नही हटती। आज भी वह सुबह के लिए रात मे ही आलू काटकर रखने लगी थी। पर उसने देखा आलू का टोकरा खाली था।

वह धीर आवाज मे बोली, 'मा आलू तो हैं नही। इसलिए काट कर नही रख सकी। सुबह क्या बनेगा ?

'आलू नही हैं ?' मदाकिनी आश्चय चकित होकर रह गई। रात को नौ बजे बहू यह क्या कह रही थी ?

'आलू नही हैं, इसका होश तुम्हे रात के नौ बजे हुआ। सुबह तो सब्जी तुम्ही ने काटी थी उसी समय देखा नही ? इस तरह के मन और दिमाग से कही गृहस्थी चल सकती है ?'

सुमित्रा शात स्वर मे बोली, 'आलू, बगन, हल्दी मिच के अलावा भी कई चीजें दिमाग मे रखनी पडती है मा, इसलिए हर वक्त सब्जी का ख्याल दिमाग मे रखना सभव नही होता।

सुनकर क्षण भर के लिए तो मदाकिनी स्तब्ध रह गई, पर क्षण भर के लिए ही। वह खुद बी० ए० पास नही थी, केवल इसलिए बी० ए०

पास बीवी के आगे हार मान लेगी, ऐसी उम्मीद मदाकिनी से करना गलत था। इसलिए दूसरे ही क्षण वह सुमित्रा से भी अधिक शात और नम्र आवाज मे बोली, 'जानती हू बेटी, तुम लोगो का दिमाग बहुत कीमती है। आलू, बैगन, हल्दी, मिर्च जैसी तुच्छ चीज़ो के लिए उसम जगह नही होती। पर जानती हो मुआ पेट ऐसा है, कि इन्ही तुच्छ चीज़ो के बिना उसका गुजारा भी नही। और यह तो दो बूढे-बुढिया के अकर्मण्य दिमाग के बल पर रोज दिन झमेला सलट रहा है वरना क्या होता ।'

'बिना खाए शायद नहीं रहते', कहकर तीखी हसी हसकर सुमित्रा अपने कमरे मे चली गई।

मदाकिनी आज नरेश बाबू की लाई हुई चिंगडी मछली क रूप से मोहित होकर उसे मलाई के साथ मिलाकर 'मलाई करी' बनाने के आयोजन म जुटी थी। बस कडाही उतारने की देर थी। अचानक जलने की गध पाकर देखा कि करी जल चुकी थी। इतनी देर से, इतने जतन से—वह जो कुछ बना रही थी, सब बबाद हो गया। पर ताज्जुब की बात तो यह थी कि इतने बडे नुकसान पर भी मदाकिनी जरा भी विचलित नही हुई, बल्कि इस तुच्छ वस्तु के पीछे इतना समय और मेहनत खच करने के कारण उस अपन ऊपर ही धिक्कार आन लगा।

घर के नौकर-चाकर को तनख्वाह उसके श्रम को देखते हुए दी जाती है। छोटी गहस्थी के लिए कभी-कभी दस रुपए ही काफी होते हैं। पर इतनी बडी गृहस्थी के लिए कम-से कम बीस रुपए तो होन ही चाहिए। यह तो मोटे तौर का हिसाब है, पर क्या यह हिसाब ही सब कुछ ह ? नही। श्रम की कीमत के अलावा भी एक और चीज की कीमत उनके हक मे बनती है, वह है शाति की कीमत।

रोजमर्रे का काम-काज के रोक टोक ठीक से चलता रहे तो ससार की थोडी-मोडी कमिया खलती नही। घर की औरतो का गुस्सा और असतोष भी मानो रेत के नीचे दबा रहता है, जो नौकर चाकरो की अनुपस्थिति मे भभक उठता है। सही माने मे शाति न भी हो तो ऊपर से शाति

की जो चादर बिछी रहती है, उसी मे हलचल मच जाती है।

मधु की गैरहाजिरी मे भी शशि बाबू की गृहस्थी मे चारो तरफ विशृंखलता दिखाई देने लगी। कभी कालेज से आते ही रेखा चिल्लाती, 'मां इन दिनो घर म हो क्या रहा है? ऊपर के कमरे की दोनो ही सुराहियां खाली हैं। एक बूंद पानी नही—आखिर माजरा क्या है?'

बेटी को पीने का पानी नही मिल पाया, ऐसी बातो को सोच कर कभी तो मदाकिनी अपनी गलती मान लेती और कभी भल्ला उठती और शाम तक गरजती रहती। कहती, वह दस हाथो वाली तो थी नही। दो हाथ पर की सामान्य महिला होकर जूता सिलाई से चडी पाठ सब कुछ अकेले कैसे कर सकती थी। घर के बाकी सदस्यो को कभी इसका भी ख्याल आया? अत मे कभी कभी वह बहू को भी नही छोडती। कहती, 'घर की बहू अगर बाबूजी की तरह दफ्तर मे काम करने जाए तो गृहस्थी का जिम्मा कौन उठाएगा? मदाकिनी की उम्र बढ रही थी या घट रही थी?

बहू के कान म यदि बात पहुचती तो वह कह देती कि इससे अधिक काम की उससे अपेक्षा करनी नही चाहिए, क्योकि उसके लिए असभव है, और फिर गृहस्थी की जिम्मेदारी कोई अपने कन्धो पर उठाता है जब घर का सारा अधिकार भी उसी के हाथो होता है। उसके हाथो मे अगर घर का दायित्व सारा रहता तो दो महीने की छुट्टी मागने पर वह उस नौकर की छुट्टी ही कर देती। पैसे खर्चने पर नौकरो की कहो कोई कमी थी? और अभी जो कदम उठाया गया था। उससे तो मधु ने यही समझा होगा कि कि उसके बिना इस गृहस्थी का गुजारा ही नही। इस प्रकार की हीनता सुमित्रा के लिए असहनीय थी।

पर मदाकिनी की कमजोरी भी यही थी। मधु को निकाल बाहर करने की बात वह सोच भी नही सकती थी। फिर भी एक दिन उसने नया नौकर रखने का हुक्म दे ही दिया।

बात यह थी, शशि बाबू बाजार से सामान तो ला ही देते थे पर मधु की तरह फटाफट मछली तो बना नही सकते थे। सारा फसाद इस मछली को लेकर ही था। खाना पकाते-पकाते उठकर मछली काट कूट कर पका कर सब की थाली मे परोसना मदाकिनी के लिए सभव नही था, इसलिए

मछली एक तरफ पडी रहती। सीतू और रेखा दाल, सब्जी चावल खाकर कालेज चले जाते और सुमित्रा और परेश भी वही खाकर आफिस जाते।

जा नही खा पाते, मदाकिनी उनके ही विरुद्ध गुस्से से आग बबूला हो उठती। आखिर मे एक दिन अनमनस्क हाथो से सुमित्रा मछली काटने बैठी और पलक झपकते ही मछली के खून और सुमित्रा के कटे हाथो के खून से आगन लहू लुहान हो गया।

सयोग से यह घटना शशि बाबू की आखो के सामने हुई। वे गुस्से से चिल्ला उठे, 'क्या सर्वनाश कर दिया बहू ?'

सुमित्रा सकपकायी सी बोली, 'ज्यादा नही कटा है।

ज्यादा नही कटा ?' क्या कह रही हो बहू ? खून बह रहा है। रेखा रेखा सीतू परेश, जल्दी से आयोडिन की शीशी ले आओ और रुई भी '

मदाकिनी हक्की-बक्की-सी रसोई से निकली और बोली, 'क्या काड मचा रखा है बहू ? एक दिन हसुए को हाथ क्या लगाया, हाथ ही काट डाला ? इतना खून ? उगली का कुछ रहा या नही ?'

'रहगा भी कैसे ?' शशि बाबू गरज उठे, 'समय कम है। दफ्तर जाना है और बचारी को ऐसा काम थमा दिया। दफ्तर की जल्दी कैसी होती है, तुमने तो कभी जाना नही न ?'

मदाकिनी बिलकुल चुप रह गई। शशि बाबू गुस्से मे थे, इसलिए मदाकिनी की दृष्टि वे देख नही सके। क्या था उस दृष्टि मे ? सिर्फ बर्फीला कठोरपन था और कुछ ? मदाकिनी ने बिना कुछ बोले धीरे से आगन मे उतर कर सुमित्रा के अधूरे काम को अपने हाथो मे ले लिया।

और उसके दूसरे ही दिन से शशि बाबू को हर रोज एक नया नौकर तलाश कर लाते देखा गया, पर उनके लाए हुए नौकर मे से कोई भी किसी को नहीं जचा। कोई सिर्फ हड्डियो का ढाचा था तो दूसरा निरा बेवकूफ कोई महाचालाक तो कोई बिल्कुल ही गवार। इसलिए सभी नापसद कर दिए गए।

इसी बीच सीतेश ने एक दिन कहा, 'मा, चक्रबेड मे एक 'सर्वेट ब्यूरो है। वहा बडे अच्छे-अच्छे नौकर मिल जाते हैं।

मदाकिनी बोली, 'अगर मिलते हैं तो लाता क्या नही ?'

'मैं ? मैं कैसे जा सकता हू भला। पिताजी चले जाए।'

'क्यो ? क्या बच्चा रह गया है ? घर के लिए इतना-सा काम भी नहीं कर सकता ?

'ऊफ मा ! तुम ता कुछ समझती ही नही। वे मेरी बात को शायद उतनी मा यता नही दें। पिता जी के जाने पर काम बन ही जाएगा।'

शशि बाबू सुनते ही उछल पडे। बाले, 'कहा बताया रे ? अता पता मुझे ठीक समझा दे। मैं आज ही चला जाऊगा।'

कहना फिजूल है कि जवान बेटे से अधिक एनर्जी अवकाश प्राप्त बाप मे थी।

थोडी ही देर मे लौट कर आकर शशि बाबू चिल्लाकर बोले, 'सुन रही हो ? नौकरो का दफ्तर देख आया।'

'नौकरो का दफ्तर ? क्या कह रहे हो ?'

'हा भगवान ! बडे मजे की जगह है !'

'सिफ दफ्तर देखकर चले आए ? नौकर साथ नही ला सके ?'

'साथ लाता ? मैं पूछता हू तुम उसे रख सकोगी ? नौकरो की समिति द्वारा छपा हुआ फारम मिलता है। उस फारम को भरने के बाद ही नौकर रखने का नियम है। उनके कानून और नियम की फेहरिस्त सुनोगी ? दिन मे आठ घण्टे से अधिक एक मिनट का काम नही करा सकती। हफ्ते मे डेढ दिन की छुट्टी देनी पडेगी। कपडे जूते आदि जरूरत के मुताबिक। महीने मे दो बार सलून मे बाल कटाने के पसे और एक बार सिनमा के टिकट के पसे दने पडेंगे। घर पर चिट्ठी लिखने के लिए हफ्ते म एक पोस्ट काड। इसके अलावा वह जूठा नही छुएगा। घर के बाबुओ के अलावा और किसी के कपडे नही धोएगा। अब बोलो, रखोगी एसा नौकर ?'

मदाकिनी गभीर मुद्रा मे सब सुन रही थी। अब बोली 'देश को विलायत बनने मे अब और देर नही। खैर। तनखाह कितनी देनी होगी ?

'तीस रुपए। तीस रुपए महीना, दशहरे के समय बोनस, बाबू के

समान एक जैसा खाना। कहो तो एक को बुलाकर लाता हूँ।'

मदाकिनी चाभी के गुच्छे से बधे आचल को सभाल कर जाती हुई बोली, 'उसके पहले काशी धाम जाने के लिए मुझे एक टिकट मगवा कर दे देना। मैं भी तो आजीवन तुम्हारी गहस्थी मे चक्की पीसती रही हू, कभी किसी चीज की माग नही की है। अब यह आखिरी माग तुम्हारे आगे रख रही हू।'

शशि बाबू पत्नी के पीछे पीछे चलते हुए बोले, 'हू। भला यह गहस्थी मेरे अकले की कैसे हुई जरा सुनू तो सही।'

'दुनिया तो यही कहती है।'

शशि बाबू बोले, 'मैं तो सोचता था—तुम्हारी घर गृहस्थी म मैं ही खटता मरता रहा हू।'

'यह तो बच्चो को पटाने जैसी बातें हुई। इस बात की कीमत तुम्हे भी मालूम है और मुझे भी! अरे। वहा कौन खडा है? मुह जला मधु है न? अरे, क्या हाल बनाया है चमगादड सा चेहरा बनाया है अपना।'

मधु कापता हुआ बरामदे मे बैठ गया। बोला, 'जी मा जी। मुझे मलेरिया हो गया था। बहुत खराब बीमारी है। रह रह कर पूरा शरीर माना टेढा होता जा रहा है।'

'इस हालत मे आया है—क्या करू अब तुझे लेकर?' शशि बाबू थोडे गभीर स्वर मे बोले।

मधु बोला, 'यह तो मैं नही जानता मालिक। आपके चरणा मे आया हूँ। मारिए या रखिए आपकी मर्जी।'

परेश खिडकी से झाकते हुए नाराजगी से बोला, 'हम लोग और कर भी क्या सकते हैं? अस्पताल मे दाखिल करा देने के सिवा और कोई चारा भी तो नही?'

मदाकिनी गभीर आवाज मे बोली, 'बस करो परेश, घर की किसी जरूरत के समय जब कुछ नही करते तो खामख्वाह इस मामले पर भी न ही सोचो तो बेहतर होगा।'

परेश ने खिडकी बद कर दी।

कमरे के अन्दर बैठी सुमित्रा ने व्यग्य की तीखी हसी हसकर कहा, 'जाओ और आगे बढ कर अपमान मोल लो। मुझे तो तुम पर ताज्जुब होता है।'

परेश चुप रहा। पहले मा-बाप की डाट सुनने पर उसे दुख होता था। स्वाभिमान म चोट पहुचती थी। पर अब अपमान का बोध होता था और यह अपमान बोध उसमे उसकी पत्नी ने जगाया था। या शायद यह भी सच था कि पहले की तरह उसके मा-बाप भी आसानी से उसे डाट नही पाते थे। उनका खुद का साहस घट गया था, इसलिए श्लेषमा भरी आवाज मे वे बोलते थे। आवाज भी वेसुरी सी लगती थी। लेकिन आखिर उनका साहस घटा क्यो था?

आखिर मे मधु को अस्पताल मे दाखिले की जरूरत नही पडी। कलकत्ता की हवा लगते ही उसकी टूटती सी सेहत फिर से ताजी होने लगी। पर मधु को सिफ बहाना बनाकर शशि बाबू की गहस्थी मे और गहस्थी के सदस्यो के मन मे जो टूट पैदा हुई थी, उसकी पूर्ति नही हो सकी। और उस टूट का रास्ता पकड कर क्षय शुरू हुआ और तिल तिल कर उस क्षय का परिमाप बढता ही चला गया।

समस्या की कमी किसी भी गहस्थी म नही होती। और नित्य नयी समस्या का रास्ता पकड कर सघष शुरू हाता है। शशि बाबू की गहस्थी मे ऐसी ही एक समस्या घर की जवान लडकी रेखा ने लाकर खडी कर दी।

समुद्र मे जिस तरह तरग उठती है, गहस्थी की समस्या भी कुछ वैसी ही होती है। निरन्तर उठती रहती है। एक तरग उठती है, पर उफान के बिखर जाने पर लगता है समुद्र शात हो उठा पर उसके दूसरे ही क्षण एक और तरग उठ खडी होती है।

समस्या की अपनी प्रकृति भी कुछ ऐसी ही है। हालाकि कुछ समस्याए नमकीन जलराशि के समान विस्तृत पैमान म फूलती रहती हैं, उसके आदि अन्त का ठौर ही नही लग पाता। कहा से आता और कहा जाता है ये

अगाध फेन भरा समुद्र का जल। पर जो समस्या एकाएक किसी विपत्ति के समान गृहस्थी पर गिर पडती है, अशांति उसी से गभीर रूप धारण करती है।

शशि बाबू की गहस्थी भी इस नियम का व्यतिक्रम नही थी। घर की बहू की नौकरी को लेकर समस्या की जो तरग उठी थी, वह अब शांत हो चुकी थी। सुमित्रा नियमपूर्वक दफ्तर जाती आती थी, पर अब प्रमुख समस्या थी लडकी की शादी।

यद्यपि आज के युग मे लडकियो को लडको की तरह शिक्षा-दीक्षा देने का रिवाज हुआ है, लडकिया भी अपने गुणो से पुरुषो की बराबरी कर सकती हैं, पर लडकी के हाथ पीले करने की समस्या इस देश मे आज भी वसी ही बरकरार है। कभी-कभी तो लगता है बेटी की शादी की समस्या शायद अब और बडी हो गयी है।

शिक्षा की रोशनी से अपरिचित भीरु बालिका के विवाह के लिए वर का निर्वाचन अभी भी सहज है, बस दहेज की रकम मे फर्क होता है पर इस युग मे शिक्षा प्राप्त बडी उम्र की लडकी के लिए वर खोजना मा-बाप के लिए सिरदद ही है। तिस पर दहेज ? वैसे अधिकाश बडे घरो मे इसे दहेज नही कहा जाता। वहा यह उपहार का रूप लेकर आसन जमा कर बैठा है। जिन सभ्य घरो मे लडके वाले नकद के रूप मे दहेज की माग नही रखते—वैसे लोग ऐसे घरो मे बेटे की शादी भी नही करते जो उपहार के रूप म बीस-तीस हजार का सामान नही दे सकते।

और जो साफ साफ दहेज मागते हैं, वे सीधे लडके को विलायत भेजने का खर्चा माग लेते हैं, जैसे लडके को जीवन मे प्रतिष्ठित करवाना बेटी के बाप की ही जिम्मेदारी है। इस क्षेत्र मे धनी व्यक्तियो से भी अधिक उत्साही मध्यम वर्गीय परिवार के पिता होते हैं। शशि बाबू की बडी लडकी कमला की शादी कई वष पहले हो गयी थी। उन दिनो शशि बाबू की आर्थिक स्थिति भी अच्छी थी, इसलिए इतनी मुश्किल नही पडी थी। पर अब वे रेखा की शादी के लिए चिंतित थे।

रेखा कालेज मे पढ रही थी। हर मामले से वह बुद्धिमान सुघड लडकी थी। शशि बाबू सोचते—इसे तो देखकर सुनकर अच्छे घराने के लडके के

हाथो म देना पडेगा। वैसे लडके वाले घर को पैसे वाला भी होना चाहिए, क्योंकि घर-गृहस्थी के काम काज म रेखा इतनी अभ्यस्त नही थी। कमला की तरह जूता-सिलाई से लेकर चडी पाठ तक सभालने की क्षमता रेखा म नही थी।

दाम सुनकर, अपनी हिम्मत के मुताबिक और आकाक्षा के अनुसार शशि बाबू एक लडके की खोज खबर ले आए थे, इसलिए उनका मन उत्साह स भरा था। आज शाम लडकी देखने के लिए शशि बाबू लडके वालो को बुलावा भी दे आए थे। इसलिए दोपहर से ही हल्ला मचा रहे थे। उन्ह गहिणी पर उतना भरोसा नही था, इसलिए वे हर काम के लिए सुमित्रा को ही बुला रह थे। अब तक करीब सात-आठ बार पूछ चुके थे, 'सब कुछ ठीक ठाक है न ?' वे घर से बाहर, बाहर से अन्दर बार बार आ जा रह थ। वे एकाएक फिर चिल्लाकर बोले—'बहू कहा गई ?'

सुमित्रा पान लगा रही थी। उसी रूप मे आकर बोली, 'कुछ कह रहे हैं पिताजी ?'

'कह रहा हू समय पर चाय वाय तो मिल जाएगी न ? यानि चूल्हे मे आग समय से सुलगा कर रखना पडेगा।'

सब ठीक ढग से हो जाएगा, आप चिता न करें। चाय और शरबत दोनो ही का इतजाम है।'

यह क्या किया बहू ? चाय और शरबत एक साथ। लडकी देखने वाले आकर बेमौत मरेंगे क्या ?'

सुमित्रा हस पडी। बोली, 'ऐसा नही है पिताजी। जिसे जो पसद है उसे वही मिलेगा।

शशि बाबू सतुष्ट होकर बोले, 'अच्छी बात है बेटी। अच्छी बात है। तो फिर अब झटपट लडकी को सजा सवार लो। बचारे भले लोगो को कही घटे दो घटे इतजार म न बठा देना।'

'लडकी को सवारने मे दो घटे तो लगते नही पिताजी।' सुमित्रा हस कर बोली। आप लोगो का युग अब रहा नही पिताजी कि लडकी देखने के लिए लडके वालो के आने पर मुहल्ले भर की औरतें सजाने-सवारने के नाम पर अपनी बहादुरी दिखाना चाहती थी। और फिर रेखा तो बिलकुल

कुछ करना ही नही चाहती।'

'रखा सजेगी नही ?' शशि बाबू उत्तेजित हो उठे। बोले, 'सजना-सवरना नही चाहती ? क्या मतलब है इसका ?'

'कह रही है उसकी कोई जरूरत नही।'

'हा, शायद गलत नही बोल रही है। इस युग की लडकिया तो हर वक्त ही बनी सवारी रहती हैं। हम लोगो का युग था कि लडकी दिखाने के लिए महीने भर पहले से उसे उबटन लगाकर रगड रगड कर साफ करने के बाद ही किसी के आगे निकाला जाता था।'

'आप लोगो के जमाने की बात कुछ कहिए ही नही पिताजी। लडकी को जड-पदार्थ समझा जाता था। लडकी बेचारी की अपनी इच्छा की रुचि की कोई कद्र नही की जाती थी।'

'लडकी की अपनी इच्छा ? क्या कह रही हो बहू ? कहता हू कि उस जमाने मे लडके की इच्छा की भी परवाह कौन करता था ? बाप-ताऊ लडके की गदन दबोच कर हुक्म देते थे, 'सुन। इस तारीख को इस पते पर तेरी शादी होने वाली है। सेहरा बाध कर हम लोगो के साथ चलना होगा। और लडके भी बाप के सुपुत्र हुआ करते थे। ठीक समय पर मडप म हाजिर हो जाते थे। दुल्हन कैसी है, यह जानने का हुक्म तक हमे नही था।'

सुमित्रा नाक सिकोड कर बोली, 'कुछ भी कहिए पिताजी—बहुत अजीब और भद्दा तरीका था।'

'भद्दा तरीका था ? क्यो ? ऐसा नियम था, इसलिए शादी के बाजार के लडकी लडके पडे नही रहते थे। इस युग म तो आधे लडके लडकियो की शादी ही नही होती।'

'नही पिताजी। शादी के बाजार मे सभी बिक जाएगे, यह तो कोई बडी बात नही हुई। शादी जैसे मामले मे आदमी को अपनी पसद-नापसद का रयाल तो करना चाहिए।'

'पसद और नापसद की बात करती हो ?' शशिबाबू गभीर मुद्रा मे हमकर बोले, पसद माफिक लडका तुम्हें कहा मिलेगा बहू ? उससे तो कही अच्छा है आख नाक कान बद कर ।'

इस बातचीत के बीच अचानक मदाकिनी आकर खडी हो गई। बोली

'इतने इत्मीनान से कैसी बातें हो रही है ?'

शशि बाबू अवहेलना का भाव दिखाकर बोले, 'खास कुछ नही। पहले के जमाने मे शादी ब्याह के मामले मे लडके का अपना कुछ कहना चलता नही था मैं यही बात बहू से कह रहा था।'

'हू। मदाकिनी गभीर भाव से बोली, 'इसलिए तो आज का जमाना पुराने जमाने से बदला ले रहा है। उस युग मे लडके की जीभ मे भी ताला होता था और आज तो लडकियों की भी जुबान खुल गयी है। अच्छा चलो जब वे सज्जन आएगे तो क्या कहोगे, इस समय तो इसी बात पर दिमाग पर जोर लगाओ।'

'उन भले लोगो को हुआ क्या है ? उनसे आखिर मैं क्या कहूगा ?'

यह मुझे नही मालूम। पर कुल बात यह है कि तुम्हारी लडकी शादी नही करेगी। बहुरूपिए की तरह सज धज कर किसी के सामने निकलेगी भी नही।

शशि बाबू घबराकर बोले, उफ! बहुरूपिया बनने के लिए उससे किसने कहा ? बहू को जिम्मेदारी सौंप दी है, अच्छी तरह आधुनिक ढग से तैयार कर देगी।'

मदाकिनी नाराज भाव से बोली 'आधुनिक और पौराणिक की बात नही हो रही है। वह बन सवर कर किसी के सामने आएगी ही नही, क्योकि अभी वह शादी ही नही करना चाहती।'

'अभी शादी नही करेगी ? शशि बाबू गरज उठे। 'इसकी फुर्सत कब होगी उसे, अगर पूछू तो ?'

'मुझे क्यो कह रहे हो ?' मदाकिनी ने भी गुस्से से जवाब दिया।

'इसमे मेरा क्या अपराध है। मैंने पहले कहा नही था। लडकी ने बी० ए० कर लिया है। बहुत पढ लिख लिया है। आगे अब और पढने की जरूरत नही। तब तुमने मेरी राय मानी थी ? ऊपर से कहा था, 'मेरे खानदान मे कभी किसी लडकी ने बी० ए०, एम० ए० नहीं किया है रेखा पढ लिख कर मेरे खानदान के नाम को रोशन करेगी। रेखा मेरा गर्व है। अब समभो और सभालो उसे। तुम्हारे पसद का लडका उसे पसद नही।'

'पसद नही है ? क्यो ? लडके मे क्या कमी है सुनू तो जरा ?' शशि

बाबू स्थान काल और पात्र भूल कर गरज उठे । 'एम० ए० पास लड़का है । पैसा वाला बाप है, घर अपना है, गाडी खरीदी है ।'

'ये सारी बातें मैं तो समझ ही रही हू, पर ।'

'चुप क्यो हो गई ? पर के बाद क्या कहना चाहती हो, कह डालो ।'

'वह बाद मे सुन लेना । इस समय असली बात यह है कि रेखा अभी शादी नही करेगी ।'

'यह बात तो कुछ समय पहले सूचित करना चाहिए था इसका हाल तुम्हारी लडकी को नही था ?'

'उसने तो कहा कि उसे तो कहकर कुछ कहा किया नही गया, फिर वह कैसे बताती ।'

शशि बाबू खिन्न होकर बोले, 'हा, बात तो सिद्धात की है । महामान्य वर कन्या से बगैर पूछे इस मामले मे मुझे कदम नही डालनी चाहिए थी। अभ्यास नही था न, इसलिए समझ नही सका ।' लेकिन कम से कम आज उन भद्र पुरुषो के सामने मेरा सर न झुके, इसका तो कोई उपाय करो मदाकिनी ।'

'मैं कुछ नही कर सकती ।' मदाकिनी ने तेज-तर्रार जवाब दिया । 'मशविरे के समय मेरी राय तो ली नही जाती । जब पानी सर से ऊपर चला जाता है, तब मेरी जरूरत समझी जाती है । मैं इस समय मधु को साथ लेकर भैया के घर जा रही हू ।'

'वाह ! वाह !' शशि बाबू भयानक रूप से गभीर बन गए । अपने ही हाथो से अपने बाल नोचने लगे । सुमित्रा मृदु आवाज मे बोली, 'पिताजी आप चिंता मत कीजिए । जैसे भी हो मैं उसे समझा-बुझा कर सिर्फ आज भर के लिए मैं मैनेज कर लूगी ।'

रेखा आखो के आगे एक किताब खोलकर खिडकी के किनारे चुप चाप बैठी थी। पिताजी का चीखना चिल्लाना उसे साफ सुनाई दे रहा था । थोडी देर पहले मा का स्तभित विमूढ-सा चेहरा भी उसने देखा था, पर वह कर भी क्या सकती थी, वह तो स्वय लाचार थी । उसका सारा चित्त एक नए सुर मे डूबा हुआ था । एक यह ऐसा सुर था जो अभिभावको के क्रोध की परवाह नही करता । रेखा सोच रही थी, 'हाय! हाय ! पिताजी

ने छ महीने पहले यह शादी क्यो नही तय कर दी ? उस समय तक रेखा गुरुदत्त सिंह को जानती तक नही थी। यह सब ' सोचते सोचते चाक उठी। यह वह क्या सोच रही थी ? गुरुदत्त से वह अगर वह न मिलती तो उसका जीवन कैसा रहता, वह यह सोच भी नही सकती थी। न तो पिताजी की गुस्सैल आवाज उसके कानो मे पहुचती, और न ही मा का विमूढ खिन्न चेहरा उसकी आखो के सामने आता। अब तो उसकी सारी चेतना मे एक परिष्कृत उज्ज्वल सरल चेहरा छाया हुआ था। लम्बा सुडौल कद चेहरा—मानो हमेशा चमचमा रहा था।

रेखा अपने विचारो म खोयी हुई थी कि सुमित्रा आकर धम् से पलग पर बैठ गयी और बोली 'मेरा शक आखिर ठीक निकला।'

भाभी क आकस्मिक आविर्भाव से रेखा चौक उठी। पर भाभी की बात सुन कर मुस्कुरा कर बोली, 'कैसा शक ?'

और कही दिल दे बैठी हो ?'

रेखा थाडी चौकी पर दूसरे ही क्षण हसकर बोली, 'समझ गयी तो फिर मेरा बोझ कुछ कम हो जाएगा।'

'बोझ कम हो जाएगा ? यानि '

'यानि हिम्मत जुटा कर इसकी घोषणा मुझे नही करनी पडेगी।'

'सच कह रही हो ?'

'खामख्वाह झूठ भी क्या बोलूगी भाभी !'

'कितने दिनो से यह सब चल रहा है ?'

'दिन, महीने, घटो का हिसाब जोड कर किसी को किसी से प्यार होता है क्या ?

सुमित्रा गाल पर हाथ रख कर अवाक भाव से बोली, 'इतने दिनो से कुछ कहा क्यो नही ?'

'शोर गुल मचाकर कहने का कोई मौका ही नही आया, इसलिए कहा भी नही।'

अच्छा तो वह भाग्यवान है कौन ?'

रखा का चेहरा शैतानी भरी खुशी से छलक उठा। बोली, 'ऊ हू ! बल्कि यह कहो भाभी कि वह अभागा कौन है जो रेखा जैसी लडकी के

प्यार मे फस गया।'

'ओह। तो दूसरी तरफ से भी बात पक्की है।'

'लगता तो ऐसा ही है।'

'जरूर तुम्हारा सहपाठी होगा।'

'यह तो ज्योतिष विद्या न जानते हुए भी बताया जा सकता है।'

सुमित्रा रेखा की लम्बी चोटी खीचती हुई बोली, झट पट नाम बोल लडके का।'

'नाम ? नाम से तुम्हारा क्या लेना देना ?'

'सुनना चाहती हू। नाम सुनने से ही मालूम चल जाता है कि वह किस श्रेणी का मनुष्य है।'

रेखा ने हाथ बढाकर टेबुल पर रखे कागज के टुकडे को लेकर उस पर कुछ अक्षर बैठा दिए। उसे देखते ही सुमित्रा चौक पडी।

'यह क्या है रेखा ?'

'बहुत ज्यादा हैरान हो रही हो भाभी ?'

'लेकिन भई। क्या पूरे बगाल मे तुम्हारे मन के लायक कोई मीत नही ? हजारो मील दूर पजाब मुल्क मे जाकर तुम्हारी आखें मिली ?'

रेखा कुछ बोली नही। चुपचाप सर झुका कर बैठी रही।

सुमित्रा भी स्तब्ध होकर थोडी देर बैठी रही। फिर गभीर स्वर मे बोली, 'कैसी विपत्ति मे तुमने डाला है, समझ मे नही आता कि क्या करू ?'

'विपत्ति ? किस पर कैसी विपत्ति आ पडी है ?' रेखा बोली।

'तुझ पर ही। और किस पर? खैर। तेरे लिए तो विपत्ति ही सम्पत्ति है। पर मा, पिताजी ?'

रेखा उदास मुस्कान लिए बोली, 'लडकी होकर पैदा होना ही तो एक विपत्ति है।

'यह तो सभी जानते है। लेकिन एक बात सोचो रेखा ! आज तुम अगर हठ कर बैठती हो तो बाहर के लोगो के सामने पिताजी को किस कदर अपमानित होना पडेगा, तुमने सोचा भी है ?'

'पिताजी की तरफ से वकालत करने आई हो ?'

'नही, वकालत के लिए नही तुम्हे उनका हाल बताने आई थी ।'

रेखा थोडी देर चुप रहकर बोली, 'ठीक है। सिफ आज भर के लिए तुम लोगो की बात मान लेती हू। पिताजी को दूसरो के आगे अपमानित न होना पडे, इसी तरह से मैं उनके सामने जाऊगी। लेकिन तुम लोगो को भी मुझे वचन देना होगा कि इस मामले को लेकर दूसरी बार अपमानित होने का मौका फिर मुझे कभी नही दिया जाएगा। आज ही इस बात का अतिम निणय हो जाना चाहिए।

सुमित्रा गभीर, मगर सयमित होकर बोली, 'मेरा यह सब कहना कोई माने नही रखता। मेरे निर्देश से इस गहस्थी का काम-काज चलता भी नही है। मा ने बताया कि बुलाए गए मेहमानो के सामने तुमने आने से मनाकर दिया है, यह सुनकर पिताजी सर पकडकर बैठ गए हैं। इसलिए मैंने सोचा अगर तुम्हारे मन मे मेरे कहने की कुछ कीमत हो तो ।'

'तुम नाराज हो गइ भाभी ?'

'नही। नाराज क्यो कर होने लगी। जिस बात से मुझे कोई नुकसान नही, मैं उस मामले को लेकर गुस्सा करूगी, इतनी नादान भी मैं नही।'

रेखा के व्यवहार से शशि बाबू ने थोडी चैन की सास ली पर उन्हें आश्चय भी कुछ कम नहीं हुआ। रेखा के व्यवहार मे उन्ह कही कोई विद्रोह नही दिखाई पडा था। फिर मदाकिनी क्या कह रही थी ?'

मन ही मन खुद किसी नतीजे पर पहुच कर शशि बाबू हस भी पडे। सोचा, साडी गहनो की बात बेटी को रास नही आई होगी। लडकियो का मामला ही कुछ ऐसा है।

लडके वालो को लडकी पसद आ गई। उनके जाते ही शशि बाबू खुशमिजाज होकर बोले, 'क्यो भागवान, सब कुछ ठीक रहा न ? उस समय तो मैं तुम्हारी बात से घबरा ही गया था। रेखा बिटिया कितनीभोली बच्ची की तरह आई। वो तुम जो कुछ सोच रही थी वैसा कुछ है नही।'

मदाकिनी शात भाव से बोली, तो तुम क्या सोच रहे हो ?'

'जो मैं सोच रहा हू, सुनने से तुम्हारी महिला कुल ईर्ष्या से झुलस जाएगी। खैर, चिंता की कोई बात नही। लडकी उन्ह बेहद पसद आई है। अगले महीने शादी पक्की कर दू, क्या कहती हो ?'

'बच्चो जैसी बातें मत किया करो। रेखा की शादी के मामले मे तुम्हारी दखलअदाजी नही चलेगी। आज चुपचाप लडके वालो के सामने जाकर बैठ गई, इतनी-सी बात के लिए तुम्ह इतना खुश होने की जरूरत भी नही। वह तुम्हारा मान रखने भर के लिए ही निकली थी। अपने लिए दुल्हा उसने खुद ही तय कर लिया है।

शशि बाबू मानो चलते चलते कही ठोकर खा गए हो। रेखा अभी शादी करना नही चाहती थी, यह बात तो समझी जा सकती थी सहनीय भी थी, लेकिन रेखा ने अपने लिए वर का तलाश कर लिया था, यह बाप के लिए सह पाना कठिन था।

शशि बाबू गरज उठे, क्या कहा ? आखिर कहना क्या चाहती हो ?'

'जो कुछ मैंने कहा, तुमने ठीक-ठीक सुना भी है। नहीं तो दिमाग इतना गरम नही हो जाता।'

'चुप रहो। बको मत।'

'मैं तो चुप ही हू।'

शशि बाबू बौखला उठे, 'चुप भी हो ? क्या मैं जान सकता हू तुम घर की गृहिणी हो या नही ? घर के भले बुरे के लिए तुम्हारी भी कोई जिम्मेदारी है या नही। लडके लडकियो को तुम अनुशासन मे बाध नही सकती थी ? तुम उनकी मा हो या नही ?' मदाकिनी पहले जसे ही स्थिर भाव से बोली, 'हा, मैं उनकी मा हू, इस जिम्मेदारी का बोध मुझमे है, इसीलिए तो जो सही नही है, जो अनुचित है, उसको लेकर मैं उन्ह फटकार नही सकती।'

'अनुचित ?' शशि बाबू हतबुद्धि से खडे रहे। बोले, 'मैं तुम्हें अनुचित बात के लिए उन्हे अनुशासन मे रखने के लिए बोल रहा हू ? लडकी मुह पर बोलेगी, तुम्हारे पसद के लडके से मैं शादी नही करूगी। अपने पति का निवाचन मैंने खुद कर लिया है' और फिर भी हम उन्हे कुछ कह नही सकत ?'

मदाकिनी दढ भाव से बोली, 'नही । हम उन्हे कुछ नही कह सकते । खुद जिस पेड को लगाया उसका फल तो तुम्हे खाना ही पडेगा । पेड किसी एक तरह का है, उससे तुम दूसरे तरह के फल की आशा करोगे तो वह कहा से मिलेगा ? लडकी को आधुनिक शिक्षा के साचे म ढालकर उससे पुराने जमाने के व्यवहार की उम्मीद रखोगे—यह तो हो नही सकता न ।'

'नही हो सकता है ?

'नही । हर चीज को जरा खुली नजर देखना सीखो । लडकी जवान है, पढी लिखी है अपना भला-बुरा स्वय समझ सकती है । अच्छे अच्छे लडको से मल जोल है, उनमे से यदि किसी पर उसका मन टिक जाए तो क्या कर सकते हो ।

'उसे रोकना होगा ।'

मदाकिनी विद्रोह और उद्यत भाव से बोली, 'क्यो रोकना होगा ? आखिर क्यो ? हम लोग अगर सही समय पर लडकी की शादी नही करते तो क्या वह लडकी का अपराध है ? कुआरी लडकी है, इसलिए अपने कुआरे मन को घर के लोहे के सदूक मे बद कर दुनिया म घूम फिर रही है, ऐसी बात तो है नही । उम्र का भी अपना एक तकाजा होता है ?'

शशि बाबू असहिष्णु होकर बोले, 'इसलिए इसलिए, इसलिए यह सब कहना अब फिजूल है । जो अवश्यभावी है उसे मान लेना ही ठीक होगा । जिसके साथ उसके मन का मल बैठा है हु ! कहा है वह लडका ? लडके का कोई तफया होगा ।'

'नही । उसका सहपाठी, कोई पजाबी लडका है ।'

'पजाबी लडका ?' शशिबाबू अब बिल्कुल ही धैर्य खो बैठे । वे चिल्ला पडे, यह नाम जुबान पर लाते हुए तुम्हे शम नही आई ? सिनेमा देख-देखकर तुम्हे भी आधुनिकता के रोग ने पकड लिया है या फिर पागल हो गई हो ? बगाली की लडकी होकर ।'

'देखो । आधुनिकता का कौन-सा लक्षण मुझमे तुम्हे दिखाई पडा, मैं नही जानती । पर यह सच है कि मैं अब सारी चीजें खुली आखो से देखना चाहती हू । खानदान राशि, जाति गोत्र आदि को मिला जुलाकर किसी को किसी से प्रेम नही होता । हम लोगो को चाहे कितना ही नापसद क्यो न

हो, हम अपनी लडकी को उस रास्ते पर जाने से रोक नही सकते।'

'रोक नही सकते।' शशि बाबू भीषण चेहरा बनाकर बोले। 'अच्छा! रेखा! रेखा को बुलाओ। मैं उसी के मुह से सब सुनना चाहता हू।'

'नही भैया नही। मैं तुम्हारी एक नही सुनूगी। मैं भी तुम्हारे साथ साथ जाऊगी।

मुकुद बाबू से बच्चा जैसी लाड जताती थी मदाकिनी। वह बोली, 'यह मौका यदि हाथ से निकल गया तो इस जनम मे तो मेरा तीथ-वीथ तो कुछ होगा नही। अपने बहनोई को तो तुम जानते ही हो। घर से बाहर एक कदम रखना नही चाहते। इतनी उम्र बीत गई। गया, काशी, व दावन तो बहुत दूर का रास्ता है—घर के पास बाबा तारकेश्वर का मदिर कोई घटे भर का रास्ता है, वहा भी जाकर दशन नही कर पाई। तुम्ही बताओ—अपना दुखडा किसके आगे रोऊ?

मुकुद बाबू बहन के ऐसे बोलने पर सकुचित हो उठे। बोले, 'मैं तुम्हारी बात समझ रहा हू। और तुम्हे ले जाने मे मुझे आपत्ति भी क्यो होगी? लेकिन एक बात है—मैं ठहरा मद आदमी, दस जगह घूमता फिरूगा। कही खाना कही सोना, सब उल्टा पलट सा रहेगा। बाहर जाकर नियम से रहना मुश्किल है। तरह तरह की असुविधाए, कष्ट—इसलिए कह रहा था'

मदाकिनी आहत भाव से बोली, 'रहने दो भैया। मुझे लेकर तुम्हे असुविधा उठाने की कोई जरूरत नही। और कष्ट का अथ मुझे मत समझाओ। छत्तीस सालो से गहस्थी सभाल रही हू। कोई अमीर घर भी नही है। साधारण गहस्थी है। असुविधा और कष्ट मुझे मत समझाओ। हू!'

मुकुद बाबू व्यग्र हो उठे। बोले, 'क्या मुश्किल है। जसे मैं कुछ समझता ही नही। मेरा तो केवल इतना कहना है कि मैं ठहरा घुमक्कड

आदमी। कहा रहूगा, क्या खाऊगा, किसी चीज का काई इतजाम तो हो नहीं सकता।'

इतजाम की जरूरत भी क्या है। धमशाला म नही ठहरा जा सकता है क्या ? भारत के हर तीथ म धमशाला जरूर होती है।'

'वो तो होती है। पर बहन ! तू ता बडी छुआछूत मानने वाली है, बडी विचार करने वाली है। गोबर गगाजल, छूत अछूत ।'

मदाकिनी बोली 'ज्यादा सोच सोचकर परेशान होने की जरूरत नही है भया। साथ ले जाकर एक बार देखो तो। तीथ मे जाकर मन अपने आप ही पवित्र हो जाता है। कोई विचार मन म नही आता। मैं अगर तुम्हारे साथ रहूगी तो तुम्ह भी बाहर जहा-तहा खाने के लिए बहकना नही पडेगा। ऐसा इतजाम करके निकलूगी कि चाहे किसी भी जगह उतरू, झट आलू की टिकिया, दालपुरी, पोस्त पकौडी आदि बना दूगी।'

कहना फिजूल है कि ये तीनो ही चीजें मुकुद बाबू को विशेष रूप से प्रिय थी। यह सुनते ही वे उत्साह से बोले, 'ता यह बात है ? तब तो तुझे साथ ले चलना ही होगा। आलू की टिकिया, पोस्तोदाने के बडे और दाल पूरी खिलाएगी। पक्की बात है न ?'

''बस करो भैया। मजाक छोडो। पहले तुम यह बताओ कि मुझे साथ लेकर चल रहे हो कि नही ? और यदि झमेला समझ रहे तो और बात है। रुपए पैसा के बारे म तुम्ह ।'

'अर बाबा ! पैसो के लिए कौन मरा जा रहा है। मेरी चिंता तो शशि भूषण को लेकर है। दो महीने के लिए तुम घर छोडकर रहागी ता शशि भूषण को तकलीफ नही होगी ?'

'उनकी सुख-सुविधाओ का ख्याल रखते-रखते ही तो मैंने अपने बाल सफेद कर लिए मदाकिनी खिन्न भाव से बोली। 'मेरी कीमत समझता ही कौन है ? कभी-कभी इच्छा होती है कि दो चार दिनो के लिए मरकर समझा दू कि किसकी क्या कीमत है।'

मदाकिनी की बात सुनकर मुकुद बाबू ठहाका मारकर हस पडे। बोले, 'दो चार दिनो के लिए मरकर ? खूब कहा है तून ! वाह ! वाह !'

मदाकिनी भी हस पडी। बोली, 'मर गई तो सब कुछ तो खत्म ही हो जाएगा। मेरे बिना घर की हाल का क्या हुआ, कैसे जानूगी ?'

मुकुद बाबू मुस्कराकर बोले, 'घर गहस्थी ठीक ठाक ही चलती रहेगी मदा। किसी के बिना कुछ नही अटकता। एक राजा चला जाता है, बदले में दूसरा राजा गद्दी पर आकर बैठता है। बगाल का सिंहासन खाली नही रहेगा। बस शशिभूषण का हाल थोडा बेहाल हो जाएगा।'

मदाकिनी अपनी हसी छुपाकर गुस्से का नकली भाव दिखाकर बोली, 'जाओ भैया, हर बात मे मसखरी करते हो। तुम्ही बताओ न लगातार एक समान-सी घर गहस्थी सभालने मे एकरसता नही आ जाती क्या ? पुरुषो का काम चाहे कितना ही कठिन क्यो न हो, फिर छुट्टी का एक नियम है। पर हम औरतो को काम काज से कभी छुट्टी मिली है।

मुकुद बाबू सस्नेह बोले, 'सच कह रही हो बहन ! विश्राम एव विविधता—जीवन मे दोनो ही चीजो की जरूरत है। ठीक है। तू अपनी गहस्थी से छुट्टी निकाल सकती है तो चल, पर बीच मे एक ही दिन तो रह गया है। तेरे कपडे-लत्ते, सामान वगैरह, और वो सब—गोबर गगाजल। और फिर मेरे लिए आलू की टिकिया आदि का भी तो इत-जाम करना पडेगा।'

मदाकिनी जी भरकर हसकर बोली, 'भैया मैं सारा इतजाम मिनटो मे कर लूगी। तुम देख लेना। कल शाम की गाडी है न ?'

'नही ! शाम को नही ! रात को। साढे नौ बजे की रात की गाडी है।'

'फिर तो कोई बात ही नही। अच्छा भैया, कहा कहा जाएगे हम लोग !' बडी खुश थी आज मदाकिनी।

मुकुद बाबू बोले, 'पहले व दावन, मथुरा, हरिद्वार, ऋषिकेश, लक्ष्मण झूला। फिर जयपुर, चित्तौड, अजमेर पुष्कर। इन्ही जगहो पर जाएगे। वसे मन मे तो द्वारका जाने की भी इच्छा है।

यह सुनकर खुशी के मारे मदाकिनी की आखो मे आसू छलक आए। बोली 'मेरा क्या इतना भाग्य होगा भैया ?'

'बस ! शुरू हुई न तुम्हारी औरतो जैसी बात। अरे होगी क्यो नही ?

पर हा, 'शशि भूषण से राय ले लेना।'

'राय क्या लेनी है ? अभी भी इतनी उम्र मे पराधीन होकर रहना होगा क्या ? सीधे कहूगी—मैं भैया के साथ तीर्थ यात्रा पर जा रही हू बस।'

'बस ! बस ! फिर ता कोई समस्या ही नही। छप छुप कर तू भी आधुनिक बन गई। कहकर मुकुद बाबू जोर से हस पडे। फिर दीवार से टिकी घडी को उठाकर चलते हुए बोले, 'इतनी देर रहा पर शशि भूषण से भेंट नही हुई। कहा गया है वह ?'

पूछो मत भया। इन दिनो पार्क मे घूमना उनका एक काम सा बन गया है। पाच जन और भी पहुचत होगे वहा।'

मुकुद बाबू मदाकिनी को रोक कर बोले, 'आह हो ! पार्क ? अवकाश प्राप्त अफसरो का स्वर्ग। अच्छी बात है।' कह कर मुकुद बाबू उठ पडे।

मदाकिनी के जाने की बात पर पहले तो वे थोडा सहम से गए थे, लेकिन अब उन्हें खुशी हो रही थी। चलते-चलते वे थोडा मुस्कराते, कुछ सोचते, फिर मुस्कुराते।

मुकुद बाबू के जाने के बाद थोडी देर तो मदाकिनी चुपचाप बठी रही। झोक झोक मे उसने जाने की जिद तो कर ली थी, पर अब दिमाग मे तरह तरह की चिताए भीड करने लगी। शशि भूषण के साथ सघर्ष होना ही था। खैर उसका किया भी क्या जा सकता था ? सचमुच ही उसका मन उखड गया था। गृहस्थी मे बडी ही एकरसता आ गयी थी। रेखा की शादी होगी, इस एक खुशी की उम्मीद बनी हुई थी पर रेखा ने उसे भी उसकी भी मिटटी पलीद कर दी थी। लडका बगाली हो या पजाबी, और शादी जैसे भी हो हा तो सही, पर अभी तो उसकी कल्पना भी दूर थी। एम० ए० पास करने के पहले ये शादी करने वाले नही थे। दोनों साथ साथ पढ रहे थे, रोज भेंट हो ही रही थी, फिर जल्दी किस बात की थी ?

आज परेश की शादी हुए कई साल बीत गए पर घर मे एक बच्चा नहीं आया था, उल्टे बहू कधे पर थैला लटकाकर दफ्तर जा रही थी। गृहस्थी का रग रूप ही कुछ नीरस बेरग सा हो गया था। सोचते-सोचते

मदाकिनी को अपना बचपन याद आया।

ससुराल हो या मायका, घर भरा-भरा सा लगता था। घर के सभी लोग एक साथ एक जगह रहते थे। उसके पिताजी रात को बेटे तथा भतीजो के साथ एक साथ खाना खाते थे। बडे-बडे दफ्तर जाने वाले लडके फिर भी वे पिता के सामने डरे-डरे से रहते थे। रात के आठ बजे के बाद घर से बाहर कोई नही होता था। और मदाकिनी के अपने लडके ? उनसे ऐसी बातें कौन कहे ? लडको ने घर मे ऐलान कर रखा था, खाने की मेज पर हमारे लिए ठहरने की जरूरत नही। खाना ढककर रख दिया करो। पिताजी हम लोगो के लिए ठहरे रहें यह कोई बात नही ? वे काफी बडे हैं। रात को देर से खाना खाने से उनकी तबियत बिगड जाएगी, इसलिए रोज हम भी उनके साथ जल्दी खाना पडेगा, यह तो हम लोगों पर एक तरह का जुल्म है।'

परेश तो सप्ताह मे तीन चार दिन पत्नी के साथ ससुराल चला जाता था, बाकी के दो दिन सिनेमा। यह सब देख सुनकर मदाकिनी को कभी-कभी तो जहर खाने का जी करता था।

उस युग मे यानि उस समय की औरतो की दुनिया मे एक अनुशासन था, डिसिपलिन था। जब मर्जी खाना, सोना, घूमना वे सोच भी नही सकती था। रात मे सास और ससुर जी जब तक सो नही जाते तब तक बहू के सोने के कमरे मे जाने का सवाल ही नही उठता था। इन सारे नियमो को मदाकिनी बिना प्रतिवाद किए मानती भी तो आयी थी। खाना खाने का भी नियम था। घर की सभी महिला सदस्याए एक साथ पतीले कडाहियो, भगोनो तथा और भी सारे बर्तनो के ढेर को सामने रखकर खाना खाने बैठती थी, और खाते खाते तरह-तरह की गप्पें किया करती थी।

यह सब सोचते-सोचते अनजाने म ही मदाकिनी न एक गहरी सास भरी। कुछ भी हो, यह तो सच था कि एक साथ खाना खाने और एक दूसरे की प्रतीक्षा करने मे परिवार बधा रहता था।

'मा इस तरह अकेली क्यो बैठी हो।' बाहर से आते ही परेश ने पूछा, 'क्या हुआ ? तबियत तो ठीक है न ?'

मदाकिनी तुरन्त उठ पडी। बोली, 'नही नही, तबियत क्यो खराब

होने लगी ? भैया आए थे, अभी-अभी गए हैं। यो ही बैठी थी।'

'मामाजी आए थे ? अभी-अभी चले भी गए ?'

'हा वह रहे थे, कुछ खरीदारी करनी है—।'

हा खरीदारी आदि तो करनी ही पडेगी। लम्बी यात्रा पर दूर दूर जगहो पर जा जो रहे है। जाने कितनी ही चीजो की जरूरत पडेगी।'

मदाकिनी रहस्यमय हसी हसकर बोली—'इस लम्बे सफर मे साथ मैं भी तो जा रही हू रे !'

परेश विस्मय के साथ बोला, 'इसके माने ?'

मदाकिनी धीरे से बोली 'इसके माने हैं कि भैया के साथ मैं भी जा रही हू।'

परेश चौका तो नही, पर थोडा सहम गया। फिर अपने को सभालकर भी मिक्कोडकर बोला 'अच्छा ? एकाएक ही प्रोग्राम बना लिया मा ?'

'एकाएक ही समझो। आराम से तो यह काम होता भी नही।' क्या तुम लोगो की गहस्थी मे जीवन भर मैं ही चक्की चूल्हा सभालती रहूगी ? परलोक के लिए भी तो कुछ करना चाहिए।'

रसोई सभालने के नाम पर परेश की भौ और भी तन गयी। इस तरह की बात उठने पर उसे लगता था जसे उसकी पत्नी सुमित्रा की अक्षमता पर कटाक्ष किया जा रहा है। इसलिए व्यग से उसने भी कहा, 'परलोक के लिए कुछ करोगी क्या नही ? अवश्य करोगी। इतनी आसानी से अगर स्वग का टिकट खरीदा जा सकता है तो मौका बिल्कुल नही छोडना चाहिए।

मदाकिनी बेटे के व्यग को भाप गयी, और उसी ढग से अपना जवाब भी दन ही आ रही थी कि शशि बाबू आ धमके। एक नजर मदा और पुत्र पर डालकर उन्होने कहा, 'मामला क्या है ? एकाएक स्वग के टिकट खरीदने की किसकी जरूरत आ पडी ?'

परेश गभीर आवाज म बोला, 'मा को। मामाजी के साथ तीर्थों मे घूम घूमकर ।'

शशि बाबू भौंचक्कर बोले, किसके साथ ? कहा-कहा घूमकर ?'

'मामाजी तीथ जा रहे हैं इसलिए मा ने भी उनके साथ जाना निश्चय

कर लिया है।' परेश ने कह कर शशि बाबू का कौतूहल शात किया।

परेश की बातो से व्यग की बू आ रही थी। मानो मदाकिनी का तीर्थ जाने का प्रस्ताव तमाशा था। थोडी देर पहले ही इन लोगो के लिए मदाकिनी का मन उदास हो रहा था। वह चिंतित हो रही थी कि उनके बिना इन लोगो का क्या हाल होगा। पर अब लडके की बात सुनकर उसके तन-मन मे आग सी लग गई। वह कुछ बोले बिना चुप कर गयी।

मदाकिनी का यह परिवतन शशि बाबू नही भाप सके। उन्होने ऊची आवाज मे टिप्पणी की,'मा भी जा रही है? जा रही हैं' का क्या मतलब? यह क्या यहाँ से कालीघाट जाना है कि वहा और चल पडे?'

मदाकिनी तेज आवाज मे बोली, कहने मात्र से ही जाया नही जा सकता, यह मुझे भी मालूम है। इसके लिए पहले तुम्हारे साथ तकरार होगी, लडको के पैर पकड कर उन्ह मनाना पडेगा, तभी तो जाना हो सकता है। और जाने के लिए जो कुछ इतजाम की जरूरत है वह भी तो मुझे ही करना पडेगा।'

शशिबाबू व्यग से बोले, 'बडी प्रगतिशील हो गई हो। सब कुछ तुम ही कर रही हो! खैर! तीथ मे जाकर क्या होगा? स्वर्ग के लिए सीढी बन जाएगी?'

मदाकिनी गभीर भाव से बोली, 'आदि-अनादि युग से लोग तो इसी भावना से तीथ करते आए है। चित्रगुप्त के दरबार मे मेरे पक्ष म जाकर अपनी तरफ से तो कोई कुछ कहेगा नही।'

शशि बाबू का मिजाज बिगड गया। गुस्से से बोले, रहने दो। ऐसी बातें सुन-सुनकर मेरे कान पक चुके हैं। मैं पूछता हू, घर की गृहिणी दो महीने के लिए घर से बाहर रहेगी, तो काम कैसे चलेगा? बहू अभी बच्ची है—।'

'बच्ची है।' मदाकिनी भी अपना गुस्सा और नही सभाल सकी। तीखे स्वर मे बोली, 'बच्ची है, वह कसे? चौबीस-पचीस की हो गई है, अभी भी बच्ची है? हम लोग भी कभी इस उम्र के रहे थे, यह शायद तुम भूल गए हो। कभी किसी ने सोचा कि मैं भी कभी छोटी थी?'

शशि बाबू नाराजगी से बोले, 'जैसा युग वैसी व्यवस्था होती है। इसमे

लिए किसी तरह की तुलना करने की जरूरत नही है।' तुमने कभी दफ्तर म काम किया है ? और फिर दफ्तर की मेहनत के बाद, तुम लोगो की तरह रसोई बसोई सब्जी भाजी काटना, मसाले तैयार करना जसे फालतू काम कधे पर पडने स ।'

फालतू के काम ?

प्रौढा मदाकिनी का श्यामल रग भी लाल हो उठा। उठकर खडी होकर बोली, 'तुम लोगो के साथ किसी प्रकार का तक मैं करना नही चाहती पर एक बात ह शिक्षा का समय मृत्यु के समय तक होता है। आज मुझे एक शिक्षा मिली। जीवन भर तो अपने को फालतू कामो मे ही गवाती रही, इसलिए अब छुट्टी लूगी। दफ्तर मे काम करने की विद्या तो मा बाप न सिखाई नही थी वह तो अब आएगी भी नही। ईश्वर का नाम लेन म ज्यादा शिक्षा की जरूरत नही पडती, बाकी जीवन नही करूगी।' कहती हुई वह चली गई।

मदाकिनी के चले जाते ही शशि बाबू के सर पर मानो आकाश टूट पडा। क्या कहना चाहते थे, क्या हो गया। वे तो मदाकिनी का जाना रोकन के लिए ही कुछ कहना चाहते थे, पर कहते कहते सारा कुछ उलट पुलट हो गया। अब मदाकिनी की नाराजगी को तोडना मुश्किल काम था। लगता था बिना गए छोडेगी नही। अब क्या होगा ? सोचते-सोचते शशि बाबू जाकर भडार घर के कोन म जाकर खडे हो गए। मदाकिनी समझ गई, पर देखकर भी अनदेखी कर गई और भडार घर म रखे डिब्बा को साफ करन लगी।

इस उम्र मे मतान की भाषा मे मनाना मुश्किल होता है पर ऐसा कठिन काम शशि बाबू का करना था। इसलिए शशि बाबू गले से खखार कर, काठ की हसी हसकर बोले, 'खूब तो सुनाकर चली आयी, अब स कराओगी नही अब फिर उसी काम म फँसी आलतू फालतू का काम लग पडी ?

कहना फिजूल है, मदाकिनी चुप ही रही।

कुछ भी कहो, तुम्हारा मिजाज आज कल बहुत खराब रहन लगा है।'

मदाकिनी यह सुर पहचानती थी। मदाकिनी को पराजित करने का सुर था यह। इसलिए मदाकिनी कठिन बनी रही। फिर शशि बाबू इधर-उधर ताककर भडार घर के अदर घुस पडे। उसके बाद नीची आवाज मे बोले, 'मजाक करने पर तुम इतना नाराज हो जाओगी, मैं समझ नही पाया। परेश सामने था। बहू की तरफ से यदि मैं कुछ कहता नही तो अच्छा थोडे ही लगता, तुम्ही सोचो ?'

मदाकिनी अब मुह घुमाकर शान्त भाव मे बोली, 'लेकिन यह सब मुझे सुनाने की जरूरत क्या है ? दस के आगे मुझे नीचा दिखाने से यदि अच्छा लगता हो तो वैसा ही करना, मैं और कुछ नही कहूगी।'

शशि बाबू निराश होकर बोले, 'तुम बडी नासमझ बनती जा रही हो मदाकिनी ! तुम तो जानती ही हो जैसी रखा वसी बहू। दोनो ही बराबर की नालायक। तुम्हारे जाने का मतलब, मैं तो यहा का नही रहूगा।

अब मदाकिनी के लिए अपने को और सभालना मुश्किल था। बडी मुश्किल से हसी रोककर बोली, 'बमतलब की बाते कहने की जरूरत नही। अगर मेरे नही जाने से ही गृहस्थी की शाति बरकरार रहती है तो मैं नही जाऊगी।'

'क्या मुश्किल बात है ! ऐसा मैंने कुछ क्या कहा ?'

'यही तो तुम्हारा कहना है, मैं कुछ समझती नही हू क्या ? तुम्हे जानना मेरे लिए अभी कुछ बाकी भी है ?'

'यही तो बात है।' शशि बाबू खुशी की हसी हसकर बोले 'तुम्हे छोडकर मुझे और कौन समझेगा, बोलो ? एक आध दिनो की बात और है, पर पक्के दो महीनो तक मुझे त्यागकर चली जाने पर—शायद वापस आकर हाथ की चूडिया और सिंदूर को खोना नही पडे —शशि बाबू मन ही मन समझ रहे थे कि उन्होने कोई बडी भारी मजाक की बात कह दी। पर मदाकिनी सुनते ही जल भुन गई। गुस्से से बोली, 'दुहाई है तुम्हारी। मुझे माफ करो और अब मुझे अधिक मत तग करो। तुम्हारी गृहस्थी छोडकर उसी दिन जाऊगी जिस दिन लडको के कधो पर चढने की हालत मे हूगी।'

इधर मान-स्वाभिमान का नाटक चल रहा था, दूसरी तरफ मुकुद बाबू सारी व्यवस्था कर कराकर, शाम ढलते ही सामानो के ढेर के साथ पहुच कर चिल्लाए, 'कहा है री मदा ! रेडी है न ? सिर्फ तीन ही घंटे रह गए है ।

मन्दाकिनी रोज पहनने वाली टसर की साडी डालकर मलिन चेहरे मे आकर सामने खडी है। मुकुद बाबू विस्मय से बोले, 'क्या री, कोई तयारी नही दिख रही है । पता है समय कितना रह गया है ?'

मदाकिनी स्वाभिमान भरी आवाज म बोली, 'मैं नही जाऊगी भैया ।'

नही जाएगी ? क्या कह रही है ? सारा इतजाम हो चुका है । टिकट हो चुका है । बर्थ रिजर्व हो चुकी है ।" मुकुद बाबू की विस्मय की सीमा नही थी ।

शशि बाबू कमरे से बाहर आकर भलेमानस की तरह बोले—'अच्छा इतनी सारी तैयारी हो चुकी है ?

सुनते ही मुकुद बाबू बोल पडे, 'तुम कहना क्या चाहते हो ? तुम्हारी धारणा म घूमकर लौटकर आने के बाद भी टिकट लिया सकता है ?'

असली बात है तुम्हारी राय नही है क्या ? मुकुद बोले—

'राय ! ' शशि बाबू दार्शनिक की हसी हसकर बोले 'मेरी राय की परवाह किसे है । अपराध सिर्फ इतना है कि वह गृहस्थी म चारो तरफ की झझटो और समस्याओ से घिरी हुई है, इस समय मदा घर छोडकर बाहर नही जाती तो ठीक रहता । बस इतना कहना था ।—अच्छा भई, एक बात बताओ । तुम खुद गगाजल की तरह सीधे हो, पर तुम्हारी बहन बिल्कुल तुमसे विपरीत नागकन्या के समान गुस्सैल क्यो है कहो तो ?'

पति के इतने नखरे मदाकिनी चुपचाप बर्दाश्त करती जाती इतनी उम्मीद उससे नही रखनी चाहिए, इसलिए वह भी बरस पडी 'चुप भी करो । ज्यादा बडाई की जरूरत नही । भैया सीधे होगे क्यो नही । उन्हे क्या मेरी तरह गृहस्थी की चक्की मे जलना भुनना पड रहा है । अच्छा भैया कहो तो ! पति बडे हैं, माननीय हैं, धर्म कार्य मे उन्हें मेरी सहायता करनी चाहिए या नही ? पर जब से इन्होने मेरे जाने की बात सुनी है ढूढ ढूढ कर मेरे जाने के रास्ते बद करने मे जुटे हैं ।'

मुकुंद बाबू पूरा नाटक समझ गए। मन ही मन हंसे, पर मुह से बोले, ऐसा थोडा बहुत करना ही पडता है। समझी ? पति पत्नी जब अधेड होकर घर के मालिक मालकिन बन जाते हैं तो गहस्थी के रगमच पर थोडा अभिनय करना ही पडता है। ले, तू अब बचकानी बात बद कर। चल सूटकेस सभाल। पर ठहर ! यह सब तू क्या करेगी ?' फिर उन्होंने पुकारा, 'बेटी सुमित्रा !'

सुमित्रा चुपचाप बाहर आकर खडी हो गई। सास ससुर की लडाई मे वह निरपेक्ष थी। जाने के मामले मे भी उसने कुछ भी नही कहा था। विपक्ष मे भी कुछ बोली नही थी। उसे मालूम था कि वह कुछ भी कहे, लोगो को बुरा ही लगेगा। अगर अपना मान भूलकर यह कहने जाती कि 'मा आपके जाने पर हम लोगो को बडी असुविधा होगी, मत जाइए।' तो मदाकिनी मुस्कुराती, पर सुना भी देती 'मुझे मालूम है मेरे साथ तुम लोगो का सिर्फ काम का रिश्ता है। मेरे सुख-दुख के लिए तो कोई सोचता नही।' हो सकता है यह भी कह दे। 'अब समझ आएगी आटे दाल का भाव क्या है। मैं इस गहस्थी को कैसे कैसे चलाती हू, किसी को मालूम तक नही होने देती हू। और अगर सुमित्रा सास के प्रति सहानुभूति जताकर कहती, 'मामाजी के साथ आप घूम आइए मा, ऐसा मौका बार-बार थोडे ही आएगा। हम लोग किसी तरह चला ही लेंगे तो सास स्वय से कहती, 'चला तो लोगी ही अच्छी तरह, वो तो मुझे अच्छी तरह मालूम है बहू ! मन ही मन घर की मालकिन तो हो ही'। मैं ही बीच मे बाधा बन कर अडी हुई हू—।' सुमित्रा ये सारी बातें समझती थी, इसलिए चुपचाप रहना ही सबसे अच्छा उपाय था।

मुकुंद बाबू बडे आदर के साथ बोले, 'आ गई बेटी ! अब एक काम करो तो जल्दी से अपने सास ससुर के दो बक्से तो जचा दो बेटी। और बिस्तर भी। तुम लोगो के पास ढग का बिस्तरबद है या नही, मुझे मालूम नही था, इसलिए एक और बिस्तरबद मैं लेता आया हू। ले आओ और झटपट तैयारी करवा दो। और मधु को देख नही रहा हू। छोकरा गया कहा ? अरे ओ मधु ! उसे भी काम मे लगा दो। तीन ही घटे तो रह गए है। समझी बेटी, तुम्हारी सास तो बिल्कुल निकम्मी है।' मुकुंद

बाबू मेल ट्रेन की तरह बातें करते थे। बीच में कोई कुछ कह सके, इसका मौका ही नहीं मिलता। सभी हक्के-बक्के से खड़े रहे।

सुमित्रा मन ही मन व्यंग से हंसी। सोचो 'ओह! दोनों ही जा रहे हैं। अंदर ही अंदर सब तैयारी थी, पर इतनी लुका छिपी की भी क्या जरूरत थी? बूढ़े बूढ़ी तो तीर्थ वगैरह जाते ही रहते हैं। ये ही लोग गृहस्थी सभाले लटके हुए हैं। इन्हें तो एक तरह की बीमारी। अच्छा ही हुआ कि दोनों ही जा रहे हैं। एक जाती, दूसरा रहता तो जीना मुश्किल कर देता। मन की बात सुनाई नहीं देती, यही बचाव था।

मुकुन्द बाबू कहते ही रहे और देर मत करो बहू, काफी देर हो चुकी है। सास की आज्ञा की प्रतीक्षा की जरूरत नहीं। मेरी राय ही आखिरी राय है। मैं उसका बड़ा भाई हूं समझी!'

मुकुन्द बाबू के ठहाके से सारा कमरा गूंज उठा। सुमित्रा धीरे से कमरे से बाहर निकल गई। मन्दाकिनी समझ गई—भैया ने एक किस्म का जाल बिछाया था पर वह क्या कहे यह न समझकर चुप ही रही।

शशि बाबू हक्के बक्के होकर पूछ बैठे, यह क्या है भाई?'

'कौन सी बात?'

यही, मर जाने की बात?'

मुकुन्द बाबू सहज भाव से बोले 'जो स्वाभाविक और उचित है, वही मैंने किया है। तुम्हारी उम्र भी तीर्थ करने की नहीं हुई क्या?'

उफ! उम्र की बात कर कौन रहा है। इस युग में तो जवान लोग ही अधिक घूमते हैं। क्या कहते हैं कि—केदार बद्री, मानस कैलाश अमरनाथ पहाड़ इन रास्तों में तो नौजवान लड़के लड़कियों की ही भीड़ रहती है। बात और कुछ नहीं, लेकिन इतने कम समय में एकाएक—।

मुकुन्द बाबू अपनी आदत के अनुसार बीच में ही टोककर बोले, 'इससे भी कम समय की सूचना में और भी सुदूर तीर्थ पर चलना पड़ जाता है शशि भूषण! उसके आगे यह तो कुछ भी नहीं। और हम लोगों को वैसे चाहिए भी क्या? कुछ कपड़े लत्ते, कम्बल, तकिया आदि बस।

मन्दाकिनी ने इतनी देर के बाद मुंह खोला। बोली 'सोच रही थी अकेले तुम्हारे साथ घूम फिर कर थोड़ी चैन की सांस लूंगी, पर तुमने तो

पहेरदार को भी साथ ले लिया ?'

मुकुद बाबू मुस्कुराकर बोले 'अरी तू समझी नही। विदेश मे आदमी का बल बहुत बडा बल होता है। यही सब सोच समझकर मैंने शशि भूषण का भी टिकट लिया है। मान ले किसी दिन मेरी तबियत कुछ खराब हो गई तब तू तो मुश्किल मे पड जाएगी न ?'

'हे भगवान। तुम भी हद की फालतू की चिंता कर डालते हो मया ?'

'नही रे मदा। असल म मैं व्यावहारिक बुद्धि सम्पन्न व्यक्ति हू।'

शशि भूषण अब भी थोडी आनाकानी कर रहे थे। बोले 'लेकिन भई, यह तो कोई काम की बात नही हुई। मालिक मालकिन घर गृहस्थी छाड नाचते फिरें—आजकल के दिन भी खराब है। हालाकि दिन किस मामले मे खराब है इसका उदाहरण शशि बाबू नही दे सके।

मुकुद बाबू गभीर हसी हसकर बोले, हा रे शशि भूषण अपने दिन खत्म होने पर बाकी के आगे आने वाले दिन खराब ही लगते है। देख लेना, वे लोग ठीक तरह से ही चलाएगे, बल्कि तुम लोगा से कुछ और अच्छी तरह ही चलाएगे, गृहस्थी मे नए कदम रखने वालो के कधो पर भी कभी कभी जिम्मेदारी देनी चाहिए। समझ म आयी बात ? नही तो उन्ह जिम्मेदारी का एहसास भी कैसे होगा ? इतनी अधिक चिंता नही करनी चाहिए। ज्यादा सोचने पर उन्ह चोट पहुचती है व विद्रोही बन जाते है। तो अब जल्दी करो। इस पर आगे बातें ट्रेन मे बैठकर होगी। जल्दी स कुछ खा पी लो। मदा ! तू इस साडी मे तो जाएगी नही। जल्दी स दूसरी बदल ले।

शायद जीवन मे पहली बार पति पत्नी साथ खाना खाने बठे। मदाकिनी धीमी आवाज मे आखो मे नकली क्रोध जताकर बोली, क्या तमाशा किया तुमने कहो तो ? भैया क्या समझेंगे ?'

शशि बाबू ने मूछो का आड से हसकर जवाब दिया, 'भैया को जो कुछ समझना था, ठीक ही समझ गए है।'

पूरे दो महीने तो नही, करीब एक महीने और बाइस दिन के बाद

शशि बाबू पत्नी के साथ घर लौट आए। इतने कम समय मे ही पति पत्नी दोनो के स्वास्थ्य म काफी सुधार हुआ था। दोनो ताजे दिख रहे थे। जगह-जगह की हवा और रहन के अनियम के बावजूद भी वे अच्छे लग रहे थे। सिफ हवा पानी के बदलाव से उनके स्वास्थ्य म सुधार हुआ था, ऐसी बात नही। एकरसता के जीवन मे नए वातावरण की भी जरूरत पडती है।

घर लौटकर शुरू के कई दिन अच्छे ही लगे। वे कहा कहा गए, क्या क्या देखा ? लडके, बहू, बेटी सभी उनस कौतूहल स पूछ रहे थे। यह बाकई सूझ की बात थी। उनके किसी मामले म उन्होने अब तक इतनी दिलचस्पी नही दिखाई थी। पर उत्साह के तुरत बाद थकावट महसूस होती है। कौतुहल खत्म हुआ उत्सुकता भी शेष हुई। मदाकिनी के भ्रमण की यादें भी धूमिल पडती गई। और फिर धीरे धीरे वह गहस्थी के भवर म फँस गई। और इस शुरुआत मे तो झमेला उठ खडा हुआ। थाने के बाद मदाकिनी हर बक्त ढूढती फिरती कि उसकी अनुपस्थिति म गहस्थी मे क्या क्या कमी आयी थी। हर जगह उस गदगी नजर आती और साथ म वह टिप्पणी करने से नही चूकती। जहा बारह आने कहने से काम चल सकता था, वहा उन्नीस आने कह जाती। शायद यह एक छिपी हुई मानसिक स्थिति थी। 'मेर बिना गहस्थी चल ही नही सकती'—और इम भावना का विकृत रूप होता था बेवजह का गुस्सा और तीखे शब्द। इसलिए रह रह कर गहस्थी मे छोट माट प्रलयकाड होते रहते। हालाकि चिल्लाने का जिम्मा मदाकिनी और सीतश पर ही था। एक दिन सीतेश लापरवाह की तरह बोला, 'अच्छे ही तो थे हम लाग। खासे मजे म थे। रोज बढिया से बढिया खाना हलवा पूरी। मा अब वह पराठें वाला नाश्ता खत्म कर डालो। पुराना पड गया है। बदल मे हम कितने मज मे उबले हुए अडे, आमलट, और पावरोटी खा रह थे। व सुख के दिन अब गए। अब तुम्हार राज मे फिर वही अरवी, कच्चे केले जितनी भी फालतू की चीजें।'

ऐसी दिल जलाने वाली बातो से किसका मिजाज ठीक रह सकता था? सीतेश क कहे हुए शब्द मदाकिनी के हृदय की गहराई तक उतर गए।

सास बढने लगा । लेकिन जसे नदी कभी-कभी शात दिखती है और लगता हैं वह एमे हा वहती जाएगी और आग और कोई क्षय नही होगा नदी के किनारे बठन से डर भी नही लगता। ठडी झिरझिराती हवा से शरीर प्रफुल्लित हो उठता है, पर वही मन ही मन हसती है, उसी तरह यह भी गहस्थी थी ।

शशि भूषण शशि भूषण !' वाहर दरवाजे पर कोई चिल्लाकर पूछ रहा था शशि भूषण रहत है इस घर मे ?' दोपहर का समय था । सभी नीद के आगोश म डूब थे। शशि बाबू नाराज होकर वोले 'कौन आया है ऐसे बेवक्त तग करने ।'

मदाकिनी वोली कोई नयी आवाज लगती है ।' 'नयी आवाज' शशि बाबू पलग के नीचे रखे चप्पलो मे पैर फसाकर जम्हाई लेत हुए बोले, 'नई आवाज म अब मुझे कोई नही बुलाएगा भागवान । अब जो नया बुलावा आएगा बिल्कुल ही चुपचाप आएगा ।'

आखो मे गुस्सा और माथे पर सिकुडनें लिए हुए शशि बाबू को देखकर आगतुक वाला, शशि वाबू क्या इस घर म नही रहते ?'

शशि बाबू गम्भीर होकर बोले, 'नही रहते है, यह खबर आपको किसने दी ?'

बेचारे सज्जन घबरा उठे । बोले, 'उन्ही से काम था, जरा उन्ह बुला दीजिएगा ।

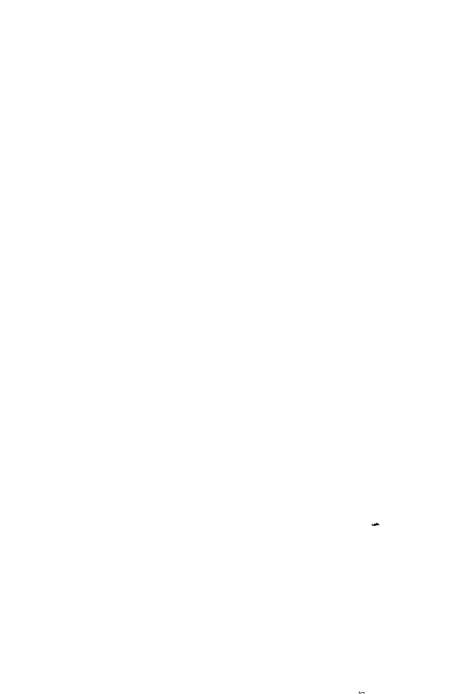
'बुलाने की जरूरत नही है जो कुछ उन्ह कहना है मुझसे कह सकत है ।

वह सज्जन तीखी नजरो से दखत हुए वोले, 'आप यानि कि—'

'यानि वानि कुछ नहीं । मैं ही शशि भूषण मुखर्जी हूं ।'

ए !' वे सज्जन आखें फाडकर देखने लगे बोले, 'शशि तू ? छि छि ! तूने मुझे पहचाना तक नही ? मैं अक्षय हूँ ।

'अक्षय !' शशि बाबू उल्लास मे चिल्ला उठे । 'तू अक्षय है ए ! पर ना मुझे क्या नहीं पहचाना ? आ । आ अन्दर आ । तू अक्षय है और



मेकैनिकल इंजीनियरिंग पढने जा रहा है। छोटा नौवी क्लास मे पढ रहा है।

'तुम्हारे उधर ही सभी पढ रहे होगे।'

'नही। हमारी तरफ अच्छे स्कूल वगैरह नही है। वे अपन ननिहाल काचडा पाडा मे पढते हैं।'

'खैर लडकी की शादी के झमेला से तो मुक्त हो गए। यह अच्छा हुआ' कहकर शशि बाबू ने मन ही मन अपनी छोटी बेटी के प्रेम प्रसग की बात सोचकर एक गहरी सास ली।

अक्षय बाबू शशि बाबू के परिवर्तन को देख नही पाए। बोले, 'झझट से मुक्ति पाना इतना आसान है ? बुढौती मे बेवकूफी के नतीजे का फल गोकुल मे बढ रहा है।

'क्या कह रहा है ? कितना बडा है ?'

'यही कोई छ-सात साल का है।'

शशि बाबू अवाक रह गए। उन्हें मालूम था, अक्षय उनसे कोई साल भर ही बडा था। वे उत्साह दिखाकर बोले, भई। फिर तो तुम अब भी मगमैन ठहरे।

'अब क्या करोगा, क्या विचार है ?'

'करूगा क्या ? ससुराल के पास ही घर बनवाने मे पत्नी को सुविधा रहती है यह सोचकर 'कल्याणी' म थोडी जमीन खरीद रखी है। बस झटपट मकान बनवा लूगा। मरा छोटा साला कनट्रेक्टर है। वह रहा था, दो महीना म मकान खडा करवा दूगा। और करवा देगा अपनी गरज से क्योकि जब तक गृह प्रवेश नहीं होता है, उसके यहा ही चिपका रहूगा।' कहकर अक्षय बाबू जोर से हस पडे।

अक्षय के ठहाके से शशि बाबू का दिल दिमाग हाहाकार कर उठा। पाच पाच लडकियो की शादी कर ली है अक्षय ने फिर भी मकान बनवा रहा है। फिर भी दोनो दास्त अतरग गपशप मे जमे रहे। कितनी पुरानी बातें, कितनी ही पुरानी यादें ? अक्षय की स्मरण शक्ति को देखकर शशि बाबू हैरान रह गए। तीस चालीस साल पुरानी बातें उस वैसी की वसी ‌. थी। मन तारीख तक याद थे। शशि बाबू के यादें धूमिल बेरग-सी

क्यों हो गई थी ? अक्षय कह रहा था, इसलिए उन्हें सब कुछ याद हो चला था

घर की नींव की खुदाई चल रही थी। फिर भी गृह प्रवेश का निमंत्रण देकर अक्षय बाबू ने विदाई ली। कलकत्ते में और भी यार दोस्तों का अता-पता पूछ रहे थे, पर शशि बाबू बहुत थोड़ा ही बता पाए। कौन किसकी खबर रखता है। अक्षय बाबू निराश नहीं हुए बोले, 'ठीक है रहने दे। जैसे भी हो मैं पता लगा ही लूंगा। तुम्हारा पता खोजने में क्या कम मुश्किल का सामना करना पड़ा मुझे ?' गृह प्रवेश के बहाने सभी पुराने दोस्तों को अक्षय बाबू इकट्ठा करने वाले थे। अपनी इच्छा की बात बताकर अक्षय बाबू चले गए।

शशि बाबू उनके जाने की तरफ देखते रहे। ऐसा दिन उनका अपना भी तो हो सकता था। घर घर उस वक्त शाम के दिये जलने लग थे।

'वह आदमी कौन था जी ?' नाराजगी के साथ पर कौतुहलवश मंदाकिनी ने पूछा, 'कब का आया था और अब गया ? उठने का नाम ही नहीं लेता था।'

'क्यों ईर्ष्या हो रही है ?'

'ईर्ष्या क्या होने लगी। चाय के साथ तुम्हें चने और सूना चूड़ा पसंद है इसलिए बनाया था, पर देती कैसे ? बाहर चाय भिजवा दिया बिस्कुट के साथ। तुमने मधु से बाजार से मिठाई मंगवाने के लिए कहा था ?'

'हां। बड़े दिनों के बाद मुलाकात हुई थी। इसलिए थोड़ी मिठाई अक्षय आया था।'

'अक्षय ? कौन अक्षय ?'

शशि बाबू झल्ला उठे। बोले, 'अक्षय की बातें तुम्हें याद नहीं हैं ? उसके बारे में मैंने न जाने कितनी बातें तुम्हें सुनाई होंगी।'

'पहले ? यानि पैंतीस साल पहले की बात है ? कौन याद करके बैठा है पुरानी बातें, बोलो। अब तक कर रहे ठहाका के मारे तो कमरा कांप रहा था।'

शशि बाबू की इच्छा हो रही थी कि वे मंदाकिनी के साथ अक्षय के बारे में गपशप करें। पर मंदाकिनी के अवहेलना भरे भाव को देखकर

उनके मन का सुर-बेसुरा हो गया। गंभीर होकर बोले, 'अक्षय ही अधिक हंस रहा था। मन में शांति है, इसलिए मुंह पर हंसी भी है।'

बहू सुमित्रा के साथ शशि बाबू का सम्बन्ध सहज नहीं था, फिर भी आज एकाएक उन्होंने उससे काफी बातचीत कर ली। सुमित्रा भी ससुर के बचपन की बातों में आग्रह दिखाती रही। साथ में रेणु भी थी। दोनों बातों में मजे ले रही थीं। शशि बाबू बताने लगे 'एक बार बाजी लगाकर हम कई दोस्त पैदल चन्दननगर चले गए। उसमें एक शौकीन तबियत का लड़का जूता टूट जाएगा, इस डर से हाथ में जूता लिए नंगे पैर गया था।

यह सुनकर सुमित्रा हंसकर लोट-पोट गई।—इस तरह से हंसती हुई सुमित्रा शायद ही कभी दिखाई पड़ती थी। शशि बाबू को जीवन में मानो नया स्वाद मिल गया। कितने दिन हो गए थे। उन्होंने घर के अपने ही लोगों के साथ हंसकर खुलकर बातचीत नहीं की थी।

शशि बाबू कहते गए 'लौटने पर क्या कठोर दंड मिला था, बताऊं तुम्हें बहू! ताऊ ने हुक्म दिया, 'अपना कान स्वयं ऐंठो और नापकर सात हाथ लम्बे नाक के बल चलो और ऊपर की डांट-फटकार, वह तो कई दिनों तक ही रही।

दंड का नमूना सुनकर सुमित्रा बोली, 'क्या कहते हैं पिताजी? उस समय तो आप लोग कालिज के तीसरे वर्ष में थे न?'

'हां बेटी। पढ़ता तो था।'

'इतने बड़े-बड़े लड़कों को ऐसा दंड?'

थोड़ी दूर पर बैठी मंदाकिनी के प्रति शशि बाबू सबकी नजर का कटाक्ष बचाकर कर बोले, 'उस जमाने के लड़कों का सारा दुख यदि सुनो बहू तो तुम्हें रोना आएगा। नई नई शादी के बाद चिट्ठी-पत्री का देना-लेना कुछ जल्दी-जल्दी चल रहा था, इसलिए एक दिन ताऊ ने बुलाकर कहा '

शशि बाबू की बात खत्म भी न हो पाई थी कि मंदाकिनी बोली 'बड़े अजीब आदमी हो जी। जीभ में कुछ अटकता भी है?' कहकर वह उठकर चली गई। इसके बाद गपशप जमी नहीं। सभी अपने अपने काम में निकल गए या जुट गए। सिर्फ शशि बाबू ही अकेले खोए खोए से पुरानी यादों की जुगाली करते रहे।

गृह प्रवेश का निमन्त्रण देने आने के पहले ही अक्षय बाबू एक रोज एक अभिनव उपलक्ष्य लेकर हाजिर हो गए।

बचपन से ही उन्हे कविता लिखने की सनक थी और अब तक लिखते भी आए थे, किन्तु चूकि बाहर-बाहर ही रहते आए थे, वह पुस्तक के रूप मे छप नही सकी थी, पर अब मौका आया था, जीवन भर के सजोए हुए सपनो को पूरा करने का उनकी किताब छप चुकी थी। आज उसी किताब को उपहारके रूप मे वे अपने दोस्त के पास लाए थे। इस मसले का समझने म ही शशि बाबू को थोडा समय लग गया। शशि बाबू समझे, दोस्ती के नाते अपने अक्षय बाबू उन्हे एक किताब भेंट के तौर पर देने आए थे। किताब को हाथ मे लेने के बाद भी शशि बाबू मे लेखक का नाम जानने की इच्छा नही हुई। और कम ही लोगो को यह शौक रहता भी है।

पुस्तक को शशि बाबू के हाथ पकडाते हुए अक्षय बाबू खुशी खुशी बोले, 'यह किताब मैं तेरे लिए ही लाया हू। तुम पहले आदमी हो—।' शशि बाबू कुछ समझ नही पाए।

किताब को उलट-पलट कर शशि बाबू बोले, 'बुढौती मे किताब उपहार दे रहे हो, वह भी कविता की आखिर मामला क्या है ?

अक्षय बाबू समझ गए। बोले, 'बुढौती म सनक गया, यही बात है। अभागे लेखक का नाम तो तुम देख ही नही रह हो।'

ऐं! क्या बक रहा है ? यह तेरी लिखी हुई है ? तू अब भी कविता लिखा करता है ?'

'हा भई, लिख लेता हू कभी-कभार। लिखे बिना रहा ही नही जाता। सच बात तो यह है कि कच्ची उम्र म लिखी गई कई कविताए भी इसम शामिल हैं। कच्ची उम्र के प्रति एक अजीब-सा मोह रहता है। सोचा था उन्हें इन कविताओ मे शामिल न करु, पर किए बिना भी नही रह सका।'

'इससे पहले भी तेरी कोई किताब छपी है ?'

'नही रे! यही पहली पुस्तक है। नौकरी मे बाहर-बाहर ही रहा। फिर पाच-पाच लडकियो की शादी। समय कहा मिल सका ? लेकिन शौक

तो शुरु से ही पालता आया था न ?—इसलिए रिटायर होकर जब देश लौटा तो सोचा, इसी शौक को सबसे पहले पूरा कर लू ।'

'वाह भई ! अच्छी खासी किताब है । कितना खर्च बैठा ?'

'कुछ तो देना ही पडा था !' अक्षय बाबू लजीले ढग से बोले ।' छपाई बधाई आदि अच्छा किया है ?'

'पर किताब मे दाम तो लिखा नही है ?'

'दाम ?'अक्षय बाबू अवहेलना भरे शब्दो मे बोले ।

'दाम लिखकर क्या करूगा ? पैसो से कविता की किताब कौन खरीदेगा ? और वो भी मेरे जैसे अनजान कवि की ? यह तो मैं यार दोस्तो के देने के लिए ही—'

'लेकिन अक्षय तुमने अततोगत्वा कुछ किया तो सही, हम लोग तो तो फिजूल मे खच हो गए ।'

अक्षय बाबू प्रतिवाद करते हुए बोले, 'मेरा सब कुछ खत्म हो गया, बेकार बर्बाद हो गया—ऐसे आक्षेप का कोई कारण नही है । जीवन अब भी बहुत बाकी है । असलियत म तो जीवन अब शुरू हुआ है । बाहरी कामो म छुटकारा मिल गया है, अब अपनी इच्छा और रुचि के अनुसार काम करो । इतन दिनो म अपनी तरफ देखने तक की तो फुरसत मिली नही । मैं तो यही ठीक समझता हू । पुराने जमाने मे लोग वानप्रस्थ मे जाकर अध्यात्मक चिंतन मे लीन रहते थे । रिटायर होने के बाद मैं भी काव्य चर्चा म जुटा हुआ हू । मेरी मर्जी । और सच बताओ यह दोनो ही बात क्या समान-सी नही है ?'

अक्षय बाबू क चले जाने के बाद आज फिर शशि बाबू नए सिरे से सोच म पड गए । मन म आक्षेप की अनुभूति के साथ-साथ एक विचित्र सा क्षीण एक उत्साह उनके मन म छाया रहा । चाहने पर शशि बाबू भी क्या लिख नही सकते थे ? बचपन म शशि बाबू अच्छा निबध लिख लेत थे, कालेज के मगजीन मे उनकी रचनाए निकलती भी थीं । और दफ्तर मे भी लिखन का काम सन्ना व ही सभालते थ । कविता लिखना वसे भी आसान है और अब तो और भी सुविधा थी—कविता म मल बठाने की जरूरत ही नही । यही तो कविता म आडे आती थी । कोशिश करन म

हर्ज ही क्या था ?' शशि बाबू ने सोचा, अच्छा ही है। गृहस्थी की छोटी-मोटी बातों को लेकर माथा पच्ची नहीं कर वे अपना लिखना लिखना लेकर ही रहा करेंगे। अक्षय ने ठीक ही तो कहा था, यह भी एक किस्म का आध्यात्म चिंतन है। लेकिन मदाकिनी अक्षय बाबू के लिखे 'हृदय के सुर' पुस्तक को देखकर हसकर लोट पोट हो गई।

'बुढौनी मे सठिया गया मुआ। एक तो इस उम्र मे कविता की किताब तिस पर ऐसा नाम। शर्म-हया कुछ बची भी थी ? या लडकी-जवाई, नाती-नातिन, छि छि वे लोग भी तो देखेंगे। इसका लिहाज भी तो करना चाहिए था। ऐसे घिनौने काम का वे क्या कहेंगे ?' मदाकिनी जसे ग्लानि से भर गई।

शशि बाबू नाराज होकर बोले, 'घिनौना काम करने मे लोगो को घिन नही आता, अच्छे काम को आखिर क्यो घिनौना समझेंगे ? किस लिए ?'

'तो यह अच्छा काम है ? फिर तुम क्या पीछे रह गए ? कलम उठा लो हाथ मे।' कहकर मुह बिचकाती हुई मदाकिनी कमरे से बाहर निकल गई।

शशि बाबू भी आक्रोश मे बोल पडे 'कलम तो पकड़ूगा ही, कम-स कम इसी बहाने तुम लोगो से थोडी देर बचा तो रहूगा।' सचमुच ही इस बुढापे मे शशि बाबू कविता लिखने का अभ्यास करने लगे। कुछेक कापी खरीद लाए। एक नई स्याही की बोतल। यह एक अजीब किस्म का रोमाच था। पहले तो एक दो कविताए लिखकर शशि बाबू ने फेंक दी। बिल्कुल ही अक्षय के 'हृदय के सुर' के साथ रमी हुई थी। फिर काट-कूट कर पक्तिया बदली, अच्छा भी लगा। अधिक काट-कूट होने पर फिर से दूसरी कापी म उतारने लगे। यह सब करने म उन्हें अच्छा भी लग रहा था। कविता लिखने की धुन मे वे इतने मगन रहे कि बाजार से सब्जी लाने जैसे प्रिय काम से भी कतराते रहे।

कुछ अक्षरो का इधर-उधर, सजो पिरो देने म इतना आनन्द छुपा है,

किस मालूम था पहले ?

'मदा कहा है री ? मदा !' मुकुद बाबू की ऊची भारी आवाज नीचे से ऊपर गूज रही थी।

मदाकिनी बोली, भया आए हैं क्या ?' आवाज से लगा जसे वह उनके आने की प्रतीक्षा कर रही थी।

'अब बता। बुलाया क्या है ?' मुकुद बाबू ने पूछा।

मदाकिनी आहिस्ते आहिस्ते और रुआसी होकर बोली, 'मुश्किल म हू तभी तो तुम्ह बुलवाया है।

नखरे छोड। असली बात बता।'

'बता रही हू। पहले तुम इस कमरे म एक बार आओ।' मुकुद बाबू को मदाकिनी अपने कमरे में ले गई और पलग पर बिछे गद्दे के नीचे से एक कापी खीचकर एक पन्ना खोलकर धीमे स्वर मे बोली, देखो भया। देखकर इसका कोई उपाय तो बताओ।

यह तो शशिभूषण के हाथ का लिखा हुआ लग रहा है, क्या है यह ? कहू की कविता ?

पढकर ही देखो न भैया। मैं अब क्या करूगी भैया ' सर पटक-पटक कर मर जाने की इच्छा होती है। बुढापे मे यह सब कूडा करकट न जाने क्या लिख रहे हैं।

मन ही मन दो चार पक्तिया पढकर मुकुद बाबू मुस्कराकर बोले, 'एकाएक कविता लिखने का शौक हुआ कस ?

क्या कहू भया। इनका कोई मुहजला दोस्त है। उसने एक कविता की किताब छपवायी है। उसी को देखने क बाद स यह सब चल रहा है। कहकर मदाकिनी न 'हृदय के सुर' की किताब मुकुद बाबू के हाथो मे पकडा दी और बोली 'वह मुह जला भी सठिया गया है और तुम्हारे बहनोई भी। मुझे तो चिन्ता हो रही है। भया, कही इनका दिमाग तो खराब नही हो जाएगा ?'

मुकुद बाबू हसकर बोले, 'थोडा खराब तो हुआ ही है कविता सिरफिरा आदमी ही तो लिखता है।'

'अब क्या होगा भया ?'

'होगा क्या ? समय के साथ रोग अपने आप ही ठीक हो जाएगा।

'ठीक क्या होगा ? दिना दिन तो रोग बढ़ता ही जा रहा है। पहले तो छुप छुपकर लिखते थे, पर आजकल तो हर वक्त कागज कलम लिए पडे रहते है। आज जबदस्ती सब्जी लेन बाजार भेजा है। मिजाज चढा हुआ था। बुलाने पर मानो मारने दौडेंगे, कविता लिखने से क्या दिमाग गरम हो जाता है भैया ?'

'हा। असमय कुछ करने पर बैलेंस बिगड जाता है। कहने का मतलब है समय पर कुछ किया नहीं।'

'यही चिन्ता तो मुझे खाए जा रही है। बुढापे का नशा बडा भयकर नशा होता है भैया।'

'तू चिन्ता मत कर। यह एक किस्म की छूत की बीमारी है समय के साथ ठीक भी हो जाएगी। तू अब भोग लगाने का कुछ इन्तजाम कर। सुबह का नाश्ता आज कुछ जमा नही

'खाना तुम्हे खिलाऊगी भैया। पर भैया तुम खुद ही उनसे एक बार कहा न ?'

क्या कहूगा ? तू ही बता ?'

'कहो, कविता अगर लिखनी ही है तो भगवान के नाम पर लिखें। इस उम्र म, 'साडी के पल्लू, आखा मे आखें डाल', 'रूप का झरना' ऐसी जग हसाई का काम तो नही करे। बहू-बेटी अगर देख लें तो क्या क्या होगा ?'

'इसमे क्या है मदा। अगर वे लोग देखते हैं तो देखन द। लेखक क्या लिखते नही। उनके नाती पोते बेटी दामाद नही रहते ? अधविश्वास छोड। और तुझे एक बात बताता हू। इस बात को लेकर अधिक बेचन रहने जरूरत नही। उससे रोग बढ जाएगा। किसी भी रोग से यदि छुटकारा पाना हो ता उसका एक ही उपाय है उसकी अवहेलना। अच्छा यह बता, खाने का क्या हुआ ? बातो-बातो म टरकाना चाहती है क्या ? बहू! अपने इस पेटू मामा के लिए जल्दी से खाना तो लाओ। तुम्हारी कजूस सास तो आज धोखा द रही है।'

भाई की बात मानकर मदाकिनी ने शशिबाबू को कविता लिखने के

लिए ताना वाना सुनाना छोड दिया। बिल्कुल चुप्पी साध ली। दूसरी तरफ शशिवावू का भी उत्साह घटता रहा। पर अक्षय का साथ छोड पाना मुश्किल था। आज अक्षय ने शशिभूषण को खाने पर बुलाया था।

अक्षय का गृह-प्रवेश था। करीब बारह चौदह दोस्तो के नाम लिस्ट मे थे। सभी को हाथ जोडकर मिन्नते कर वह बुलवा रहा था। भला ऐसे निमन्त्रण को कौन टाल सकता है ?

शशिबाबू अन्दर आकर चिल्लाए 'बहू ! ओ बहू !'

शाम के खाली वक्त मे बैठकर सुमित्रा ऊन की बुनाई कर रही थी। हाथ मे बुनाई लिए ही सामने आयी। 'देखा न बेटी, अक्षय ने आज फिर मुसीबत म डाल दिया।'

मन्दाकिनी दूसरे कमरे से निकलकर बोली, 'तुम्हारा अक्षय तो मुसीबत मे डालता ही रहता है। अब कौन सी मुसीबत आ पडी ? नाटक है क्या ?'

तुम चुप रहो। शशिबाबू स्वाभिमान से बोले, 'तुमसे तो मैं कुछ कहन म रहा। मैं अपनी बेटी से कह रहा था।'

मन्दाकिनी मुह मोडकर चली गई। सुमित्रा ने बुनाई रखकर पूछा, 'क्या बात है पिताजी !'

'क्या बताऊ। अक्षय निमन्त्रण दे गया है। नही जाने पर हगामा खडा देगा। एसा धमका कर गया है। अब मैं क्या करूँ तुम्ही बताओ ?'

सुमित्रा विस्मय स बोली, 'निमन्त्रण से आप इतना घबरा क्या रह ह। यह तो अच्छी बात है।

'नही बहू। डरने की बात नही है। अक्षय कहता है, 'हम सभी कालज के पुराने साथी आज एक साथ मिलेंगे, इसलिए हम सबको उस जमाने जसा सज-सवर कर जाना पडेगा। पुरानी यादो को ताजा करना होगा। वह हमेशा का पागल है समझी ?'

शशिबाबू चाहे कितना ही कुछ क्यो न कहे, पर उनके चेहरे पर एक खुशी की झलक उमड रही थी, मानो खोया हुआ वसत फिर लौट आया हो।

सुमित्रा का मन ममता से पिघल गया। उसे भी अच्छा-सा लग रहा था। वह हमेशा से ससुर को बदमिजाज, बडे आदमी के रूप म देखती

आयी थी। पर अब उसे लग रहा था—नही उनके हृदय मे भी कोमल कमजोरी की जगह बनी हुई है, इसीलिए उनके चेहरे से खुशी झलक रही थी। सुमित्रा को लगा। उसका अपना कालेज का जीवन भी कब का खतम हो चुका। जिगरी सहेलियो मे भी न जाने कौन कहा है। कभी कभी तो उन लागा से मिलने को जी चाहता है । जीवन के वे खूबसूरत दिन फिर कभी लौटेंगे ?

शशिभूषण का भी ऐसा ही कभी सुख का समय था। पीछे छोड आए वे दिन आज उन्हे बुलावा दे रहे थे। तभी तो वे खुश दिख रहे थे। पर लोगो को पता न लगे इसीलिए वे लापरवाह की बातें बुन रहे थे। 'पहले की तरह सज सवर कर' आने की बात ने शशिबाबू को चचल अधीर बना दिया था पर अपने मुह से कहने मे उन्हे शर्म भी आ रही थी। शात हसी हसकर सुमित्रा बोली 'पिताजी आपका दोस्त तो एक कवि है। इस प्रकार की बातें तो कर ही सकता है। इसमे चिन्ता की कौन सी बात है ? अच्छी तरह खूब सज सवर कर जाइएगा। लोग भी देखकर हैरान रह जाएगे।' सुमिना की आवाज मे बच्चा को पुचकराने जमी मिठास थी।

'शशिबाबू बोले, 'जानती हो बहू, बचपन म मेरे बाल बडे खूबसूरत और घुघराले थे। दोस्त लोग खूब चिढ़ाते भी थे। अब तो मदान बिल्कुल साफ है। इस गजे सिर के साथ भी क्या सजना सवरना। पागल सा दिखूगा। कहकर शशिबाबू जोर से हस पडे। पर यह हसी दिखावे की थी।

सुमित्रा ने पूछा, 'कब जाना है पिताजी ?'

'अगले रविवार को।'

'रवि ! मगल, बुध, वहस्पति शुक्र, शनि, फिर जाकर रवि आएगा। बहुत समय है पिताजी। आज चलिए, चलकर नए जूतो का आडर दे आए।'

'जूते !' शशिबाबू चौंक पडे। उनकी जरूरतें क्या इनकी आखो म भी पडती हैं ? सच बात है सबसे पहले जूतो की ही बात उन्हे भी याद आयी। रिटायर होने के बाद से अच्छा जूता उन्होने खरीदा भी नही था। जरूरत भी नही पडी थी। बीच बीच मे चप्पल ही खरीदते रहते। पर पुराने दोस्तो के बीच वहा चप्पल पहनकर तो जाया नही जा सकता था

पता नही कौन किस ओहदे पर था। किसी के बारे मे उन्हें कुछ भी तो नही मालूम। अक्षय ने खोद खोदकर सबको निकाला था। हो सकता है सभी धनी और सम्पन्न हो। वहा वे दीन हीन की तरह पहुचना नही चाहते थे। मर्दो का हाल जूतो को देखकर ही समझा जाता है।

बहू की बात पर शशिबाबू का मन भारी हो गया। मुह से बोले, मैं कोई पागल हू कि एक दिन की खातिर एक जोडी जूता का आडर देकर आऊगा। खामख्वाह दस बारह रुपए निकल जाएगे।'

'दस-बारह।' सुमित्रा हस पडी। बोली 'दस-बारह रुपए म क्या जूते मिलते है पिताजी ?' पर आप सिर्फ पैरो का नाप देने के लिए चलिए। रेखा और मैं साथ चलूगी।'

नही बहू। जूतो की बात मत कहो, बीस रुपए निकल जाएगे।'

'रुपया के लिए आप चिन्ता न करें। आप सिर्फ नाप देने के लिए चलिए।'

प्रेम प्रसग म पडने के बाद से रेखा घर मे चुप चुप सी ही रहती थी। पिता के सामने आने म भी कतराती थी। पर आज सुमित्रा रेखा और शशिबाबू को साथ लेकर बाजार चल पडी।

शशिबाबू म अब वह धैर्य का भाव नहीं रहा। 'जूता का नमूना देखकर उन्ह चमकाना आदि बताकर आखिर म उन्होने अच्छे और कीमती जूता का आडर दे दिया। मलमल का कपडा खरीदकर कुर्ता भी बनवाने दे आए। मदाकिनी से किसी ने कुछ नही पूछा।

अत म जाने का दिन आ गया। सुबह नौ बजे की गाडी थी। सुबह की चाय के साथ ही तैयारी शुरू हो गई। बहुत अर्से के बाद शशि-बाबू अच्छी तरह साबुन म नहाए। सर को जवाकुसुम तेल से चमकाया शीशे के सामने खडे होकर देखने पर उन्हे अपना रग भी अब गहरा लगने लगा। खुशी की यह चमक पहले तो कभी चेहरे पर आती नहीं थी—

अब कपडे पहनने की बारी थी। पर यह क्या ? यह सब उन्हे पहनना

पडेगा ? सुमित्रा सब जचा कर करीने से रखकर गई थी।

बहू ! बहू, कहा गई ?'

'आयी पिताजी। अभी आती हू।'

मदाकिनी आकर नाराजगी से बोली, 'हू ! बहू कसे आएगी। सुबह से उसे सौ बीडे पान लगाने के लिए बठा रखा है। पचास साल पहले कब कौन सा दोस्त पान पसद करता था, जिसके लिए उपहार के तौर पर ले जाएग। एसी अनोखी गरीब बात मदाकिनी ने कभी सुनी भी नही थी। और न मालूम क्या—बहू भी बडी भलमानस बनकर ससुर के हुक्म की तामील कर रही थी।

'तुम तो हर बात से जलती हो।' कहकर गजे सर पर शशि बाबू कघी फिराने लगे।

सुमित्रा आकर बोली, 'पिताजी, पान का डब्बा यहा रख रही हू। डब्बे को कागज म लपेट दिया है, आप मुझे बुला रहे थे ?'

'हा। कह रहा हू, यह सब तुमने क्या किया है ? कौन पहनेगा यह सब ?'

'क्या पिताजी ? आप ही के लिए तो है यह सब।

ऐसी जालीदार बनियान डालूगा मैं ?'

'क्या नही पिताजी—' सुमित्रा जोर देकर बोली, 'मलमल के कुर्ते के नीचे मोटा बनियान क्या अच्छी दिखेगी ?

'नही बहू ! यह सब सामान उठाकर तुम रख दो। मेरा पुराना बनियान ही झटपट लाकर मुझे दो।'

'लेकिन पिताजी ये सामान तो आप ही के लिए खरीदा गया है।'

'बहुत मुश्किल मे डाल देती हो। और यह क्या ? चुनट की हुई धोती और कुर्ता। बहुरूपिया बनकर मैं नही जा सकता।'

'आप कह तो रहे हैं पिताजी पर वहा पहुचकर देखेंगे कि सभी बन ठन कर आए है। आप सकोच करते है वरना मेरे ताऊजी तो अब भी बिना के चुनट धोती डालते ही नही।'

'तुम्हारे ताऊ की बात छोडो। मुझे तुम लोगो ने मुश्किल म डाल दिया है।' फिर आडी नजर देख कर बोले, 'तुम्हारी सास तो मुट्ठी भर

धूल मुझ पर छोटने के लिए बैठी ही है। दूसरी तरफ गाड़ी का भी वक
हो गया है।'

'मेरी बला से' कहकर मदाकिनी चली गई।

सुमित्रा बोली,'आप सकोच नहीं कीजिए पिताजी, तैयार हो लीजिए
आकर रिपोर्ट सुनाइएगा जरूर।'

माना अनिच्छा के साथ शशि बाबू तैयार हुए। पर तैयार काफी स
लगा कर हुए। बहू के कहने पर परेश की हाथघड़ी भी बाधनी पड़ी अं
अत में ईश्वर का नाम स्मरण कर घर से निकल पड़े। निकलते समय उ
किसी प्रकार का सकोच हो रहा था, ऐसा लगा नहीं। व जाते ज
मदाकिनी से बोल गए 'जा रहा हू भागवान।'

मदाकिनी कुटिल सी हसी हसकर बोली, 'सभल कर जाना। क
दोस्त की बीवी ही नहीं प्यार कर बठे।'

शशि बाबू एक नवयुवक की भाति भौं चढाकर मुस्कुराकर निक
गए।

सभवत तरुणाई मनुष्य के हृदय से कभी शेष नहीं होती सिर्फ हाल
सी रेत के नीचे दबी रह जाती है। उस रेत के ढेर को हटाकर देखन
कहीं दूसरा के आगे शर्मिंदा न होना पड़े, इसी डर से लोग उसे हटाने
हिम्मत जुटा नहीं पाते। बुढ़ापे की चादर को और अच्छी तरह लपेट
हैं

सिर्फ ऐसे ही किसी अनजाने में मदाकिनी ने एक गहरी सास ल
पुरुष को सब कुछ शोभा देता है। औरत की जिंदगी, मानो पत्थर
नीचे दबी होती है।

मा! ओ मा! मैं सुरेन चाचा के घर जा रही हू। रत्ना ने आ
कहा। मदाकिनी थोड़ा नाराज होकर बोली 'क्या? इस समय सु
चाचा के यहा जाने की क्या जरूरत पड़ गई?

मालूम नहीं। नौकर से बुलवा भेजा है।

'बुलाया है? किसलिए? कुछ बताया?'

'नहीं। बस एक चिट लिख कर भेजा है 'एक बार आ सको तो मुझे खुशी होगी। थोड़ी जरूरत है।'

मदाकिनी मुश्किल म पड गई। जान दन की इच्छा नही, और मना करना भी कठिन था। सुरेश शनि बाबू के ममरे भाई थे। बराबर का आना जाना, 'भाभी भाभी' करते रहते थे। शनि बाबू को भी खूब मानत थे। जिसपर पैसे वाले भी थे। इस घर के लडके लडकी अक्सर वहा जाकर रहते थे, इसलिए वहा जाने के लिए मना कर पाना वाकई कठिन था। पर एक बात को लेकर मदाकिनी का मन कुठित था। सुरेश चन्द्र पिछले कुछ दिना मे सिनेमा के साथ जुड गए है। यह प्रमुख बाधा थी।

परिचालक सुरेन बनर्जी मदाकिनी के रिश्तेदार हैं, यह सुनने म अच्छा लगता था। पास मिलन पर सिनेमा देखना भी अच्छा लगता था पर बट-बटिया का अब वहा जान देन की इच्छा नही होती थी। अक्सर सुरेश चन्द्र के यहा अभिनेता-अभिनेत्रिया आते जाते देख जाते थे। सुरेश चद्र की पत्नी गुजर चुकी थी। एक लडकी थी, रेखा की उम्र की। घर म किसी प्रकार की कोइ पाबदी नही थी।

थोडी दर चुप रहकर मन्दाकिनी बोली, 'तुमसे क्या काम है, क्या मालूम। जाना है तो जा, पर तुरत चली आना।

अनुमति मिलने के साथ ही रखा हवा हो गई। मदाकिनी सोचने लगी, बगाली हा या कुछ भी, रखा की अपनी पसद के लडके के साथ जल्दी से शादी हो जाती तो ही अच्छा होता। बेटी का बडी हो जाना कम सतान वाली चीज थी क्या ? जाने का तो कह दिया, पर मदाकिनी घर के अदर और बाहर बचैनी से घूमन लगी।

काफी दर लगाकर खुशी खुशी रेखा लौट आयी। मदाकिनी ने पूछा 'क्या जरूरत पडी थी रे तुमसे ?'

'वो एक मजे की बात है।' रेखा आकर बैठ गई। बोली 'सुनकर मुझे मजा ही आ गया, पर तुम सुनोगी तो क्या कहोगी, तुम्ही बता सकती हो।

'बात क्या है ? किस बात के लिए इतनी खुश दिख रही है ?'

'सुरेश चाचा ने एक नयी फिल्म शुरू की है। शूटिंग की पूरी तयारी

थी अचानक एक लड़की यानि एक कलाकार बीमार हो गई। उसे टायफायड हो गया। सुरेश चाचा सर पर हाथ धर कर बैठ गए थे, इसलिए मुझे बुलवा भेजा था। रेखा की बात खत्म होने से पहले ही मदाकिनी बोली, क्या? सिनेमा में काम के लिए बुलाया था?'

मां की आवाज का सुर सुनकर रेखा घबरा गई। बोली, 'नहीं। कह रहे थे अगर उसकी जगह थोड़ी मदद कर दूं तो। छोटा सा एक रोल है।'

क्या कहा? यह बात देवर जी ने कही है? नालायक हो गया है, जो तुम को उस तरफ कदम बढ़ा रहा है।'

रेखा दुखी भाव से बोली 'तुम ही इतना वो करती हो। अच्छे अच्छे घरों की लड़कियां तो फिल्मों में काम कर रही हैं।'

मन्दाकिनी तीखे स्वर में बोली, अच्छी बात है। देवरजी की अपनी लड़की भी तो थी उसे क्यों नहीं ले रहे हैं? उसकी याद तो नहीं आयी। मेरी लड़की की ही तरफ नजर क्यों पड़ी?'

सुरेश चाचा की नन्दी? तुम उसकी बात कह रही हो मां? वो तो एकाध दो वाक्य कहना पड़ जाए तो तुतला जाएगी।' रेखा हंस कर बोली।

भाड़ में जाए उसकी बात। मैं सिर्फ इतना कहना चाहती हूं कि सुरेश देवरजी को यह बात कहने की हिम्मत कैसे हुई। जरूर तूने आग्रह दिखाया होगा?'

बिल्कुल नहीं मां। मुझे क्या मालूम था कि किस काम के लिए मुझे बुलवाया है। मैंने देखा सुरेश चाचा मुश्किल में पड़े हैं। बोले, कानेज के फंक्शन में तूने चिरकुमार सभा में नीरू वाला बनकर अच्छा नाटक जमाया था। मेरी मदद कर दे। तभी तो मैं—'

'इसलिए तू हां भर आयी। बोली होगी जी चाचाजी, मैं जरूर ठीक ठीक अभिनय कर सकूंगी। देखो बेटी दो चार डिग्रियां लेकर तुम लोगों में काफी हिम्मत आ गयी है। पर हर चीज की एक सीमा होती है। शादी के मामले में तुम्हारी इतनी बड़ी बात को भी मन सिर्फ सहा ही नहीं तुम्हारे पिताजी से झगड़ा भी मोल ले लिया। पर इस बात के लिए मैं हर्गिज राजी नहीं हूं। तुम लोगों को कुछ कहने में यदि संकोच हो तो मैं ही

परश गभीर होकर बोला, 'आपका इस तरह कहना ठीक नहीं है पिताजी।'

हा, वो तो होगा ही। हम लोगा की सारी समभबूझ ही तो गलत है। क्या है न? घर की वहू नौकरी करने निकलेगी, निकले। लडकी मुह पर बोलेगी बोले। हमारे निर्वाचित लडके से शादी नही करेगी, जिससे मर्जी उसमे ब्याह रचाएगी, रचाय। ठीक है सब कर! और अब फिल्म मे काम करना होगा क्योंकि 'ना' करने से सुरेश चाचा के आत्म सम्मान मे चोट पहुचेगी। मैं पूछता हू बाप के मुह पर कालिख पोतने मे तुम लोगो को जरा भी शर्म नही आती? या सोचते हो, गरीब बाप की मान मर्यादा ही क्या है क्या? रेखा मैं तुमसे आखिरी बार कहता हू, इस प्रकार का स्वेच्छाचार मैं बर्दाश्त नहीं करूगा।

रेखा रुआसी होकर बोली, 'ठीक है' और उठकर चली गई।

परेश स्थिर भाव से बोला 'आपकी राय के बिना इस घर मे कुछ नही हो सकता आपका यह कहना एक अलग बात है, लेकिन हर चीज को इतने विकृत भाव से देखकर उसका उतना ही गदा अर्थ निकालने का कोई मतलब नही होता। हर युग का धर्म अलग होता है, चेहरा अलग होता है। किसी युग को दूसरे युग के कधे पर लादने की चेष्टा सरासर गलत है पिताजी। युग का जो धर्म है उसे मानकर चलने का साहस हम लोगो मे रहना चाहिए।

वयस्क पुत्र की गभीर बात सुनकर हुक्म चलाने वाले नगिनाबाबू भी थोडा गभीर हो गए। बोले हा, युग धर्म को मानना चाहिए युग के अधर्म को नही। हर युग मे ही सामाजिक जीवन मे थोडा अनाचार प्रवेश करता है उसे भी यदि बुद्धिमान लोग युग धर्म समभकर अपनाने लगें तो समाज का ध्वस तो अनिवार्य है। आज तुम यह कह रहे हो, हमेशा के लिए फिल्म मे तो जा नही रही है 'गोनिया काम करेगी।' यह तुम्हारी कमी उम्र का जैसी बात है, अभी तुम समभोगे भी नहीं। शेर की जीभ मे जिस तरह खून का स्वाद होता है मनुष्य भी उसी तरह से यश और अर्थ के लिए लालायित रहता है। एक बार वह स्वाद मिल जाए, फिर किसी सदबुद्धि की खातिर सही रास्ते पर लौटकर आना बहुत कठिन

है परेश।'

परेश थोड़ा नरम होकर बोला, 'लेकिन अब मुख्य समस्या यह है कि सुरेश चाचा क्या समझेंगे।'

'कुछ नहीं समझेंगे। बंगाली गृहस्थ घर के मां-बाप अपनी जवान कुआंरी लड़की को फिल्मों में काम करने के लिए 'हां' नहीं कर रहे हैं—यह सुनकर दुख मानने जैसा इतना बड़ा साहब सुरेन अभी बना नहीं है। अच्छा बात है उन्हें जो कुछ कहना है, मैं ही कहूंगा। अब मैं सोच रहा हूं एम० ए० की परीक्षा तक प्रतीक्षा करने की भी जरूरत नहीं। अगहन में ही रेखा की शादी भी कर दूंगा। और हिंदूमत से ही विवाह करूंगा।'

'हिंदूमत से क्यों भला?' परेश चौंका।

'क्या कहा। शादी में यदि हम शामिल नहीं होते तो ये दोनों रजिस्ट्री से विवाह करते। यह हमारे लिए अधिक शर्म की बात नहीं होगी? मेरी अपनी औलाद हमारी बात नहीं मानी, यह खबर दूसरों के कानों में पहुंचे इससे बढ़कर अपमान और ग्लानि और किसी चीज में नहीं है परेश। हम ब्याह देंगे तो लोग कम से कम यह तो जानेंगे कि मां-बाप उनके पक्ष और स्नेह है। मैं क्या हूं नहीं, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं, फिर भी अपने आपको और दूसरों को ठग-ठगाकर धोखे में रखने में ही अपनी मान-मर्यादा की रक्षा की जाती है। इसी का नाम समाज है, इसी गृहस्थी कहते हैं।'

शशिबाबू का जैसा कहना, वैसा ही करना। अगहन में ही [illegible]
यहां शहनाई बज गई।

शशिबाबू ने लड़के के पिता के पास जाकर कहा कि [illegible]
नीति से विवाह करना चाहते हैं। लड़के के पिता [illegible]
बात के दौरान दोनों समधियों के बीच [illegible]
दूसरे के निकट आए। लड़के के पिता जी-जान [illegible]
कि बंगाल और पंजाब की सांस्कृतिक सीमा [illegible]

हा परन्तु दोनो ही समाजो की सामाजिक रीति-नीति विचार और नियमो म काफी मेल है। उनके एक बगाली दोस्त ने ही उन्हे यह बात बताई थी

बगालियो के प्रति उनके मन म श्रद्धा थी और उनका लडका तो बहुत अच्छी तरह बगला जानता था। रवी द्र नाथ टैगोर का वह परम भक्त था आदि आदि। अतएव लडके के घर पगडी पर पीला रग चढा, और लडकी के घर शहनाई बज उठी। शादी के घर म सबसे अधिक हल्ला गुल्ला नौकर मधु ही मचा रहा था। खुशी के मारे हनुमान की तरह छलाग लगाता फिर रहा था। मदाकिनी, पूजा की तैयारी मे लगी थी। मधु आकर चिल्लाया, मा जी! मा जी!' मदाकिनी झल्लाकर बोली, 'क्या ? क्या कह रहा ? यहा आकर नहा कह सकता क्या है ? मैं पूछती हू तू नौकर है या मैं ?'

'मधु तो जनम-जनम म नौकर है मा जी। सात जन्म नौकर की खटनी के बाद ही बाबू के घर जन्म होना है यह बात शास्त्रो म लिखी है। मैं तो यह जानने आया था कि हज्जाम पूछ रहा है कि केले के खभा को कहा गाडे।

'क्या बकता है ? पूछ, मण्डप कहा बनेगा ? केले के खभा को तो मडप के चारो तरफ ही लगना होगा।

'हा मा जी! यही बात है ? पर कहा लगवाऊ।

'मेरे सिर के ऊपर। मण्डप कहा बनता है ? मकान के नम्बर म ? जा! जाकर कह कि आगन म मडप बनेगा। उफ! किस किस सभालू, किसी के पास दिमाग ही नहा।'

'क्या-क्या सभालू ? कहकर तो आप कुछ भी नहीं सभाल पा रही है मा जी ?' मधु ने टिप्पणी की।

क्या कहा महाजन ?

'जी मैंने कुछ नहा कहा है। मालिक कह रहे थे।

'कब नाई का नौकर बना है ? तब म उत्पात यह सब कहा है ? निकल यहा स। हट सामने स।' फिर मन ही मन बडबडायी 'मैं तो कुछ कर ही नहा रही हू ? सारा काम अपने आप ही तो हो रहा है यह तो नाम के कपडा जेवर और ससुर के घर के बरतन को सभालने म

ही थक्कर चूर। बडा बेटा बुआ को लाने जाने के नाम पर तीन दिन से घर स गायब है छोटा बेटा सारा दिन नौकरी म ही दौड धूप कर रहा है। फिर घर का सारा काम चल कसे रहा था ? उफ ! दुनिया इतनी बेरहम कृतघ्न है। घर के सभी लोग नमकहराम है।' मदाकिनी की बक-बक शशिबाबू क कान मे नही पहुची। उनकी तो खुशी से भरी आवाज बाहर स अन्दर पहुच रही थी। 'बहू ! अरी ओ बहू ! कहा गई ? रखा सीतू किसी को सा नही देख पा रहा हू। अरे तेरी बुआ आयी है आकर देख।' दूसर ही क्षण अन्नपूर्णा की तीखी आवाज गूज उठी, रहने दो भैया, तुम्ह शार मचाकर बताने की जरूरत नहीं। बुआ घर आयी ह यो यहा के मक्खी और मच्छर भी जान जाएगे। तुम्हारी आवाज क्या जोरदार ह। आओ बहू, आओ बेटी, ठीक है, वैसे ही प्रणाम करो, पर छून की जरूरत नही।'

शशिबाबू बाले, 'क्या ? पैर क्या नही छुएगी ? शौच-अशौच की बीमारी पाल रखी है क्या ?

'यह कोई नयी बात तो है नही भया। अन्नपूर्णा हसकर बाली 'रेलगाडी म आयी हू वही कपडे अब भी शरीर पर है, इसलिए मना कर रही थी बहू ! तुम्हारी सास कहा गई ?'

'मा पूजा की तयारी म लगी हुई है। बुलाऊ ?'

'रहने दो। पहल नहा लेती हू। जी घबरा रहा है। रेलगाडी के कपडे है, छत्तिसा जात के छुए हुए। बहू ! बिना छुआ हुआ शुद्ध पानी है न ?

सुमित्रा उत्साह के मारे उछल कर बोली, जी बुआजी। आपके लिए मा ने नयी सुराही मगाकर पानी से भर कर रखी है।'

'यह लो साहब के बेटी की अक्ल ! अरे अभी कहा मैं पीने के लिए पानी माग रही हू ?'

शशि हसकर बोले 'बहू ! पीने का पानी नहीं बुआजी नहाने क लिए पानी माग रही हैं। तुम लोगो की बुआजी हौज क पानी से नही नहाएगी उन्ह अलग स रखा गया पानी चाहिए। जाकर देखो तो तुम्हारी सास न जरूर इतजाम किया होगा।'

नहाने के बाद अन्नपूर्णा पूजा आह्निक करने बैठी। सुबह दुपहर म

टन गयी पर बुआजी की पूजा समाप्त नही हुई। जब वह कमरे से निकली तब भी हरिनाम की माला जपती हुई।

शादी म घर मे सभी के चाय-नाश्ते की जिम्मेदारी सुमित्रा पर था। वह बचारी बुआजी को चाय पिलान के लिए तसर सिल्क की साडी डान, पीतल की छनी गिलास और नयी सुराही का पानी लेकर इनजार म उठी बठी पसीने स तर हो रही थी। अन्त मे बुआ को दखत ही बाली बुआजी आपकी चाय तैयार है।

अभी चाय ?' बुआ दाशनिक की सी हसी हसकर बोली, चाय के लिए तुम्हारी बुआ का गला नही सूखता बहू। एक बार खाना पडता ह इसलिए खाती हू। समय क्या है ?'

तीन बज गए हैं बुआजी।' सुमित्रा निराश उदास होकर बाली।

'तीन बज है। बस ? तुम घबरा गई बहू ? चार साढे चार बज के पहल ता कभी एक बूद पानी गले के नीचे उतारने का मौका नही मिल पाता।

'चार साढे चार बज जात हैं बुआजी ! आपकी ससुराल मे बहुत लाग रहत है ? सुमित्रा आश्चय विस्फारित नेत्रा से बोली।

कहा अधिक लोग है ? एक ही तो जेठ का लडका है और उसकी बहू।

सुमित्रा हैरान होकर बाली, 'ता फिर इतनी दर आप क्या करती हैं बुआजी ?'

क्या करती हू ? पूजा-पाठ करती हू। गुरु गाविन्द को स्मरण करती हू। तुम्हारी सास की तरह मलेच्छ नही हू बहू हरे कृष्ण, हर कृष्ण।

मन ही-मन पहली बार सुमित्रा अपनी सास को सराहन लगी। तसर सिल्क की साडी डालकर अन्नपूर्णा हाथ की माला फिराती फिराती नाचती हुई नाती के इतजाम और घर की व्यवस्था की छानबीन कर रही थी। सब दख-सुनकर उसन समालोचना की आधी चला दी। अतिथि सज्जना और घर क नौकर-चाकर को मालूम हो गया कि एस अद्भुत विवाह के बार मे यदि उस पहले स मालूम हाता ता वह कभी नही आती। मया का डेम लगगा इसीलिए आना पडा। दा दिन जो ठहरेंगी सिफ फल जल

लेकर ही काट लेंगी। खाना नही खाएगी।'

अन्नपूर्णा की इस घोषणा का प्रतिवाद करने की हिम्मत किसी को नही हुई। कारण, शशि बाबू की बडी बेटी कमला भी इस शादी म शामिल नही हो सकी थी। उसके ससुराल वालो ने एतराज किया था। और सच मे, समाज की छाती पर बैठकर समाज की मूछें मुडाने पर क्या लोग उन्हे शाबासी देंगे?'

हरिनाम का झोला दीवार की कील पर टागकर अन्नपूर्णा फल और मिठाई लेकर खाने को बैठी ही थी कि मदाकिनी पूजा का सारा काम निपटाकर आई। राजभोग मिठाई दात से काटती हुई अन्नपूर्णा बोली, 'इस शादी के लिए आरती का थाल आदि तैयार करने म क्या माथा पच्ची कर रही हो। यह तो सचमुच की शादी नही है।'

दिन भर के उपवास से थकी हुई मदाकिनी का चेहरा लाल हो गया। उत्तेजित होकर बोली, 'सचमुच की शादी नही है। यह क्या कह रही हैं आप?'

'माने यह है कि यह तो एक किस्म की अग्रेजी शादी है, उसम यह सब करने की क्या जरूरत है? तुम लोग तो बचकाना खेल कर रही हो अपने मन को बहलाने के लिए। यह सब कुछ करना न करना बराबर है।'

मदाकिनी गभीर होकर बोली, आरती का थाल, मडप, सात फेरे, सभी तो बचकानी चीजें है। इसका आनद तो सिर्फ औरतें ही लेती है शास्त्र के साथ इसका कोई मेल नही।'

'क्या बक रही हो। हमेशा से चलते आए रीत रिवाज बचकाने हैं?'

'हा ननदजी! शास्त्री के घर मे औरतें जो भी करती है, वह बचकाना खेल ही तो है। विवाह का मत्र सब जगह एक समान होता है फिर शादी करने का क्या मतलब?'

अन्नपूर्णा नाराज होकर बोली, तर्क के सिवा तुम्हे कुछ आता भी है? बातो से तुम्हें कौन जीत सकता है? पर एक बात साफ कह देती हू बहू। यह तुम लोगो ने उचित नही किया। अपने पेट की लडकी को भी नही बाध सकी। उसकी 'हा' मे 'हा' मिला दी। छि छि!'

मंदाकिनी व्यंग से मुस्कुराकर बोली, 'हर जगह क्या शासन चलता है दीदी ? पर तुम कह सकती हो कि जोर-जबरदस्ती से कन्यादान और किसी को दिया जा सकता था, पर क्या वो अच्छा होता ? लोग मुझे अच्छा कहेंगे या बुरा, सिर्फ इतने के लिए अपनी संतान की जिंदगी भर का सुख चैन बर्बाद कर दूं मां-बाप की हैसियत से क्या यह उचित होता ?'

अन्नपूर्णा विकृत भाव से बोली 'इतनी बड़ी-बड़ी बात तो मैं जानती नहीं बहू। जो हमेशा से जानती आई हूं सुनती और देखती आई हूं, उतना ही ठीक समझती हूं। जिसे लोग 'छि' करें उसका बाकी क्या रहा।'

'इतने दिनों तक मैं भी यही सब सुनती आई थी और उसी राह पर चली भी थी, पर यह तो मेरे सुख शांति की बात नहीं है। संतान के सुख का प्रश्न है। यहां तो अपने सर पर बदनामी का टोकरा उठाकर भी उनके जीवन को सुखी बनाना होगा।

'क्या मालूम भई—तुम्हारी तरह अधिक उपन्यास और नाटक तो मैं पढ़ नहीं पाई इन बातों का अर्थ भी नहीं समझ सकती।'

'इसमें अर्थ न समझने का क्या है दीदी ? यह भी तुम जानती हो कि ज्यादा ऐंठन से रस्सी टूट जाती है। आजकल के लड़के लड़कियां बड़े-बच्चे हैं पढ़ लिखकर आजाद विचारों के हो गए हैं। अगर घर से भाग कर खुद ही शादी कर लें तो आप रोक सकेंगी ? बालिग होने पर तो कानून भी उनके पक्ष में राय देगा। हम-आप कुछ नहीं कर सकती।

इतने सुशिक्षित लड़के लड़की होंगे ही क्या बहू ? इसका मतलब तो मां बाप की शिक्षा में ही कसर रह गई।

मंदाकिनी खिन्न-सी हंसी हंसकर बोली, 'शिक्षा क्या सिर्फ मां-बाप से ही बच्चे को मिलती है दीदी ! रास्ता-मैदानों पर गली कूचों में, बाजार में, स्कूल कालेज में, किताबों में, संग-साथ में हर जगह ही हर किस्म की शिक्षा बिखरी पड़ी है। किन किन चीजों से कोई उन्हें अलग रख सकता है ?

तभी बातचीत में बाधा पड़ी। सुमित्रा आकर बोली 'मां ! ओ मां ! आइए। आकर देखिए लड़के वालों के घर से कितनी चीजें आई हैं।'

मंदाकिनी मग्न होकर बोली 'अच्छा ! मैं तो सोच रही थी कि उनमें शायद लेन-देन का कोई ख्याल नहीं।'

'है क्या नहीं मां। पर हम लोगों की तरह दही मिठाई मछली जैसी फिजूल चीजों में वे पैसे बर्बाद नहीं करते। अच्छी-अच्छी कीमती साड़ियां और ब्लाउज भेजा है। सिंगार का भी काफी सामान है, और मोती की एक लड़ी।' कहकर सुमित्रा दौड़ कर चली गई। मंदाकिनी भी उसके पीछे भागी।

अन्नपूर्णा गंभीर स्वर में कहती हुई आगे बढ़ी, 'दही, फल, मिठाई जो चीजें दूसरों के काम आएंगी, वह फिजूल खर्च है? हे हरि! क्या ही स्वार्थी युग आया है।

रमा की शादी के बाद शशि बाबू की गृहस्थी से मानो जान ही चली गई। कुछ बुझा-बुझा सा सब कुछ लग रहा था। जवान कुआरी लड़की चिंता का विषय हो सकती है, पर सच पूछा जाय तो घर उसी से खिला हुआ रहता है। लड़की की शादी हो जाने के बाद गृहस्थी का रंग ही फीका पड़ जाता है।

बंगाली घरों में नई शादी के बाद कुटुम्बों को लेकर जिस तरह का आमोद प्रमोद हुआ करता है यहां उसकी कमी थी। चाहे हिन्दू शशि बाबू ने हिन्दू रीति से लड़की का विवाह कर दिया था और बंगाली बहू पाकर लड़के वाले चाहे कितना ही खुश क्यों न हुए हों पर टूटी फूटी बंगला जानने वाले पंजाबी जंवाई का अच्छी तरह से आदर-सत्कार करना थोड़ा मुश्किल होता है। और करने पर भी मन नहीं भरता।

उधर शशि बाबू के एकाएक जागृत हुई साहित्य रुचि में भाटा आ गया था। अब शशि बाबू शतरंज के खेल में रमे थे कि ऐसे समय में मंदाकिनी ने आकर एक खुशी की खबर सुनाई। घर में नए मेहमान आने की खुशी से सभी बहुत खुश थे।

सुमित्रा की शादी हुए बहुत अर्सा बीत गया था, पर अब तक घर में बच्चे की किलकारी नहीं सुनाई पड़ी थी, इसलिए जब खबर मिली तो घर किसी उत्सव की तरह खुशी से झूम उठा।

नई मां का यह नहीं करना चाहिए, वो नहीं करना चाहिए' —के

तरह-तरह के उपदेश देकर मदाकिनी अपने पुराने अधिकारों में मानो वापस आ गई थी और शशि बाबू को भी मनोरंजन का साधन मिल गया था। बड़े दिनों की लम्बी छुट्टी ली थी सुमित्रा ने इस अवसर पर। मदाकिनी सुमित्रा का नौकरी पेशा होना ही बिसर गई थी।

नामकरण के अवसर पर खाने-पीने का बड़ा भारी आयोजन किया गया था बड़ी बेटी कमला को रेखा की शादी मे आने नही दिया गया था। इसलिए इस मौके पर काफी विनती के साथ लड़की को भेजने के लिए लिखा था मदाकिनी ने। चार साल से कमला आई नही थी इसलिए उसका आना भी एक उत्सव के समान ही था।

नामकरण के पहले दिन कमला आई। रेखा उससे दो दिन पहले आ चुकी थी। आज घर म लोगों की भरमार थी। सुमित्रा के चचल, शैतान बेटे को सभालने मे रेखा परेशान हो रही थी। पुराने बगला दोहे, गाने, और नए सीखे पजाबी गाने गा गाकर भी बच्चे का चदन का तिलक, सेहरा और टसर की छोटी धोती बेचारी पहना नही पा रही थी। सुमित्रा हाफती हुई आकर बोली, 'तुम सजा चुकी रेखा? चदन की छोटी छोटी बिंदी डाल दो बच्चे के माथे पर।'

रेखा झूठा गुस्सा दिखाकर बोली, देखा न भाभी, क्या तमाशा कर रहा है। जितनी बार बिंदी लगा रही हू, पोछ द रहा है और रो रहा है।'

सुमित्रा हसकर बोली 'भई इतनी भयकर गरमी, सिल्क के कपड़े चदन, फूल की माला, सारे अगो पर जेवर, बच्चे पर अत्याचार भी तो कम नहीं हो रहा है। बचारा करे भी क्या? तभी रो रहा है।'

'ऊह! बड़ा गुणवान है बेटा तुम्हारा! अभी स इसके दोष ढक रही हो। एक नम्बर का शैतान है।'

सुमित्रा बोली, 'भतीजे को बाद म प्यार कर लेना। अभी सभी लोग बुला रहे हैं। नामकरण लगन निकल जाएगा।'

दस बज रहे थे शशि बाबू व्यग्र भाव से अन्दर-बाहर जा आ रहे थे बोले, 'मुन्न का मामा कहा है? बच्चे के मुह म पहला ग्रास उसी को तो देना है। देर हो रही है।

मदाकिनी नाराजगी से बोली, 'यहा का भाई तो कब का आकर बैठ

है। ये ही लोग बच्चे को तैयार नही कर पा रहे हैं।'

ठीक उसी समय रोते हुए बच्चे को पकडकर सुमित्रा ने उसे सजाई हुई थाली के सामने, रंगोली बने काठ के पीढ़े पर बैठा दिया। सुमित्रा का भाई मुकुल खुशी से बोला, 'अब क्या करना होगा कहिए।'

मदाकिनी स्नेह से बोली, 'भानजे को गोद मे लेकर अब तुम बैठ जाओ बेट और दियासलाई कहां गई। कितना ही क्यो न सभालकर रखी जाए जरूरत के समय कुछ मिलता नही। दियासलाई कौन ले गया ?'

दियासलाई के नाम पर घर मे एक शोर मच गया। उसके बाद चारो तरफ से चार पाच दियासलाई भी आ पहुची। और तभी नजर मे पडा कि थाल की दियासलाई तो दिए के साथ ही पडी थी। अपनी आखो को कोसती हुई मदाकिनी काम मे जुट गई। उसने सुमित्रा से कहा, 'दिया जलाकर थोडी देर के लिए तुम दूसरे कमरे मे चली जाना बहू। लडके के मुह मे अन्न का पहला कौर देते समय माँ को नही देखना चाहिए।'

रेखा और सुमित्रा दोनो ने ही अचभे से पूछा, 'देखना नही चाहिए ? क्या मतलब ?'

थोडी दूर पर सुमित्रा की मा बैठी थी। मुस्करा कर बोली, 'वाह ! ननद भाभी दोनो जसे आकाश से गिरी लगती हो। मैं समझती थी मेरी सुमि को इन बातो का पता नही, लेकिन मेरी समधिन तो पक्की गृहिणी है, उनकी बेटी को तो रीति रिवाज मालूम होना चाहिए था।'

इस सुर मे उनका यह कहना किसी को अच्छा नही लगा। पर सभी चुप रहे।

मदाकिनी बोली, बेटे मुकुल बच्चे को खीर चटा दो, मछली का टुकडा छुआ दो।'

सुमित्रा की मा बोली, 'यह क्या समधिन ! पहले तो बच्चे के मुख म पुलाव दिया जाता है।'

मदाकिनी अवहेलना से, पर मालकिन की हैसियत से बोली, 'नही बहन ! खीर और मछली को ही शुभ अवसर पर प्रमुख माना जाता है।'

सुमित्रा की मा फिर भी बोली, 'मैं ऐसा नही जानती, पुलाव मे सारे शुभ लक्षण होते है। भात आदि तो गरीब भी खाते हैं, पर घी से बना भात

तरह-तरह के उपदेश देकर मदाकिनी अपने पुराने अधिकारो मे मानो वापस आ गई थी और शशि बाबू को भी मनोरजन का साधन मिल गया था। वडे दिना की लम्बी छुट्टी ली थी सुमित्रा ने इस अवसर पर। मदाकिनी सुमित्रा का नौकरी पेशा होना ही बिसर गई थी।

नामकरण के अवसर पर खाने-पीने का वडा भारी आयोजन किया गया था बडी बेटी कमला को रेखा की शादी मे आने नही दिया गया था। इसलिए इस मौके पर काफी विनती के साथ लडकी को भेजने के लिए लिखा था मदाकिनी ने। चार साल से कमला आई नही थी इसलिए उसका आना भी एक उत्सव के समान ही था।

नामकरण के पहल दिन कमला आई। रेखा उसके दो दिन पहले आ चुकी थी। आज घर म लोगो की भरमार थी। सुमित्रा के चचल, शैतान बेटे को सभालने मे रेखा परेशान हो रही थी। पुराने बगला दोहे, गान, और नए सीखे पजाबी गान गा गाकर भी बच्चे को चदन का तिलक, सेहरा और टसर की छोटी धोती बचारी पहना नही पा रही थी। सुमित्रा हाफती हुई आकर बोली, 'तुम सजा चुकी रेखा? चदन की छोटी छोटी बिंदी डाल दो बच्चे के माथे पर।'

रेखा झूठा गुस्सा दिखाकर बोली, देखो न भाभी, क्या तमाशा कर रहा है। जितनी बार बिंदी लगा रही हू पाछ दे रहा है और रो रहा है।'

सुमित्रा हसकर बोली 'भई इतनी भयकर गरमी, सिल्क के कपडे, चदन फूल की माला, सारे अगो पर जेवर, बच्चे पर अत्याचार भी तो कम नही हो रहा है। बेचारा करे भी क्या? तभी रो रहा है।'

ऊह! वडा गुणवान है बेटा तुम्हारा! अभी से इसके दोष ढक रही हो। एक नम्बर का शैतान है।

सुमित्रा बोली, भतीजे को बाद मे प्यार कर लेना। अभी सभी लाग बुला रह है। नामकरण लगन निकल जाएगा।'

शख बज रहे थ, शशि बाबू व्यस्त भाव से अदर-बाहर जा आ रह थे बाले, 'मुने का मामा कहा है? बच्चे के मुह मे पहला ग्रास उसी को तो देना है। दर हो रही है।'

मदाकिनी नाराजगी से बोली, 'बहू का भाई तो कब से आकर बठ

है। ये ही लोग बच्चे को तैयार नही कर पा रहे हैं।'

ठीक उसी समय रोते हुए बच्चे को पकड़कर सुमित्रा ने उसे सजाई हुई थाली के सामने, रंगोली बन काठ के पीढ़े पर बैठा दिया। सुमित्रा का भाई मुकुल खुशी से बोला, 'अब क्या करना होगा कहिए।'

मंदाकिनी स्नेह से बोली, 'भानजे को गोद मे लेकर अब तुम बैठ जाओ बेट और दियासलाई कहां गई। कितना ही क्यो न सभालकर रखो जाए जरूरत के समय कुछ मिलता नही। दियासलाई कौन ले गया?'

दियासलाई के नाम पर घर मे एक शोर मच गया। उसके बाद चारो तरफ से चार पाच दियासलाई भी आ पहुची। और तभी नजर मे पड़ा कि थाल की दियासलाई तो दिए के साथ ही पड़ी थी। अपनी आखो को कोसती हुइ मदाकिनी काम म जुट गई। उसने सुमित्रा से कहा, 'दिया जलाकर थोड़ी देर के लिए तुम दूसरे कमरे मे चली जाना बहू। लड़के के मुह मे अन्न का पहला कौर देते समय मां को नही देखना चाहिए।'

रेखा और सुमित्रा दोनो ने ही अचभे से पूछा, 'देखना नही चाहिए? क्या मतलब?'

थोड़ी दूर पर सुमित्रा की मा बैठी थी। मुस्करा कर बोली, 'वाह! ननद-भाभी दोनो जसे आकाश से गिरी लगती हो। मैं समझती थी मेरी सुमि को इन बातों का पता नही, लेकिन मेरी समधिन तो पक्की गृहिणी है, उनकी बेटी को तो रीति रिवाज मालूम होना चाहिए था।'

इस सुर म उनका यह कहना किसी को अच्छा नही लगा। पर सभी चुप रहे।

मंदाकिनी बोली, 'बेटे मुकुल बच्चे को खीर चटा दो, मछली का टुकड़ा छुआ दो।'

सुमित्रा की मा बोली, 'यह क्या समधिन! पहले तो बच्चे के मुख म पुलाव दिया जाता है।'

मंदाकिनी अवहेलना से, पर मालकिन की हैसियत से बोली, 'नही बहन! खीर और मछली को ही शुभ अवसर पर प्रमुख माना जाता है।

सुमित्रा की मा फिर भी बोली, 'मैं ऐसा नही जानती, पुलाव मे सारे शुभ लक्षण होते हैं। भात आदि तो गरीब भी खाते हैं, पर घी स बना भात

पैसे वाले ही खाते हैं। मुकुल बच्चे को थोड़ा पुलाव भी चखा दे।'

मदाकिनी विरोध कर बैठी। छोटी सी बात को लेकर दोनों समधिन मे मन-मुटाव हो गया।

सुमित्रा सहमी हुई खड़ी थी। आस-पास सभी उदास थे, इस बीच मुन्ने ने पैर पटक कर पानी का गिलास उलट कर सब गोलमोल कर दिया मुकुल नाराज होकर बोला, 'अच्छा ही हुआ। असल काम पड़ा है और तुम लोगों को तक सूझ रहा है। पहले घी या मछली इसका भी कोई माने है ? मैं एक साथ ही सारी चीजें मिलाकर मुह म छुआ देता हूँ।' कहकर मुकुल ने चचल बच्चे के चारो हाथ पैर दबोचकर उसके मुह मे ग्रास छुआ दिया।

सुमित्रा की मा बोली, 'तुम लोगों म शख बजाने का रिवाज भी नहीं है क्या ?'

'ओह ! भूल गई। कहकर रेखा ने शख को हाथ मे ले लिया। सुमित्रा की मा बुदबुदायी, 'क्या पता, किनमे कौन सा रिवाज चलता है।'

किसी उत्सव के अवसर पर दूसरा का मन और मान रखना बहुत मुश्किल होता है। आदत के मुताबिक तक तो किया था मदाकिनी न पर अब वह बुलाए गए मेहमानों की मेहमानवाजी मे लग गई। समधिन को सुनाकर बोली, 'बहू, समधिन को नाश्ता पानी दो। सच म नाती के नाम करण मे नानी का मुह सूख गया है। काफी देर हो चुकी है। पहल थोडी चाय पी लीजिए उसके थोडी दर के बाद शबत ले लीजिएगा।

सुमित्रा की माँ भी नरम होकर बोली 'आपने भी तो अभी तक कुछ नहीं खाया है समधिन !'

मदाकिनी बोली, ससुर के कुल के सभी पूवजा के नाम पर जलपिंड देने की व्यवस्था की गई है, इसलिए मुझे तो उपवास करना पडेगा। पर आपकी बात और है। फिर आपका स्वास्थ भी तो ठीक नहीं।'

इसके बाद फिर मनमुटाव कसा ? औरतो को यदि एक बार कहा जाए 'अहा ! तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है तो वह औरत मानो खरीद ली जाती है।

सुमित्रा की मा बेटी से बोली, अपनी सास के लिए भी चाय नाश्ता यही लाकर द दे सुमि। सुबह से खट खटकर चूर हो गई हैं।'

दोपहर के भोजन के बाद शशि बाबू बोले, 'बहू ! मुन्ने के जेवर उ
कर रख दो। गर्मी से परेशान हो रहा है।'

सुमित्रा शिकायत भरी आवाज मे बोली, 'पिताजी, अब भी आप
मुन्ना कहेंगे, आज से नए नाम स पुकारिए।'

शशि बाबू हस पडे, 'आह हो। क्या नाम पडा है मुन्ने का बहू ? ज
म ठीक से सुन भी नही पाया।'

'अभी भूल गए पिताजी। शाश्वत सुदर नाम पडा है।'

शशि बाबू आखें फाडकर बोले, 'क्या कहा ? क्या नाम रखा है ?

सुमित्रा रुक रुककर बोली—'शाश्वत सुदर !

'बाप रे बाप ! यह नाम तो मेरे दादाजी भी उच्चारण नही क
पाएगे। नाम का मतलब समझने के लिए तो पहले लोगो को पाठशा
जाना पडेगा बहू।

'नही पिताजी, ऐसी तो कोई बात नही है।'

'बिल्कुल सच कह रहा हू। नही बहू, यह नाम नही चलेगा। समधि
आप सुन रही हैं ? नाति का नाम तो याद है न ?'

सुमित्रा की मा मदु आवाज मे बोली, 'आजकल ऐसे ही नामो क
रिवाज है।'

शशि बाबू भनक गए। उन्होंने सोचा था, समधिन उनकी हा म
भरेगी। पर वैसा देखकर बोले, 'नाम का रिवाज तो चलाने से ही चलेगा
बडे लोग पुकार न सकें पोते का नाम, ऐसा रखना चाहिए क्या
किताबी नाम किताबो मे ही शोभता है। बाप चाचा के नाम के सा
मिलाकर रखो 'नरेश'। समझी बहू। मैंने नाम रख दिया, परेश च[illegible]
बेटा नरेश चद्र।'

सुमित्रा हक्की बक्की सी खडी रही। बोली, 'पिताजी इतना पुरा
नाम मेरे मुन्ने को मिलेगा ?'

'पुराना मतलब ? बाप चाचा के नाम के साथ मेल का नामकरण
अच्छा होता है। घर का लडका उसी से पहचाना जाता है।'

सुमित्रा तर्क करती हुई बोली, 'तो फिर आपके लडका का ना

आपके नाम के साथ मिलाकर क्यो नही रखा गया ? जैसे काली भूषण तारा भूषण—।'

शशि बाबू गभीर होकर बोले, 'तर्क मत किया करो बहू। मेरे पोते का नाम मेरी मर्जी से रखा जाएगा। बस ?'

सुमित्रा उदास चुपचाप खडी रही। मदाकिनी पति के इस कठोरपन को ढकती हुई पति से बोली चाहे कुछ भी कहो, 'नरेश' बड़ा पुराना नाम है। मेरे छोटे फूफाजी का नाम था नरेश चन्द्र। जीवित रहते तो अस्सी साल के होते।'

सुमित्रा स्वाभिमान से बोली 'देखिए न मा वह अस्सी साल पुराना नाम पिताजी अपने पोते को दे रहे है। बाद मे पोता ही आपको दोष देगा।'

शशि बाबू दार्शनिक की हसी हसकर बोले, 'इसके बाद से क्या अभी से दोष देगा। हर वक्त ही ताने देगा। बूढ़ा होना क्या कम दोषपूर्ण बात है।'

'ठीक है पिताजी ! आपका दिया हुआ नाम ही रहेगा।' कहकर सुमित्रा उठकर खडी हो गई। मदाकिनी घबराकर बोली, 'उनकी बातो पर कान मत दो बहू। मैंने पोते का नाम रखा है आनदमय।

आनदमय !

सुमित्रा की आखें गोल हो गईं।

मदाकिनी बोली, 'क्या बुरा है ? सुनकर सर पर हाथ धर बैठी ?'

'यह नाम तो उससे भी पुराना है मा।

'होन दे पुराना। नाम सुनकर मन गदगद हो उठता है। 'तुम्हारे उस शाश्वत सुन्दर से कही अच्छा नाम है।

शशि बाबू अवहेलना से बोले 'पुराना और पुराना। उस दिन हमारे एक दोस्त के पोते का नाम रखा गया 'पाराशर' ! यह कोई आधुनिक नाम तो नही ?

सुमित्रा हसकर बोली, 'पौराणिक चीजें ही अब फिर आधुनिक बन गयी हैं पिताजी, सिर्फ मध्य युगीन कोई चीज नही चलती।'

शशि बाबू गभीर आवाज मे बोले, 'क्या पता भई। ये बातें मेरी बुद्धि के तो पर हैं।'

एक बच्चे के नामकरण को लेकर घर मे रग बिरगा खेल चलता रहा।

मदाकिनी तेज दिखाकर बोली, 'जिसे जो मर्जी नाम से पुकारे, पर मैं तो इसे आनद कहकर ही पुकारूगी।'

शशि बाबू खेद के साथ बोले, 'नही भागवान! इस युग के शब्द-कोश मे आनद शब्द है ही नही।'

ठीक उसी वक्त रेखा आकर हाफती-दौडती बोली, 'भाभी! बलवत को फिर से सजा सवार दो, भैया के दोस्त लोग आए हैं, देखना चाहते है।

सुमित्रा की मा हैरान होकर पूछी, 'बलवत? वो कौन है रेखा?'

'आपको नही मालूम? मुन्ने का नाम मैंने बलवत रखा है। श्री मान बलवत सिंह मुखर्जी।'

मदाकिनी बोली, 'बक मत रेखा। ऐसा नाम रोटी खाने वाले तो ससुराल मे ही शोभता है। समझी।'

'भात खाते बगाली से रोटी खाता पजाबी ज्यादा अच्छा है।' कहकर रेखा गुर्राती हुई चली गई। थोडी देर के बाद सुमित्रा की मा लडकी को एक किनारे ले जाकर फुसफुसाकर बोली, 'धन्य है सुमि! तेरे ससुराल का लाड देखकर तो मैं हैरान हू। रत्ती भर का लडका, उसके नामकरण को लेकर क्या हगामा खडा कर रखा है। छि! छि! मैं तो हक्की-बक्की रह गई।'

सुमित्रा सकपका कर बोली, 'क्यो मा?'

'पूछती है क्यो? घर के किसी के साथ किसी की राय नही मिलती। दादा कुछ कह रहे हैं तो दादी कुछ, और बुआ का तो कहना ही क्या। देख देखकर मैं तो ताज्जुब मे पड गई हूँ।'

'इसमे ताज्जुब की ऐसी कौन सी बात है मा? इह बच्चा प्राणो से भी ज्यादा प्यारा है इसलिए सभी का मन चाह रहा है कि उसे अपनी पसद के नाम से पुकारें।

'तू चाह कुछ भी कह।' सुमित्रा की मा ओठो को उलटकर बोली, 'अपने घर का बच्चा किसे प्राणो से अधिक प्यारा नही, पर इतने नखर और लाड। हमेशा से जानती आई थी कि लडके के नामकरण म नानी का

ही जोर होता है पर तुम्हारे ससुराल मे तो सब कुछ उल्टा है।'

एकाएक मुकुल दौडकर आकर बोला, 'दीदी, दीदी जल्दी आकर देखो, तुम्हारे बेटे का नाम क्या होगा इसके लिए ही तुम्हारे ससुर और ममिया ससुर म बाजी लगी है। दोनो ही एक रुपया लेकर हड टल कर रहे ह। एक ने बच्चे का नाम नरेश चद्र रखा है दूसरे ने घटोत्कच।'

घटोत्कच ?' सुमित्रा की माँ मुह बनाकर बोली, 'इसीलिए तो कह रही थी, अजीब नखरे हैं इनके।'

मुकुल बोला, 'मामाजी कह रहे थे, पौराणिक नाम ही अब आधुनिक माना जाता है।'

सुमित्रा हसकर बोली, अच्छा ! फिर तो हमारी नौकरानी ने यशोदा नदन नाम देकर कोई गलती नही की।'

नौकरानी ने भी नाम रखा है ? सुमित्रा की मा व्यग से हसी।

सुमित्रा मीठी मुस्कान के साथ मुलायम भाव से बोली, 'सिर्फ नौकरानी ही नही मा, इस घर के धोबी, नाई, नौकर मधु सभी ने बच्चे का नामकरण कर दिया है। छोटे देवर जी ने विलायत से नाम लिखकर भेजा है। बडी ननद जी भी नए नाम से पुकार रही हैं। श्रीकृष्ण का अष्टोत्तर शत नाम पडा है,बच्चे का।

दूसरी तरफ मुकुद बाबू और रेखा म जोर का तर्क चल रहा था। रेखा बोली, 'मैं तो बलवत सिंह नाम ही रखूगी, और उसे कसरत सिखाऊगी।'

मुकुद बाबू बोले 'पहलवान बनाएगी ? अरे मैं तो उसे सुर की साधना सिखाऊगा।'

'सुर की साधना कराएगे और नाम रखा है घटोत्कच ?'

'उससे क्या होता ? यही तो खासियत हैं।

तर्क का शोर शराबा सुनकर सुमित्रा की मा कमरे म से भागकर बोली, 'हमेशा से जानती थी, शादी बनती है लाखो बातो के आदान प्रदान से, पर यहा तो ऐसा लगता है कि सुमित्रा के लडके के नामकरण म ही

लाख बातें खत्म हो गई है, फिर भी बच्चे का सच मे कोई सही नामकरण तो हुआ ही नही।'

मुकुद बाबू गभीर हसी हसकर बोले, 'सही नाम रखना क्या इतना आसान है समधिन ? अभी तक बगला भाषा के सभी नाम अपने अधिकार मे हैं। एक बार सही नाम रख दिया फिर तो खेल ही खत्म। तरह तरह के तर्क एव कल्पना कुछ नही रहेगी। बस एक नाम रह जाएगा।'

मुकुल बोला, 'यह तो ठीक लडकी की शादी की तरह है न दीदी ?' बस बार जयमाल डाल दिया, खेल खत्म। उसके बाद तो चाहे कितने ही बढिया लडके सामने क्यो न आए, आखे फाड कर देखने के सिवा और कोई चारा नही।'

शशि बाबू चौक कर बोले, 'क्या कह रहे हो मुकुल ?'

मुकुल सभलकर बोला, 'नही ! मैं कुछ नही कह रहा था। नाम से क्या होता जाता है। गुलाब को चाहे जिस नाम से पुकारो सुगध तो उतनी ही बिखेरता है।

सुमिता की मा बोली, यही असली बात है। नाम को लेकर इतनी मारामारी क्यो ? नाम को धोकर कोई पानी पीता है ?'

मुकुद बाबू बोले, समधिन की इस बात से मैं एक राय नही हू। नाम धोकर पानी नही पिया जा सकता है इसका मतलब ? नाम धोकर पानी पीना ही तो इस देश का पेशा है। नाम से क्या होता जाता है—यह तो विदेशों की बात है। हम लोगो के पवित्र देश मे नाम के नाम पर क्या नही करते ? नाम ही सब कुछ करता है। हम लोग काम या करने वाला को नही देखते, देखते हैं सिर्फ नाम। इसलिए तो हमारे देश का परम मत्र ही है, 'नाम।' नाम जपे तो हरि मिले, नाम के गुण से पार लगे।

मदाकिनी असतुष्ट होकर बोली, 'इन सबके बीच मे भगवान को लाने की क्या जरूरत ?'

शशि बाबू बोले, 'हम लोग क्या फालतू हैं ? किसी तरह से यदि थोडा 'नाम' कर सकें तो हम सभी एक-एक देवता बन जाएगे। चाहे तो मैं किसी मठ का महत क्यो न होऊ या चाहे मैदान मे लडता मुक्केबाज, या फिर भानुमति का खेल दिखाने वाला या फिल्मी कलाकार, जनता की

पूजा का अर्घ्य देना होगा। उस समय देश के सारे लोग मेरे नाम को धोकर पानी पिया करेंगे। मेरे नाम से समुद्र में पत्थर तरेगा। नाम ही सब कुछ है समधिन!'

मुकुल वातावरण को हल्का करते हुए बोला, 'फिर क्या? नाम' भजा, 'नाम' की चिंता करो, और 'नाव' के नाम पर सवार होकर वतरणी पार हो जाओ।

सुमित्रा डांट कर बोली, 'चुप रह शैतान। मसखरी करता है। गोलमाल में असली बात तो दब ही गयी। अच्छा एक काम कर, वोट लिया जाय कि मुन्ने को किस नाम से पुकारा जाए?'

रेखा एकाएक बच्चे को गोद में उठाकर उछाल कर खेलने लगी—' नहीं नाम के लिए कोई किसी को मजबूर नहीं कर सकता। जिसकी जो मर्जी उसी नाम से पुकारेगा। इतना कहकर वह खुद गाने लगी।

दादा ने नाम रखा, श्री नरेश चन्द्र
दादी ने कहा—नहीं आनन्द वधन
बुआ ने नाम रखी 'बलवंत सिंह
दोनों हाथ उठाकर नाचे मुन्नाता धिन ता धिन।'

रेखा की विचित्र परोडी सुनकर सभी हंस पड़े। लगा, इस हंसी के बहाव में दिन भर का मनमुटाव और थकान सारे दूर हो गए। पूरा घर निर्मल हवा से भरपूर हो उठा। मुकुल एक कागज पेंसिल लाकर बोला, 'रेखा दी! एक सौ आठ नाम गिनाओ न। अभी तक सिर्फ तीन ही तो कहा है, बाकी भी बोलो न।' रेखा हंस हंसकर गाती रही—

'जननी ने रखा नाम शाश्वत सुन्दर'
जनक ने रखा नाम— बाप धुरधर'
बड़ी बुआ पुकारे, 'बैकुंठ बिहारी'
चाचा ने रखा 'सब गुणधारी'
मृत्य मधु उचारे श्री जगड नाथ
'यशोदा नंदन' के नाम नौकरानी करे दंडवत
'घटोत्कच' रखा नाम मामा दादा मुनि।
नाम को लेकर घर पर चली इस तरह मारामारी।'

एक बार जोर का ठहाका उठा। घर की सारी मलिनता मानो खत्म हो गई। मुकुल बोला, 'यह क्या रेखा दी ? यही समाप्त कर दिया। मेरा रखा नाम तो जोड़ा ही नहीं।

'तुम्हारा ? तुमने भी कोई नाम दिया है क्या ?'

'बिल्कुल ! मैंने मुन्ने का नाम 'रामसिंह' रखा है।' फिर सभी हसने लगे।

फिलहाल शशि बाबू की गृहस्थी को देखकर यह नहीं लगता था कि, इस गृहस्थी के कोना में कहीं कोई धूल है, धुआं है, या कभी आंधी-तूफान उठता है। या फिर पानी बरसता होगा। अचानक यदि कोई देखता तो मन ही मन अपनी गृहस्थी को याद कर जरूर लम्बी सांस भरता और सोचता, क्या गृहस्थी है। निर्मल स्वच्छ आकाश में चन्द्रमा जैसी।'

हो सकता है गृहस्थी का यह चेहरा तुरंत पलट जाए फिर भी इसकी कीमत कुछ कम नहीं है। संयुक्त बंगाली परिवार में त्यौहार या अनुष्ठान के अवसर पर जिस तरह खुशी का ज्वार आता है वैसी सम्मिलित पारिवारिक आनंद की धारा और कहीं शायद ही देखी जाती हो। उत्सव का उत्साह मिटते ही थकान और उदासी का वातावरण छा जाता है। ज्वार के बाद भाटे की तरह।

नामकरण शशि बाबू ने काफी जोर-शोर से किया था। रिश्तेदार भी काफी आए थे। सभी धीरे धीरे अपने-अपने घर चले गए। सिर्फ बेटी कमला अपने पति और बच्चों के साथ रह गयी थी।

हो-हुंगामे के घर में किसने कब खाया, कहां सोया इसका, मन्दाकिनी ख्याल ही नहीं रख पायी थी। अब वो जवाई के देखभाल में जुटी, पर उनका भाग्य ही उल्टा था। जवाई राजमोहन हर बात में पत्नी और साले की बीबी को सुनाकर कहता, 'यहां जड़ काटकर टहनी को पानी से सिंचा जा रहा है। इस घर में जवाई की कद्र तो देख ही ली है। दो गद्देदार पलंग और चार तकियों के बिना जो आदमी घर पर नहीं सो सकता, ससुराल में आकर उसे जमीन में बिछे बिस्तर पर एक तकिए पर सर रखकर सोना

पड रहा है ।'

यह ताना मन्दाकिनी को बार बार सुनना पड रहा था । एक दिन मदाकिनी धैर्य खो बैठी, और गलती से कह बैठी, 'कौन सा लाट साहब का बेटा है ? गृहस्थ घर के लडका को नवाबी की आदत शोभा नही देती ?'

और बेचारी मदाकिनी ने कहा भी किसके आगे ? बेटी दामाद नहीं, उनकी दस साल की लडकी के सामने कह गयी । बस, इस बात का फैलना था कि घर मे मानो आग लग गयी । उसी क्षण बोरिया बिस्तर बध गया । कमला रोती हुई आयी । मा बाप के घर का आराम छोडकर उसे ससुराल के गोशाले मे जाना पड रहा था सिर्फ मा की नासमझी की वजह से । वह इतने वर्षों के बाद कलकत्ता आयी थी । कितने तरह के मनोरजन थे यहा पर वह कुछ भी भाग नही सकी । और अब एकाएक जाना पड रहा था । कमला बुझ सी गई । लेकिन उसने मा से तकरार करना छोडा नही । बोली, 'तुम्हारे इस मुह के आगे मेरा सब कुछ जलकर राख हो गया ।'

शशि बाबू भी आग बबूला होकर बोले 'जीभ को थोडा सभाल कर नही चला सकती थी ?'

मदाकिनी अपने कहे के शर्म से यो ही मरी जा रही थी पर पति के तिरस्कार से खलबला भी गई । रोकर, चिल्लाकर जो कुछ बोली उसका सार यह था जब मदाकिनी ही शशि बाबू के सर्वनाश की जड थी, तो शशि बाबू को उस घर से निकाल देना चाहिए था । विपत्ति दूर होने पर सब कुछ फिर ठीक ठाक हो जाएगा । रिहाई पाकर मदाकिनी की भी जान छूटेगी इस गृहस्थी की जिम्मेदारी से उसे मुक्ति मिल जाए तो वह कहा जाएगी ? इसकी उसे कोई चिंता नही थी । उसका सहोदर बडा भाई अब भी था जो सर छुपाने की जगह और खाना दोनो मे कसर न रखता ।

भैया के अहकार से ही मरी जा रही हो । गुराकर शशि बाबू चले गए ।

थोडी देर तो मदाकिनी पत्थर की बुत सी बनी खडी रही फिर मानो कोई सकल्प लेकर उठ खडी हुई । पति के पास जाकर बोली, 'मैं जवाई के आगे हाथ जोडकर माफी मांगकर आती हू ।'

शशि बाबू क्रोधित दृष्टि से पत्नी को सर से पांव तक देखकर झल्लाकर बोले, 'बहुत कर चुकी। अब और शर्मिंदगी मत बढ़ाओ।'

'जब मैंने गलती की है, तो माफी मुझे मांगनी ही पड़ेगी?' कहकर शशि बाबू का कहना न मानकर वह चली गई।

मालूम नहीं कौन-सी तरकीब से और किस तरह मंदाकिनी ने माफी मांगी कि थोड़ी ही देर में कमला का बंधा हुआ बिस्तर फिर से खुल गया और अब जवाई कुर्सी पर बैठा उठा सिगरेट फूंक रहा था।

उसके थोड़ी ही देर बाद मंदु आंखों से पानी झर झराता प्याज पीस रहा था मंदाकिनी पुलाव बना रही थी, और सुमित्रा अलग से मांस बना रही थी। अब वह चुप रहेगी, यह संकल्प लिए मंदाकिनी चुप ही बैठी थी पर उसके मन के अंदर भी समुद्री तूफान उठ रहे थे। आखिर मंदाकिनी की ही किस्मत इतनी खोटी क्यों थी? मंदाकिनी का अपना लड़का अपने ससुराल में सुबोध नौकर के समान रहता था। सातों जनम में वे कभी भी बेटी दामाद को खास खान का न्योता देकर नहीं बुलाये पर बेटा हर हफ्ते बीबी को लेकर ससुराल दौड़ा जाता था। देते लेते भी कुछ नहीं थे। तीज-त्योहार में भी नहीं। पर मंदाकिनी का इस बार में कुछ कहने का अधिकार नहीं था। बेटा बीबी पाकर ही धन्य हो गया था पोते के नामकरण पर आकर बहू की मां ने भी खरी खोटी सुना ही दी थी, पर बेटे ने चू तक नहीं किया। पर उसके घर का जवाई क्या था माना घर का कुल-देवता आया था। कितनी मिन्नतें और विनती, आने-जाने का किराया तक भरा था। तब कहीं जाकर बेटी आयी थी। और इतना ही नहीं दिन भर 'जी हुजूर' की तरह सतर्क रहना पड़ता था कि कोई भूल-चूक न हो जाय। मंदाकिनी हैसियत से बाहर ही बेटी को देती आयी थी। इस बात को लेकर वह पति से लड़ाई भी मोल ले लेती थी, पर हर चिट्ठी में बेटी लिखती, ससुराल वालों को कोई चीज पसंद ही नहीं आयी।

क्यों? आखिर क्या ईश्वर मंदाकिनी की तरफ से मुंह मोड़े खड़े थे। दुख और आवेश में मंदाकिनी की इच्छा दीवार से सर ठोककर मर जाने की हो रही थी, फिर भी गृहस्थी की चक्की निर्मूल नियमों पर प्रथा-

वत चलाती भी रही। इसी का नाम गहस्थी है।

सहने की सीमा पार हो जाने पर मुह अपने आप खुल जाता है। मदाकिनी कोई इट-काठ की तो बनी हुई नही थी, रक्त-मास की मानवी थी। पर उसे समझने के लिए इस घर मे कोई नही था। जब पति ही ताना कसें कि तुम्हारे मुह के आगे सब कुछ भस्म हो जाता है' तो दूसरा कोई क्या सहानुभूति करे। पर अब मदाकिनी की आखें खुल गई थी।

मदाकिनी ने चिल्लाकर पुकारा, 'मधु! मधु! भाड मे चला गया है क्या?'

सुनते ही मधु भागा भागा बोला, 'आया माजी।' थोडी देर के बाद मधु सामने आकार बोला 'मा जी, आपने मुझे बुलाया?'

'अब आया है? कहा था मुह जला। मसाला पीसते पीसते कौन सा राजकाय करने दौडकर भाग गया था?'

मधु गभीर भाव से बोला, लॉड्री से भाभी के कपडे लाने गया था।

'ओ मा! इस जल्दी के वक्त लाड्री गए बिना काम नही चलता?

'नही मा जी। अभी भाभी दफ्तर जाएगी।

दफ्तर!' मदाकिनी सकपका गई। दफ्तर? बहू का नौकरी पेशा होना—ये बातें तो मदाकिनी भूल चुकी थी, क्योकि सुमित्रा ने बच्चे के होने के पहले से दो महीने और बाद मे आठ महीने की छुट्टी ली थी। इतने दिनो म मदाकिनी बहू के दफ्तर को भूल चुकी थी। इसके अलावा दिन भर सुमित्रा के घर पर रहने से घर भी तरीके से जचा हुआ अच्छा सा लगता था। पर मधु ने पुरानी यादें ताजा कर दी।

मदाकिनी मधु की बात अनसुनी कर बोली, भाभी दफ्तर जा रही है। यह तुझे किसने कहा? उसकी तो छुट्टी चल रही है।'

'छुट्टी क्या जिंदगी भर के लिए मिलेगा माजी?' मधु हसकर बोला, 'दूसरे की नौकरी मामूली बात है? छुट्टी की मियाद खत्म। अब तो ज्वाईन करना पडेगा।' सुनकर मदाकिनी सिर से पैर तक जल भुन गई। छुट्टी खत्म होने का समाचार उसे नही मिला। नौकर ने आकर खबर सुनायी। गुस्सा उसने यह कहकर उतारा कि दफ्तर जाने से बच्चा कौन सभालेगा?

मधु बोला, 'सभालेगा कौन ? मधु ही सभालेगा। उसके रहते काहे की चिन्ता।

मदाकिनी का मिजाज गरम हो उठा। बोली—'अच्छा दिन भर बच्चा लिए लिए तू फिरता रहेगा तो फिर घर गृहस्थी का बाकी का काम कैसे होगा ? मसाला पीसते-पीसते तू चला गया, इसलिए मैं सब्जी नही चढ़ा पा रही थी, कौन करेगा यह सब ?'

हसकर मधु बोला, 'वह तो माजी थोडी आपको भी तकलीफ सहकर चलाना पडेगा। बच्चे को तो छोड नही सकता ?'

मदाकिनी चुप नही रही। जोर जोर से चिल्लाकर बोली 'हा ! सभी का सब कुछ ठीक ठीक चलता रहे। जितना झमला और दिक्कते हो इस बूढी के कधो पर लाद दो। मन मे सोचा था, ईश्वर की दया से बहू की गोद हरी हुई, अब दफ्तर का फैशन वैशन छोड देगी, पर वह मानने वाली थोडे ही है। जा मधु जाकर बहू से कह दे कि मा कह रही है कि जब तक बच्चा चलना नही सीखे, वह दफ्तर नही जाएगी।'

और तभी हसी खुशी का चेहरा लिए सुमित्रा आकर बोली, मा जो भी बना है मुझे थोडा खाना दे दीजिए !' माना उसने और कुछ सुना नही था।

शात सभ्य तौर-तरीके। हल्का सा अच्छा मेकअप। एक सफेद छपाई बूटीदार साडी डालकर सुमित्रा अच्छी दीख रही थी। सुमित्रा के इस तरह के आकस्मिक आविर्भाव से मदाकिनी घबरा गई और सुमित्रा की नम्र विनीत स्निग्ध आवाज सुनकर दग रह गई। यह तो प्रत्याशा के बाहर की चीज थी। सुमित्रा की चाल के आगे मदाकिनी को पराजित होना पडा। पुत्रवधू नम्र विनीत भाव से कह रही थी, 'जो कुछ भी बना है मा मुझे थोडा खाना परोस दीजिए न ?' अब कौन की सास इस पर आपत्ति कर सकती है ? यह पाठक पाठिकाए स्वय ही सोचें।

असहाय नीरस स्वर मे मदाकिनी बोली, 'खास कुछ भी तो नही बन पाया, पर जो कुछ बना है आओ देती हू। पर बहू यह भी कहना चाहूगी कि अब आफिस का फैशन छोडना पडेगा। बच्चा अवहेलित रहेगा और उसकी मा दफ्तर जाएगी ?'

सुमित्रा हसकर बोली, 'अवहेलना क्यो होगी मा ? आप रहेंगी। पिताजी है, मधु भी है। उसके लिए मैं करती भी क्या हू। आप ही लोग तो उसे सभालते है।'

'मैं क्या-क्या कर पाऊगी ?' उन्मन भाव से मदाकिनी बोली, 'तुम लोगो की गहस्थी का छोटा बडा सारा काम तो मेरे ही कधो पर है। पोते को लाड करने का वक्त ही कहा ?'

सुमित्रा चुपचाप खाना खाती रही।

यहा मदाकिनी ने हार तो मान ली थी, पर यह सिर्फ सुमित्रा की बुद्धि की चतुराई यदि थी, तो इससे स्थायी शाति नही खरीदी जा सकती थी। मदाकिनी का दबा हुआ असतोष बिना कारण घर म अशाति फैलाता रहा।

रेखा, बीच बीच म आती रहती थी। वह रहती नही थी, मुलाकात करके चली जाती थी। उस दिन भी रेखा ऐसे ही आ गई थी। बेटी को देखकर मदाकिनी शिकायत करने लगी। बहू के दफ्तर जाने से उसे दिन भर किन मुश्किलो का सामना करना पड रहा था। सब बता रही थी।

ठीक दफ्तर क लिए निकलते समय, जब मदाकिनी का पारा चढा रहता था, मुन्ना घुटने के बल चलते चलते मुह के बल गिर पडा। रेखा जल्दी स उसे गोद मे लेती हुई बोली 'अच्छा मा। मधु कहा है, बच्चे को वह भी तो सभाल सकता है।'

पोते के गिर जाने से मदाकिनी वैसे भी क्रोधित हो गई थी। बोली, 'मधु सुबह से मेरे घर दबा रहा था, देख नही रही हो ?

'तो तुम हर वक्त खिसियाई रहती हो मा! निकलते समय भाभी बचारी कितनी परेशान हो रही होगी, सोचा जरा ?'

मदाकिनी बोली, 'अपनी उस बचारी भाभी से जाकर कहो, लडके को लेकर दफ्तर जाया करे।'

रेखा अब चूकि खुद भी बहू थी, इसलिए उसने स्वभावत ही भाभी का ही पक्ष लिया। गुस्से मे बोली, 'क्यो, भाभी ने कौन सी चोरी की है।

अपने बेटे से भी कहो कि वह दफ्तर से छुट्टी ले ले।'

'अच्छा ! ऐसा भी चलता है ?'

'क्यों नहीं मां। लड़का क्या अकेले भाभी का है ? दोनों नौकरीपेशा, दोनों ही कमाकर लाते हैं। फिर एक को क्या ताने देती हो ? ऐसा इंतजाम कर दो कि महीने में पंद्रह दिन भाभी और बाकी के पंद्रह दिन भैया बच्चे को लेकर दफ्तर जाया करेंगे।'

साफ-साफ कहने वाली रेखा की बात सुनकर मंदाकिनी मानो पत्थर बन गई। जीवन में उसे पहली बार लगा जैसे उसके अपने पेट की औलाद भी उसकी अपनी नहीं थी। स्वाभिमान से मंदाकिनी की आंखें भर आयीं। उसका दुख, उसकी परेशानी कोई नहीं समझ पाता था। पति नहीं, पुत्र नहीं, रिश्तेदार नहीं और अब पेट की लड़की ? लड़कियां तो कम से कम मां का पक्ष लेती हैं पर मेरे भाग्य में वह भी नहीं। जीवन भर फिर क्या कर रही थी मंदाकिनी ? अपनी नहीं, क्या गैर की गृहस्थी में अपने को फूंक रही थी। मंदाकिनी क्या और भी खटेगी ? नहीं। वह कोई पागल तो थी नहीं। बहू नौकरी पर जाएगी, लड़का सदा कटा-कटा सा रहेगा, गृहस्थी का उतार चढ़ाव। छोटे बेटे की अनुपस्थिति के कारण मंदाकिनी का मन अशांत था। पर इन दिनों शशि बाबू बड़े खुश मिजाज रहते थे।

पोता थोड़ा थोड़ा चलना सीख गया था। अस्पष्ट शब्दों में 'दादु दादु' बोलना सीख गया था, शशि बाबू उसी को लेकर व्यस्त थे। शाम ढलते ही शशि बाबू स्वयं बच्चे को कपड़े जूते पहना कर पार्क में घुमाने ले जाते और वहां पहुंचकर पार्क में अपने बूढ़े दोस्तों से बच्चे के गुणों का बखान करते थे। उन दोस्तों के अपने घर पर भी पोते थे, इसलिए उनके लिए इन बातों में कोई आकर्षण नहीं था, पर इसे शशि बाबू समझते तब न ? किसी दोस्त से भेंट होते ही कहना शुरू कर देते—'यह देखिए, क्या जिद्दी बच्चा है। घास उखाड़ना चाहता है। छोड़ेगा भी नहीं। फिर चींटी काट लेगी, फिर रोना शुरू कर देगा और फिर मुझे सहलाना होगा।'

घर लौटकर मंदाकिनी के आगे इन्हीं बातों को दुहराने की इच्छा शशि बाबू की होती, पर उन्हें मौका ही नहीं मिलता। शाम को काम के भंवर से उसे कुछ फुर्सत ही नहीं मिलती थी। और सच तो यह है कि

जब थोडा समय मिलता भी था तो मदाकिनी कुछ सुनना नही चाहती था। उसे ईर्ष्या होनी थी। हिन्दू औरत और पति से ईर्ष्या करे—सुनकर शायद सपूण औरत जाति अपने काना मे उगली डाल लेंगी, पर सच म कहना ही पडता है कि—हा यह सच था कि कई एक बार मदाकिनी का अपन पति मे ईर्ष्या होती थी। पोता भी दादी से अधिक दादु-भक्त था। शशि बाबू इसको अपना गव मानते थे, इसलिए मदाकिनी भी जलती थी। उसकी यह धारणा थी कि पति की तरह अगर उसे भी अवसर मिलता तो वह दिखा दती कि पोता दादु को छोड दादी का भक्त बन चुका है। पर उसे फुसत कहा थी ? पोते से लाड करने बैठती तो गहस्थी का काम-काज कौन करता ? नही तो क्या मदाकिनी बच्चा सभालना नही जानती थी या कि लोरी गाना नही जानती थी ?' पर मदाकिनी यह योग्यता दिखा सके, इसका उस मौका ही नही मिलता था। इसीलिए वह दादु की गोद से दादी की गोद म आने पर ही रोना चिल्लाना शुरू कर देता था। इसे दख इतने लाड में पोते के गाल पर भी मदाकिनी को एक थप्पड मारने की इच्छा होती। इस प्रकार पोते को लेकर जिस स्वगलोक मे शशि बाबू का निवास था, मदाकिनी के पास उस स्वगलोक की कुजी नही थी। पर मदाकिनी शायद इससे भी ऊचे किसी स्वगलोक की चाभी ढूढती फिर रही थी। फुसत मिलते ही वह गगा स्नान के लिए जाती। काली घाट के मदिर मे भी उसने सुबह शाम के पूजा की अवधि बढा दी थी। आम औरतो से वह अलग सी थी। और पार्थिव चीजो की प्राप्ति उसके आग कोई महत्व नही रखती थी—मदाकिनी यही जताना चाहती थी।

पर बिना नीव के यह वैराग्य कब तक टिकता ? जब न तब गगा दर्शन पर शशि बाबू कभी-कभी थोडी छीटाकशी कर देते, फिर क्या था। मदाकिनी रो धोकर शपथ लेती कि इस जीवन मे वह फिर कभी धम कम मे मन बिल्कुल नही लगाएगी। शशि बाबू गुस्सा भूलकर ताज्जुब म पड जात। मदाकिनी का गुस्सा तो उन्ह मालूम न था, पर उसके इस रूप स वे अपरिचित थे क्योकि ईश्वर की कृपा स शोक मनान का भी कोई अवसर नही आया था। किसे मालूम यदि ऐसा कोई मौका मिलता तो शायद कल्याण

ही हाता। शायद मनुष्य के जीवन मे इसकी आवश्यकता भी है। हजारों किस्म के स्नायु और शिराओ से बने इस शरीर मे आसू बहाना भी जरूरी है। इस शरीर यत्र और मस्तिष्क के कोषो मे जो विभाग बने हुए है और उनका जो काम है। उनके लम्बी अवधि तक निष्क्रिय रहने से वे विकृत हो जाते हैं। उसी विकृति के फलस्वरूप बेवजह का असताप पैदा होता है। शायद इसलिए जो दुखी है वे ही स्वाभाविक हैं, और सुखी अस्वाभाविक। जब तक भविष्य के लिए कोई उम्मीद बधी रहती हे तब तक आदमी का मिजाज भी सतुलित रहता है। पर अधेड अवस्था मे पहुचकर टूटा हुआ मन अपना सतुलन खो बैठता है। बाहर के जीवन के तडक-भडक की आड मे कितना कुछ घट जाता है इसका हिसाब कौन रखता है ?

दुनिया के सभी साहित्य सगीन तरुणी नारी हृदय के द्वन्द्व पर आधारित है, लेकिन प्रेम के अलावा क्या मन के अतस्थल मे और भावनाओ का लेकर उथल पुथल नही होती ? किसी प्रौढा क मन के रहस्य क्या इतने अवहेलित है—क्या प्रौढ हृदय मे धूप छाव, प्रकाश और छाया का खेल नही चलता ?

मदाकिनी के हृदय मे भी इस वक्त धूप छाव का खेल चल रहा था। कभी वह उदास हाकर मन ही मन ठान लेती थी कि वह अब किसी की बातो म रहेगी नही किसी से कुछ पूछेगी नही किसी की बात का कोई प्रतिवाद नही करेगी। सिर्फ चुपचाप अपना कर्त्तव्य कर अपना मान बचाएगी। दूसरी तरफ कभी उसका मन उल्टा सोचने लगता था और वह सोचती थी—क्यो ? किसलिए ? तिल तिल के प्यार और पल पल के परिश्रम से इस गहस्थी का उसीने तो सवारा था फिर उस घर के मालिकन के ओहदे से वो क्यो कर हटेगी ? नही अब से वह हर मामले को अपने हाथो मे लेगी। दूसरो के घर की गहिणिया जिस तरह शोर मचाकर हर चीज पर अधिकार के साथ हुक्म चलाती हैं पति से लेकर बहू-बेटो सभी का मुट्ठी म बद रखती हैं उसी तरह वह भी गहस्थी का सारा अनुशासन अपने हाथो मे रखेगी।

मदाकिनी अपनी मर्यादा के बारे मे सोच-सोचकर अन्तर्द्वन्द्व से पीडित

हो रही थी। लेकिन क्यो ? किस ने उसकी मर्यादा पर आघात पहुचाया था ? इसका जवाब देना कठिन था। कौन उसकी मयादा भग कर रहा था, किस तरह से कर रहा था, ऐसे प्रश्नो का जवाब ढूढ पाना वाकई मुश्किल था। किसी घटना को प्रमाणित तो किया जा सकता है पर अनुभूति के राज्य मे प्रमाण नही चलता। मदाकिनी हर पल, हर क्षण अनुभव कर रही थी कि इस गृहस्थी मे उसकी मर्यादा अब पहले जैसी नही रही, पर वह इसे प्रमाणित किस तरह करती ?

प्रमाण सच मे दिखाया भी नही जा सकता था, बल्कि उल्टे पति से लेकर नौकर तक सभी मदाकिनी के मिजाज से डरे-डरे रहते थे। बेटा, बहू तो पास ही नही फटकते थे। फिर, कौन किस रूप से मदाकिनी के मान को ठेस पहुचा रहा था ? मदाकिनी कभी-कभी स्वाभिमान से भरी पति के पास आकर बैठती थी, शिकायतो का ढेर लिए उस समय मदाकिनी की आखें बहुत पीछे छोड आए अतीत को लेकर छलछला उठती। और यदि उस समय शशि बाबू यह कह दे कि इन दिनो तुम बहुत नाराज रहने लगी हो ? तुम्हे समझ पाना मुश्किल है'। तो उसे सुनकर अपमान की अनुभूति से क्या मदाकिनी छटपटा नही जाएगी। पुरुष की अनुभूति उम्र ढलने के साथ भोथरी हो जाती है इस तथ्य का ज्ञान मदाकिनी को नही था।

मदाकिनी के बेटे और बहू बेचारे यही समझते रहे कि उनकी साधारण बात का भी मा से उल्टा जवाब ही मिलता है। इसलिए वे जितना कम हो सके उससे बातें करते और कटे-कटे से रहते। क्या यह उनकी कोई बहुत बडी गलती थी ? अगर वे पलट कर यह बोलते, कि मदाकिनी के कारण घर मे शाति नही तो क्या वे गलत कहते ? या फिर अगर वो यह कहे कि घर की छोटी छोटी बातो की शिकायत लेकर बैठ जाना और सुमित्रा के हर आचरण के साथ, बहुत पीछे छोड आई अपनी उस उम्र के साथ तुलना कर अपने गुण गा गाकर क्या मदाकिनी ने अपनी मर्यादा स्वय नही खोइ थी ? हालाकि यह गलती मदाकिनी की स्वेच्छाकृत नही थी। इतने वर्षों के पराधीन जीवन की सचित ग्लानि और आज के युग मे लडकियो के अधिकारो और आजादी तथा समानता के दावो को देख-देखकर मदाकिनी

का मन क्षुब्ध स्वाभिमान से फूट पडना चाह रहा था। यह ईर्ष्या उसकी सुमित्रा के प्रति नही थी यह ईर्ष्या इस युग के ही लिए थी। यह बात मदाकिनी खुद नही समझती थी तो फिर उसके पति और पुत्र क्या समझते ?

पिछले कुछ दिना से मदाकिनी का मौन चल रहा था इसलिए शाम को जब परेश दफ्तर से अमावस सा काला चेहरा बनकर घर लौटा तो दौडकर जाकर बेटे के कुशल पूछने की इच्छा को मदाकिनी न सभाल लिया। सोची, क्या मालूम क्या सुनाएगा। 'क्या हुआ रे तुझे ?' पूछने पर यदि वह यह कहे, 'होगा क्या ?' और इतना कहकर चला जाए तो ? पर मदाकिनी के बेटे तो बराबर से ऐसे ही थ। सीतेश बचपन स ही बुखार होने पर शरीर छूकर बुखार देखने नही दता था। कहता 'मैं क्या कोई नादान बच्चा हू' और इतना कहकर हाथ झटक दता था। अब यह बातें मदाकिनी को याद नही थी। फिर उस समय मदाकिनी को अपमान का बोध भी नही होता था।

मदाकिनी एसे ही विचारा को लेकर अपन मे डूबी थी कि अचानक परेश आकर पास बठा। मदाकिनी की छाती धक् कर बैठी। क्या ? पहले तो परश कभी जमीन पर इस तरह स नही बैठता था। अब तो स्वाभिमान की मारी मदाकिनी भी चुप नही रह सकी। स्नेह से पूछा, क्या बात है परेश, तबियत ठीक नही है क्या ?'

'तबियत ? नही तबियत तो ठीक है मा'। परश मिनमिनाकर बोला, मन ठीक नही है।

'हाय मैं मर जाऊ ? क्या हुआ है रे ?'

मदाकिनी का उद्विग्न मन एक क्षण मे सभी नातो और रिश्तेदारा पर चला गया। किसी के घर कोई विपत्ति तो नही आई ? बोली ? 'मन क्यो उदास है ?'

'कलकत्ते से मेरा तबादला किया जा रहा है। आज आडर भी आ गया है।'

क्या कह रहा है तू ? बदली तेरी ? तेरा तबादला हो रहा है ?'

यही तो बात है मा। नही तो चिता की कौन-सी बात थी ?'

'एकाएक बदली कैसे हुई क्यो रे ?'

'मालिक की जैसी मर्जी। उसस कौन पूछे ?'

मदाकिनी की आखा के आगे अधेरा छा गया। परेश बदली होकर चला जाएगा ? घर पर परश रहेगा नही ? यह कैसी असभव बात थी। सौतेश जब पढाई छोडकर चित्तरजन मे नौकरी करने चला गया ता छुप-छुपकर मदाकिनी ने न जान कितने आसू बहाए थे—वही सौतेश पिछल एक साल मे विलायत जाकर बैठा है। किसी सात समुदर पार के देश म जान का खच कम्पनी उठाएगी बेटा इसी से खुश था। इससे मा का मन कितना उदास होगा, उसने सोचा तक नही था न सोचे, पर वह कब आएगा इसी आशा मे मदाकिनी एक एक दिन काट रही थी। इसी बीच परश न आकर अब यह खबर सुनाई।

एक पल मे मदाकिनी को लगा, जसे सब कुछ उसके पापा का फल था। ईश्वर का दिया हुआ दड। उसने लडका की अवहलना की थी, उनका उचित यत्न नही किया था यह दखकर भगवान भी उससे रुठ गए थ। चिता मे अधिक द्रुतगामी और काई चीज नही। खोए हुए मन का बाध कर मदाकिनी बोली, जाना बिल्कुल पक्का हो गया है ?

हा मा।'

कहा बदली हुई है तुम्हारी ?

'नागपुर। वहा एक नई शाखा खुल रही है, यहा से तीन आदमिया को भेज रह हैं।

'उन तीन म तू भी एक है ?

'काम जानना हा ऐसा आदमी भी तो चाहिए ?'

थोडा देर चुप रहकर मदाकिनी बोली, कितन दिनो के लिए भेज रह हैं, कुछ कहा ?'

'बदली म यह सब कुछ नही कहा जाता। हमेशा के लिए भी हो सकती है। सरकारी नौकरी ता है नहीं कि कोई नियम स चलेगा।

मदाकिनी लम्बी सास लकर फिर थाडा सहम कर बोली 'बहू भी जाएगी ?'

परेश उठ गया। बोला 'ठहरो मा। पहले खुद जाकर देखू कैसी जगह

है, रहने का इतजाम करू, उसके बाद ही तो तुम्हारी बहू जा सकेगी। रहने के लिए मकान मिल पाना भी मुश्किल होता है।'

'दफ्तर से आया है पहले हाथ मुह धो आ।'

अभी जाता हू।'

'परसो ही जाना पडेगा, यह तो सरासर जुल्म है। जाने की तैयारी नहा करनी पडेगी ?'

इतने समय म ही सब इतजाम करना होगा। वे लोग हम लोगो की तरह नहीं है मा, कि विदेश जाने के दस दिन पहले से तयारी मे लगे रहेगे। सूटकेट के अदर दो चार सूट पट रख लिया बस।'

परेश चला गया। मदाकिनी अस्थिर चित्त से उठ पडी। कल सुबह मधु को कहकर बाजार से दो नारियल मगवाएगी, अच्छे लडडू बनाकर देगी। परेश नारियल के लडडू पसद करता था। कितने दिनो से मदाकिनी ने घर पर कोई मिठाई नही बनाई थी। थोडी सुपारी भी काटकर साथ म द देगी। कहा ठहरेगा, क्या खाएगा क्या मालूम ? थोडे शक्करपारे और नमकपारे भी शीशी म भर देगी। ले जाना तो नही चाहेगा पर छुपाकर रख देगी। कल पति से कहेगी, बाजार से 'हिलसा मछली ले आए।

उसे कुछ भी तो अच्छा नही लग रहा था। शशि बाबू ने पार्क से लौटने म नो बजा दिए। नन्हे से बच्चे को लेकर क्या जरूरत थी इतनी देर तक पार्क मे बैठने की ? मदाकिनी के ऐसा सोचते सोचते घडी बजने लगी एक दो तीन छ सात।'

सात ? अभी सिर्फ सात ही बज रहे थे।

जरूर घडी खराब हो गई होगी।

रात को खाना खाने के वक्त बाप और बेटे म नौकरी की सुविधा और असुविधा पर बातचीत हो रही थी। कम्पनी की नई शाखा का भविष्य क्या था। रहने के इतजाम आदि के बारे मे बातचीत हो रही थी। शशि बाबू विलक्षण व्यक्ति थे। परदेश मे नौकरी पर जाने से लडके की उन्नति की आशा थी, यह जानकर शशि बाबू खुश ही हुए थे बस मन

तो उदास होगा ही, पर उपाय भी क्या था ? और रुपयों से सूद अधिक मीठा होना है। बेटे से अधिक पोता प्यारा था, और पोता तो पास ही रहा।

घर की किसी बात मे वह नही रहेगी, मदाकिनी की यह प्रतिज्ञा अधिक देर तक टिकी नही। जो बातें उसकी बिल्कुल समझ मे नही आती थी उन बातो पर भी वह पूछ-ताछ करती रहती।

मदाकिनी बोली, 'रहने के लिए यदि जगह मिल जाए फिर चिंता काहे की ?'

परेश बोला, 'यहा का घरबार उठाकर सभी वहा चले चलेंगे। वही शायद ठीक रहेगा।'

मदाकिनी उत्साह के साथ बोली, तू ऐसी ही कोशिश कर बेटा। मुझे भी अब यह कलकत्ता अच्छा नही लग रहा है। जीवन भर सोचती रही परदेश जाऊगी वहा जाकर रहूंगी। वहा पहुचकर ही इसे उसे मकान खोजने के लिए कह देना।'

तुम्हारे दफ्तर की तरफ से इतजाम क्या नही होगा ?' शशि बाबू ने पूछा। कम्पनी के प्रति उपेक्षा भाव दिखाकर परेश बोला, ऐसा होता तो कहना ही क्या था। सारी चिंताए मिट जाती। पर यहा तो किराए के नाम पर कुछ भत्ता मिल जाएगा। बस। परेश और शशि बाबू खाना खाकर उठ गए। मदाकिनी सोचने लगी अहा ! अगर भगवान की दया से मकान मिल जाए तो कितना अच्छा होगा। नागपुर तो बहुत दूर है दूर देश मे रहने की इच्छा मदाकिनी की बहुत दिनो से थी।

दोनो ही लड़के घर से बाहर थे। मालिक तो देर से खाना खाते थे। दफ्तर जाते समय खाना सिर्फ बहू ही खाकर जाती थी। सुबह नींद से उठते वक्त हर रोज मदाकिनी को गुस्सा आता था उसे जीवन भर विश्राम का अवसर नही मिला था। गृहस्थी से अवकाश तो मदाकिनी को अब मिलना ही चाहिए था। गृहस्थी तो बहू को ही सभालनी चाहिए थी पर । और फिर इधर मदाकिनी का स्वास्थ्य भी ठीक नही चल रहा

था। रात का खाना हजम नही हो पाता था, इसलिए सिर्फ थोड़ा दूध ही ले लिया करती थी। सुबह भी उठने को जी नही करता था। अचानक एक दिन मन्दाकिनी की जुबान से बात फिसल ही गई। बोली, 'जीवन भर तो बादी ही बनी रही, रिहाई नही मिली। परोसी हुई थाली कभी किस्मत मे जुटी नही।' हालांकि यह बात उसने चुपचाप पति क सामन ही कही थी पर बात सुमित्रा के काना तक पहुच गई। मदाकिनी क सोन की खिडकी के पास ही स्नानघर जाने का रास्ता था। जान-बूझकर सुमित्रा ने खिडकी मे कान नही लगाया था, पर कुछ सुना तो चौंक कर रुक गई। सुमित्रा न सुना, शशिबाबू कह रहे थे, तुम तो रसोइय के हाथ का बनाया खाना पसन्द भी तो नही करती। नही तो तुम्हार शरीर का जो हाल है, एक रसोईया रख लेन मे—।

'बको मत।' मदाकिनी की भकार के आगे शशिबाबू की बोलती बद। 'तुम्हारी गहस्थी म जब तीन सेर चावल का हडा उतारती था रोटियां बनाते कधे दुखने लग जात थे, उस समय रसोइए की बात किसी ने सोची थी? और अब तीन जनो के खाने के लिए रसोईया रखूगी? कर सकती हू। अब भी खट सकती हू, पर सुबह की दौड धूप अब मुझमे होती नही। आराम आराम से कर सकती हू। पर मेरी किस्मत ही एसी है। कहा तो सोचा था कि बहू मुझे बनाकर खिलाएगी, उल्ट मुझे ही उसके आफिस जाने के पहले खाना बनान मे उलझना पडता है।

इत्ता-सा क्षोभ या दुख पति के पास करना नाजायज नही था, पर चूकि बात सुमित्रा ने सुन ली थी, और वो वह लडकी थी, जो शशिबाबू के हिसाब से नासमझी कर घर की बहू के बजाय दफ्तर का बाबू बन गई थी।

उस दिन तो सुमित्रा चुप रही। यथावत खाना खाकर दफ्तर के लिए रवाना हो गई, पर शाम को लौटकर बोली—'खाना नहीं खाऊगी, भूख नही।'

मदाकिनी ने बहू के कमरे म आकर पूछा, भूख क्यो नही है बहू ?' सुमित्रा शात और नम्रभाव स बोली, 'क्या मालूम मा पिछले कई दिना से देख रही हू सुबह का खाना ठीक से पचता नही है। शाम को तबियत

भारी-भारी सी लगती है। और भरपट खाना खाकर काम करने को भी मन ही नही चाहता। सोच रही हू दो चार दिन सुबह चावल खाना ब द कर दू। शायद कुछ फायदा हो। सरल सीधी सादी सी बात थी। मदा-किनी कुछ भाप नही सकी।

सुबह उठकर मदाकिनी ने पूछा, 'एक मुटठो चावल नही खाओगी बहू ? थोडा सा ही खा लो ?

सुमित्रा सादगी भरे चेहरे से बोली, 'नही मा। चाय के साथ टोस्ट ही एक आध ज्यादा खा लूगी।' चाय और टोस्ट तो मधु ही बनाता था, अत मदाकिनी कीछुटटी। कई दिन इसी तरह बीते। रोज ही मदाकिनी सुमित्रा को खाना खाने क लिए पूछती, रोज ही सुमित्रा से एक ही जवाब मिलता, नही मा। मैं इससे ज्यादा अच्छी हू। काम करने म थकती नही। ज्यादा भूख लगने पर टिफिन थोडा और अच्छी तरह ले लूगी।'

टिफिन दफ्तर क कैन्टीन मे आ जाता था इसलिए भी मदाकिनी के लिए काम नही रहा। 'मुन्ने का दूध वो तो सुमित्रा हीटर मे गरम कर लिया करती थी। पर क्या किसी भी गहस्थी म यह बहुत दिन चल सकता है ? किसी के लिए कोई जल्दी नही, प्रतिदिन का ऐसा जीवन ढोना कितन मुश्किल होता था। पूजा-पाठ म बैठकर भी मदाकिनी का मन अस्थिर हो उठता था, मुश्किल तो यही थी।

क्या मालूम ? जो लोग पूजा पाठ म मन लगात हैं, वे सच मे लगा पाते भी हैं या नही ? हाथ म अखड समय खाली पडा था, पोते को अपनी तरफ खीचने की कला का प्रयोग क्या मदाकिनी अब कर पाएगी।

नही। पोता अब भी मधु के सिवा और किसी का नही था। अपन दद्दा से भी अधिक प्रिय उस मधु ही था। वह मधु क आगे पीछे ही मडराता रहता। हो सकता है ऊपर स पैसा देकर सुमित्रा न उसे अपन काबू म कर रखा था।

घर के बाहर बठक के आगे वाले बरामदे म बठे-बैठे मधु और मुन्ना घटो गपियाते। मुन्ने के तरह तरह क प्रश्नो का जवाब भी मधु जो मर्जी देता रहता था, यह काम भी मधु क लिए ही सभव था। ऐसे दोनो दोस्त एक दिन बरामदे म जमे थ कि एक जाटजूट धारी साधु वहा आ पहुच।

भारी आवाज मे हुकारा, 'नारायण ! नारायण ! घर मे कौन है ?' साधु बगाली था।

मधु मुन्ने को गोद मे उठाते हुए बोला—'घर मे बाबूजी नही है।'

साधु उच्चस्तरीय हसी हसकर बोला, 'बाबूजी से मुझे कोई काम नही है मा जी को बुला दो।'

'क्या बला है, कहा से एक फूहड साधु आ टपका। मधु बडबडाता हुआ अन्दर गया और खबर दी, सुनकर मदाकिनी भी घबरा गई। उद्विग्न होकर बोली, मुझे बुला रहा है ? क्या र ? क्या कह रहा है ?

क्या कह रहा है मैं क्या जानू ? बुला रहा है, चलिए न आप।

'अचानक एकाएक मुझे कोई साधु क्या बुला रहा है—' मदाकिनी चिंतित भाव से सर पर कपडा ढककर साडी सभालती हुई आकर बोली 'प्रणाम स्वीकार करें बाबा !

कल्याण हो बेटी। गृह कम म व्यस्त थी शायद ?'

मदाकिनी कुठित भाव से बोली, 'जी बाबा। अधम ससारी जीव है हम लोग, गृहस्थी की चक्की ही हर वक्त चला रही हू।

साधु फिर उच्चस्तरीय हसी हसकर बोला, ससार अधम स्थान है यह तुझसे किसन कहा बेटी ? ससार चार आश्रमो मे से एक है ! लकिन हा, ससार आश्रम का प्रधान धम है अतिथि की सेवा। दरवाजे पर अतिथि के आने पर सारा काम-काज त्याग कर दौडकर आना चाहिए। शालिग्राम की सेवा से भी पहले अतिथि की सेवा करनी चाहिए।'

इसका क्या जवाब हो सकता था ! मदाकिनी भी चुप रही। साधु बोला, 'क्यो दरवाजे पर से ही विदा करन की सोच रही ह क्या ? सोच रही होगी, साधु कही पसे-वसे न माग बठे, है न यही बात ?'

बात सच भी थी। मदाकिनी यही सोच रही थी। साधु की बात सुनकर वह मन ही मन चौंक उठी, कही सचमुच के ही सन्यासी तो नहा ? मन की बात पढ लेत हैं।

साधु हसकर बोल, 'भिक्षा के लिए नही आया हू बेटी ! मैं भिखारी नही हू तेरी भलाई के लिए ही आया हू। देख रहा हू तेरे मन म जरा-सी भी शाति नहीं।'

'बाबा ! घर के अन्दर आकर बैठें ?' मदाकिनी धीरे से बोली। मदाकिनी का आग्रह बढ रहा था। सोच रही थी, ये तो भूत भविष्य बताने वाले सर्वज्ञ साधु निकले। मदाकिनी सोचने लगी, मौका देखकर वह अपना हाथ दिखवा लेगी। क्या पता भविष्य के लिए क्या लिखा है ?

साधु गभीर हसी हसकर बोला, 'अगर तू खुले मन से कहेगी, तभी तो अन्दर आ सकता हू।'

'क्या कह रहे है बाबा ? अन्दर आइए न ?'

मधु की सारी हिचकिचाहट व्यर्थ। साधु गर्व से घर के अन्दर पधार कर कार्पेट के आसन पर बैठ गया। बैठते ही बोला, 'बहुत प्यास लगी है मा ! थोडा पानी तो पिला दे।'

मदाकिनी व्यस्त हो उठी। इधर आकर चुपचाप बोली, 'मधु नोट तुडाने के पैसे तो तेरे पास ही है, जा झटपट अच्छी सी कोई मिठाई लेकर आ।'

'आपको मैं बताए देता हू मा जी ये साधु नही ढोगी है।'

'चुप ! चुप बस कर दौडकर जाकर चार अच्छी सी सदेश की मिठाई और बढिया ताजे रसगुल्ले और एक पाव दही ला ! दौडकर जाना और दौडकर ही वापस आना।'

मधु व्यग से बोला 'रबडी, मिश्री यह सब नही मगवाएगी मा जी ?'

'चुप कर अभागे ! जा फटाफट। साधु के लिए ऐसा वैसा नही बोलना चाहिए। उन्हे मन की बात पता लग जाता है।

हा बिल्कुल अन्तर्यामी जो ठहरे !' मधु बडबडाता हुआ मुन्ने को गोद मे लेकर बाजार की तरफ बढ गया। साधु के पास किस भरोसे छोड भी जाता ?

पत्थर के गिलास मे पानी और पत्थर की ही तश्तरी मे मिठाई रखकर मदाकिनी आकर बोली, 'बाबा, थोडा मुह मीठा कीजिए।'

'यह देखो, बेटी ने तो मुझे मुश्किल मे डाल दिया। मिठाई का मतलब क्या है री बेटी, इतने तरह तरह की अच्छी मिठाइ ? खीर, मलाई आदि। नहा रे। असली मिठाई तो ये मीठी बातें है। तू ने मुझे बाबा कहकर पुकारा, वही मेरा मिठाई खाना था।

'फिर भी बाबा ! गृहस्थ का घर है थोड़ा तो लीजिए।'

'हां बेटी तूने ठीक कहा है। तेरे ही कल्याण के लिए तुम लोगों की चीजें ग्रहण करना जरूरी है।'

बात चीत के दौरान ही नाश्ता हुआ। अब मदाकिनी साधु से विनय करने लगी कि उसका हाथ देखकर साधु कुछ बताए। सचमुच ही बड़ी अशांति में उसके दिन कट रहे थे।

हाथ देखते ही साधु सिहर उठे और साधु का सिहरना देखकर मदाकिनी भी सिहर उठी। 'क्या देखा बाबा ?'

'सब अच्छा है बेटी, सब अच्छा है ! तू तो राजरानी है राजमाता है। सुहागन ही जाएगी, तीर्थ में मृत्यु योग है। हाथ तो बहुत अच्छा है मगर एक बात है—'

'क्या बात है बाबा ?' मदाकिनी आकुल हो उठी।

'वो तेरा जो छोटा बेटा है न ?—जो विलायत में है—बड़ा ही असावधान लड़का है।'

मदाकिनी के ओठों से अस्पष्ट सी एक आवाज निकली, 'बाबा ? क्या उस पर कोई मुश्किल आ पड़ी है ?' मदाकिनी रो पड़ी। 'आप तो अन्तर्यामी हैं बाबा कहिए मेरा बेटा कैसा है ? कई दिनों से मेरा मन उसके लिए छटपटा भी रहा है।'

हां जननी का हृदय जो है। बेटा अभी तो सब तरह से ठीक है, पर आने वाले दिनों में एक विपत्ति का योग है।'

मदाकिनी काठ सी ताकती रही। साधु ने बड़ी भूमिका आदि बांधकर बताया कि मदाकिनी के छोटे बेटे को वाहन से दुर्घटना की आशंका है। और आशंका ही क्यों, निश्चित दुर्घटना का योग है। पर यह योग टल सकता है यदि मदाकिनी साधु का दिया हुआ रक्षा-कवच पहन ले। फिर बेटे की जान सुरक्षित रह सकती है।

मदाकिनी विह्वल सी बोली, मेरे द्वारा रक्षा-कवच बांध लेने पर दूर देशांतर बसा मेरा लड़का सुरक्षित रहेगा ?'

दाढ़ी मूंछ से ढके साधु का चेहरा मुस्करा रहा था। साधु बोला 'पगली बेटी। कहां उसे विपत्ति की आशंका बनी और दूर देश बैठी तेरा

मन भी क्यों छटपटाता रहा है बोलो ?'

अकाट्य तर्क था साधु का ।—मंदाकिनी के मन प्राण तो छटपटा ही गए थे । डाक्टर को दिखाया जाए तो कहेगा स्नायुविक बीमारी की शिकार है मंदाकिनी । पर जो आदमी स्वाभाविक ढंग से घर में घूम फिर रही थी उसके लिए डाक्टर बुलवाता ही कौन है ? मधु तो गुस्से और क्षोभ से अधीर हो उठा, पर मंदाकिनी और साधु के बीच रक्षाकवच सम्बन्धित गंभीर वार्त्तालाप हो रहा था, इसलिए कुछ बोल न सका । उसके बाद मंदाकिनी दुतल्लेवाले कमरे में गयी और अलमारी खोलकर कुछ लाकर साधु के पैरों के पास रखकर प्रणाम किया । साधुजी ने आश्वासन दिया—तीन दिनों में ही रक्षाकवच मिल जाएगा । एक लाख जाप और तीन दिनों तक हवन करना जरूरी है । मंदाकिनी ने जो तीस रुपये दिए थे वो तो हवन के खर्चे लिए थे । साधु महाराज कुछ पारिश्रमिक लेंगे क्या—छि छि साधु क्या व्यापारी होते हैं । पूजा के आसन में बैठे मन उचाट हो गया इसलिए दैव आदेश से मंदाकिनी के दरवाजे पर आए थे । वो तो सिर्फ निमित्त मात्र थे । जो कुछ हो रहा था बैकुंठ में बैठे भगवान ही तो कर रहे थे ।'

'गोविन्द गोविन्द' कहते हुए साधु ने प्रस्थान किया । उनके तुरत बाद शशि बाबू घर लौटे । घुसते ही चिल्लाए 'दरवाजा इस तरह खुला क्या पड़ा है रे मधु ? कहाँ है तू ?

मधु विनयपूर्वक बोला 'जी मधु तो यहीं पर है, अभी-अभी गोविन्द गया है न ?' 'गोविन्द' शब्द के साथ मधु ने कहा 'गया है'। यह ठीक व्याकरण सम्मत भाषा नहीं थी ।

शशि बाबू विस्मय से बोले, 'गोविंद कौन ? कौन है यह गोविन्द ?'

जी, बहुत बड़ी जटा थी । बड़ी बड़ी दाढ़ी मूछें । भगवा वस्त्र पहने हुए था ।

'मसखरी छोड़कर सीधी बात कर ।'

'आप कहने भी कहाँ दे रहे हैं बाबूजी ? एक साधु बाबा आए थे

छोट भैयाजी के एक्सीडेन्ट की खबर लेकर।'

'ऐं!' शशि बाबू सामने पड़ी कुर्सी पर धम-से बैठ गए। बोले, 'क्या कहा? किस बात की खबर लेकर आया था?'

'आने वाले अमावस के दिन विलायत मे छोट भैयाजी का ऐक्सीडेन्ट होने वाला है न? उसी की खबर लेकर साधु जी रक्षाकवच माजी को देने आए थे। कालीन के आसन पर बैठकर पत्थर की तश्तरी मे सदेश, रसगुल्ले वही खाकर गए हैं—'

शशि बाबू मधु की बात का सारांश समझ गए बोले, 'यानि कोई ठग आकर कुछ ठग कर ले गया है—यही न?'

'क्या सत्यनाश वाली बात कह रहे हैं बाबू जी? वे ठग नही थे, तीन काल की बातें बता सकते थे, महापुरुष अन्तर्यामी भगवान थे। माजी की मृत्यु कहा होगी, यह तक बता गए हैं।'

रसोई म बैठी मदाकिनी सब सुन रही थी। मधु पर गुस्से से तन बदन जल रहा था उसका। पर वो न तो प्रतिवाद कर पायी न ही बात को अस्वीकार कर सकी।

रसोई के दरवाजे पर आकर शशि बाबू बोले, 'कितना ले गया?'

मदाकिनी भारी मुह से बोली, 'दुनिया म सभी ठग पाजी नही होते समझे?'

'वो तो मैं समझ ही रहा हू। पर बात यह है कि कितना दिया?'

'नही बताऊंगी। मीतू के लिए कई दिनो से मेरा मन कितना घबरा रहा था।' कहते-कहते मदाकिनी का गला रुध आया।

'ओ हो, क्या मुश्किल है। ठीक है। मत उतावली होओ, पर इस-लिए तुम—?'

'नही तुम मुझे कुछ नही कह सकते।' मदाकिनी रुआसी होकर बोली।

'ठीक है मैं कुछ नही कहता। कितने रुपए गल गए यह जानने का अधिकार भी मुझे नही है क्या?'

पीछे खड़ा खड़ा मधु बोला, 'मामूली रकम थी। कुल तीस रुपए तीन दिन के बाद कवच लेकर आएगे।'

'ऐं! तीस रुपए? तीस रुपए तुमसे ठग कर ले गया? मैं तो

सोच रहा था पाच रुपए लिए होगे। अत मे तुम इस तरह ठगी ही गई। क्या तुम सोचती हो, कवच लेकर वह साधु यहा फिर आएगा ?'

मदाकिनी आखो से आग बरसाती हुई बोली, 'अभी राय क्यो सुना रहे हो ? तीन दिन बीतने दो न ?' मदाकिनी का चेहरा देखकर शशि बाबू ने और कुछ बोलने की हिम्मत नही की। पर तीन दिन कटने कटाने की जरूरत नही पडी। थोडी ही देर बाद सामन वाले पडोसी जतीन बाबू पुकारने लगे—'शशि बाबू, शशि बाबू !

'क्या बात है जतीन बाबू ?'

थोडी देर पहले आपके घर एक जटाजूट धारी गेरूआ पहने साधु घुसा था न ?' जतीन बाबू का स्वर उत्तेजित था।

शशि बाबू बोले, 'हा सुन तो मैं भी रहा हू। मैं घर पर उस वक्त था नही, क्यो— ?'

'काफी कुछ हथियाकर ले गया होगा ?'

'हा अच्छी रकम ली है। कवच के नाम पर तीस रुपए ले गया।'

'क्या कह रहे हैं ? ती इ स रुपए। हमारे घर पर मिठाई खाने के लिए दो रुपए माग रहा था। मेरी पत्नी की जिरह स मिठाई खाने की उसकी इच्छा ही स्वाहा हो गयी। अब सुन रहा हू कि अनिल बाबू के यहा से एक नया कपडा और चार रुपये ठग ले गया। और अब आपके घर पर भी। हम लोगो का केप्टो, यानि कि मेरा भानजा बता रहा था कि यह आदमी नम्बरी चोर था आपके घर अच्छा दाव मारा ? केप्टो कह रहा था ।'

'वह जानता है क्या ?' शशि बाबू ने पूछा। ठगे जाने की बात दूसरो को मालूम पडने से उनकी नाराजगी स्वाभाविक थी।

जतीन बाबू बोले, 'बोल तो रहा था, मौवाली की तरह फिरता रहता था। सभी उसे दागी चोर के रूप मे पहचानते हैं। सुनते हैं कि हमारे नौकरानी से पूछताछ कर रहा था कि आपके बच्च कितने हैं ? उनकी शादी हुई है कि नही। कौन कहा रहता है, आदि आदि।'

समझ गया। तीस रुपए का दड लिखा था सा सहना पडा—' कहकर शशि बाबू ने नमस्कार कर जतीन बाबू को विदा करना चाहा और जतीन

बाबू नमस्कार लौटाते हुए सोचते हुए गए—हू ! अपने को बहुत बडा समझता है, मानो तीस रुपयो का नुकसान इसके लिए कुछ भी नही। ऐसे चालबाज आदमियो का क्या पता क्या होगा।

नुकसान का अफसोस तो शशि बाबू को घर के अदर आकर हुआ। बोले, 'सुन रही हो ? जतीन बाबू क्या कह गए ?'

मदाकिनी ने चेहरा बिना मिलाए ही जवाब दिया 'फुटपाथ पर जाकर तो मैं खडी नही थी कि पडोस-पडोस के लोग क्या कह गए है, यह जान पाती।'

'जीवन भर तो छुपकर बात सुनती ही आई हो, एकाएक ऐसे कैसे बन रही हो ? अच्छे साधु के सस्पर्श मे जो आई हो। जानती हो तुम्हारा वह साधु बाबा है कौन ? दागी चोर है। समझी कुछ ? जतीन बाबू धिक्कार बताकर गए है। उनकी पत्नी से तो दो रुपए निकाल न सका वो साधु।'

मदाकिनी भी भन्ना उठी। बोली, 'उसकी बीबी ? भिखारी तक उसके हाथ से मुट्ठी भर आटा या चावल नही निकाल सकता।'

शशि बाबू लम्बी सास खीचकर बोले, 'तभी तो जतीन बाबू मकान बनवा सके। और मेरे घर मे ? हु ! हर समय सदाव्रत का दफ्तर खुला पडा है !'

मदाकिनी के दुर्बल स्नायु पर दबाव पडा। डाट फिर भी सही जा सकती है, पर व्यग आदमी को झकझोर देता है। मदाकिनी गुस्से से बोली, 'तुम्हारा पैसा मैंने बर्बाद किया था, दिए देती हू। यह लो'—कह कर अपने उगली से अगूठी उतारकर शशि बाबू के सामने रख कर चल दी।

शशि बाबू थोडी देर तक हक्के-बक्के से खडे रहे, फिर धीरे से वहा से खिसककर मुकुद बाबू को चिट्ठी लिखने बैठे। उन्होने लिखा कि मदाकिनी का इलाज जरूरी है, शरीर का न सही मन का। मुकुद बाबू की गैरहाजिरी मे उन्हे बडी दिक्कत उठानी पड रही थी। पिछले छ-सात महीना से मुकुद बाबू मधुपुर जाकर रह रहे थे। वहा से जब न तब बहन बहनोई को मधुपुर आकर कुछ दिन बिताने के लिए लिखते रहते थे। पर इन्हें फुरसत मिले तब न ? ... फुरसत मिले भी तो कैसे ! मुकुद बाबू की तरह

झमेलाहीन आदमी य लोग तो थे नही कि उनकी तरह मधुपुर जाकर दोस्त के खाली मकान म रहते। गहस्थी के हजारो बधन मे ये जक्ड हुए थे।

इसी बीच शशि बाबू के जीवन मे एक उल्लेखनीय परिवतन थाया। जतीन बाबू के प्रेरित करने पर एक दिन वे उनके गुरु के दशन के लिए गए। और दशन कर आने के बाद तुरत उन्होने अपने मन की इच्छा जाहिर की कि व 'माया कानन' के उस महाराज से दीक्षा लेंगे। भूत के मुह मे राम नाम ?

शशि बाबू ने आखिर दीक्षा का सक्ल्प कर ही लिया।

मदाकिनी बोली, 'भाग का शबत तो नही पिया है ? प्रसाद के पेडे मे अफीम की गोली भरी हुई होगी ?' ऐसी बातें पहले शशि बाबू ही साधु सयासियो के लिए कहते रहते थे। पर आज मदाकिनी उन्ही बातो को दोहरा रही थी। शशि बाबू हमशा ही कहते आए थे कि ये लोग प्रसाद के साथ अफीम खिला देते हैं, तभी लोग आश्रम छोडकर आ नहीं पात। वे कहते, 'बडे मजे से ये लोग भाग के शबत का लुत्फ उठाते हाग तभी तो 'बाबा महाराज' के प्रति भक्तगणो का इतना आकषण होता है। इसलिए आज मदाकिनी के व्यग पर शशि बाबू नाराज नही हुए। स्निग्ध हसी हसकर बोले, 'जाऊगा जाऊगा, तुम्ह भी एक दिन लेकर जाऊगा। देखूगा, वहा पहुचकर तुम क्या कहती हो। क्या बताऊ तुम्ह वह जगह 'माया कानन' नही लगेगा जसे नदन कानन है। फाटक के अदर पैर रखते ही मैं भूल गया इस कूडे-कचरे वाली दुनिया मे जीता भी हू।'

मदाकिनी थोडा कौतूहल दिखाकर बोली, 'बहुत शिष्य हैं क्या ?'

'क्या गिनाऊ। पर ताज्जुब की बात तो यह थी मानो सभी गूगे थे। किसी की जुबान पर एक शब्द नही। तस्वीर से हिलते डुलते नजर आते थे। और क्या ही बगीचा था। कितने तरह-तरह के फूल उसमे खिले थे। उसके बीचोबीच पत्थर की वेदी थी उसके चारो तरफ हिना के झाड थे। रात को फव्वारे का पानी रगीन कर दिया जाता है। यह सब अपनी

गाडी के पीछे जब दूसरी गाडी खडी होती थी तो पैदल चलने वाले राही का जीवन सकट मे पड जाता था।

जतीन बाबू के पास एक जीप गाडी थी। जान पहचान वाले से उन्होने सेकेंड हैंड खरीदी थी। शशि बाबू कई दिन आते जाते रहे चलते चलते गर्व के साथ जीतन बाबू बोलते, 'गाडियो की भीड देख रहे हैं न शशि बाबू ? हम लोगो की तरह नगण्य शिष्य महाराज के कम ही हैं। सभी शिष्य बडे धनी लोग हैं।'

सुनकर शशि बाबू थोडा चुप हो गए।

अपने को जतीन बाबू तुच्छ बता रहे थे, फिर भी तो उनका निजी मकान था, अपनी गाडी थी, चाहे वो कैसी ही क्यो न हो। लेकिन वहा शशि बाबू का क्या ?

एक और भी कारण से कभी कभी शशि बाबू थोडे गुमसुम से हो जाते। जब वे देखते कि जो लोग फूलो के बडे बडे गुलदस्ते और मिठाई के डब्बे लेकर चमकती हुई गाडी से उतरते, महाराज के चेले-चाटे उन्हें माना हाथ पर बिठाकर महाराज के पास तक पहुचा देते थे और जो लोग मिठाई का छोटा-सा डब्बा या प्रणामी के थोडे रुपए देते उनकी तरफ ये लोग देखकर भी उनकी अनदेखी कर देते। महाराज के दर्शन के लिए वे कातर होकर घूम रहे थे।

शुरू-शुरू मे जतीन बाबू के कहने पर शशि बाबू अच्छी मिठाई फूल फल ले जाते थे। मदाकिनी को लेकर जिस दिन आए थे उस दिन भी। पर रोज रोज देना उनके लिए भी सभव नही था। एस तो जतीन बाबू भी महाकजूस थे, पर मदाकिनी को ताज्जुब लगता था कि वे साधुजी के आगे मुक्त हस्त दान देते। इन लोगो के साथ आना भी अब अटपटा-सा लगता था।

रिश्तेदारो की शादी-ब्याह मे आए हुए उपहारो का जिस तरह विश्लेषण किया जाता था, किसने क्या दिया, उपहार उचित तरह था या नहीं ? दूसरा के उपहार से तुच्छ तो नहीं इन बातो को लेकर कौतूहल और मन अस्थिर कर देने वाली स्थिति यहां भी थी। मदाकिनी देखती थी, एक गाडी मे आने पर भी जतीन बाबू की पत्नी किस तरह कोहनी स

धक्का मारकर चट से महाराज के चरण तले पहुच जाती थी और मदाकिनी की तरफ मुड़कर भी नही देखती थी। शशिबाबू को लगता, जैसे जतीन बाबू जो उन्हे साथ लाते थे यह भी अपना बड़प्पन जताने के लिए ही हालांकि वड़े तो वे थे ही। वे आश्रम कमेटी के मेम्बर भी थे। उनकी बात ही कुछ अलग थी।

कुछ दिन इसी तरह से बीते। जतीन बाबू ने आश्वासन दिया था कि महाराज से अनुरोध कर व शशिबाबू को सपत्नीक उनकी कृपा दिला देंगे पर अपनी गाड़ी मे इन लोगो को और ले जाने आने का उनका उत्साह थोड़ा मदा पड़ गया था। वे अब ऐसा भाव दिखाते मानो शशिबाबू की प्रतीक्षा करने म उनका कीमती समय बर्बाद हो रहा था।

दो दिन लगातार शशिबाबू तैयार होकर जतीन बाबू के यहा गए पर महाराज से कोई विशेष गोपनीय वार्तालाप के कारण वे जल्दी चल पड़े थे, ताकि भीड़ बढ़ने के पहले ही वे महाराज की कृपा दृष्टि प्राप्त कर सकें। अत मे एक दिन मदाकिनी ने स्पष्ट कह ही दिया—'उनकी गाड़ी मे अब और हम नही जाएगे।'

शशि बाबू बोले, 'आखिर क्या ?'

'नही ! कल मन को ऐसी ठेस लगी। धिक्कार आ रहा था अपने पर। दो दिन तो खुद ही बुलाकर ले गए, पर कुछ दिन से देख रही हू ।'

वैसे उनके चेहरे पर नाराजगी बनी रहती है। इस बात पर ध्यान तो शशिबाबू का भी गया था, इसलिए मदाकिनी की बात का उन्होने प्रतिवाद किया नही। मदाकिनी फिर बोली, 'कल मैंने अपने काना से सुना एक मोटी सी औरत से जतीन बाबू की पत्नी कह रही थी, कि ये जो वठी हैं न ऐसे हमारे कधो पर सवार हुई है कि क्या कहू। रोज हमारी गाड़ी म ही आती है। थोड़ी देर पहले आ सकू, महाराज जी के साथ ज्यादा दर रह सकू उसका भी उपाय नही। और महाराज जी पर इनकी भक्ति कितनी है ? आती है तो हाथ मे थोड़े फूल भी जुटाकर नही ला सकती। चार ईंची पेड़े का डब्बा लेकर आने मे इन्हें दाम भी नही आती थी।'

अब तुम्ही बताओ ऐसी टिप्पणी सुनने के बाद भी कोई किसी के गाड़ी मे जा सकता है क्या ?

शशि बाबू थोडा चुप रहकर बोले, 'अच्छी बात है। अब से हम लोग खुद ही जाया करेंगे।'

अगले दिन से शशि बाबू खुद टैक्सी लेकर महाराज के 'माया कानन' म जाने लगे। पर उनका दुर्भाग्य, उनके इतने रुपए खच हो जाते और किसी को मालूम भी नही चलता। ऊपर से टैक्सी से उतरते ही मान और मर्यादा का सफाया हो जाता। घर की गाडी की महिमा ही अलग होती है, चाहे वह जीप गाडी ही क्यो न हो। वह गाडी कही भाग तो नही जाएगी। जब भी जरूरत पडे खोजने या बुलाने जाना तो नही पडेगा। चाहे मर्जी जहा जितनी देर बैठो, वह पतिव्रता सती नारी की तरह आपकी प्रतीक्षा म बैठी रहेगी।

इतने सालो के बाद शशिबाबू को लगा, रेखा ने ठीक ही कहा था, गाडी खरीदने मे ही पैसो की साथकता है। उस दिन उसकी बाता पर शशिबाबू ने ध्यान नही दिया था, पर आज उस बात को लेकर सोचने पर भी कोई फायदा नही। सारे पसे तो पख लगाकर उड चुके थे।

वे टक्सी से गए। दस रुपए के पेडे ले गए, पर भाग्य ऐसा कि जतीन बाबू देख भी न पाए थे कि न जाने कहा से कौन आकर झपट कर डब्बा ले गया और फिर किस भडार म जाकर जमाकर दिया, ईश्वर ही जानता है। जतीन बाबू ही यदि नही देख सके तो मुट्ठी भर रुपए खरचने से फायदा क्या ?

मुट्ठी भर रुपए तो होगे ही। भाव भाक मे खचने के कई दिना के बाद जब शशि बाबू हिसाब जोडने बैठे तो चौक उठे। ये क्या कह रहे थे वे लोग ? हिसाब जोडकर शशि बाबू को मालूम पडा कि अथ के बिना पर-माथ को पाना सभव नही। कृष्ण को पाने के लिए कष्ट न करने पर भी मामला खर्चीला था। इसके अलावा और भी किस्म किस्म के अनु भव होने लगे। महाराज शशिबाबू की तरह आलतू फालतू भक्तो की उपेक्षा कर जिन बडे और धनी व्यक्तियो को दान देते, अपने कथाप कथन से धन्य करते, अगले ही क्षण वे भी आलतू फालतू जमे हो जाते जब पैसा या मगरमच्छ कोई धनी मारवाडी सेठ एकाएक आ जाता। हाल

ऐसा था कि महाराज के विश्राम के समय भी उनके लिए दरवाजा हर वक्त खुला रहता।

सुमित्रा ने पूछा, 'मा आप लोग आज आश्रम नही जाएगे ?'

मदाकिनी का मन टूट चुका था, पर बहू के सामने अपने टूटे हुए दिल के इतिहास का बयान नही कर सकी, क्योंकि 'मायाकानन योगोधाम' की इतनी महिमा बखान कर चुकी थी कि अब उसके विरुद्ध कुछ कहना ठीक नही होता। हालांकि बहू से छुपाने के और भी कारण थे, पर फिलहाल उन्हे रहने दीजिए।

सुमित्रा के फिर पूछने पर मदाकिनी बोली, 'नही। रोज रोज तो अब नही जाऊगी। दिन भर खट कर आकर फिर तुम्हे रसोई भी सभालनी पडती है—'

इस वाक्य से मदाकिनी का मान भी बचा और बहू के प्रति स्नेह भी जताना हुआ। पर सुमित्रा ने इस स्नेह की परवाह नही की। बोली, 'ऐसी क्या बात है मा ? थोडा सा ही तो खाना बनाना पडता है, मुझे कुछ भारी नही लगता। आपका चित शात रहे, ऐसा ही काम कीजिए।'

'इत्ता सा खाना बनाना भारी नही लगता' ये बात मदाकिनी को चुभ गई, वह चुप नही रही। बोली, कुछ भी हो—सुबह मुट्ठीभर चावल खाना पसद करती थी वह भी तुमने आजकल छोड रखा है, और शाम को घर लौटकर खुद ही बनाकर खाओगी ? दफ्तर से आकर पखे के नीचे घडी दो घडी आराम करने की आदत थी सो उसके बदले अगर आग मे तपोगी तो शरीर टिकेगा कैसे ?'

वहू आगे कुछ कहती इससे पहले ही मधु ने कहा, 'अगर यही बात है तो मा जी, भाभी जी तो आपकी तरह साग, बगन दसेक सब्जिया बनाती भी नही और आच मे झुलसती भी नही। देखिए न, पिछले कई दिनो से आप शाम को घर पर थी नही, घर बिल्कुल शात था। भाभी दफ्तर से आकर हाथ मुह धोकर चूल्हे को जलाकर पहले तो चाय बनाती खुद पीती और मुझे भी देती। दूध उबालकर मुन्ने को पिलाती और उसी बीच बाबू

जी और आपके लिए पूरा खाना बनाकर ढँककर रख देती। दूसरी तरफ कुकर मे मानो जादू से झटपट भाभी का और मेरा चावल बन जाता। मास, मछली यदि कुछ हुआ तो वह भी बना डालती। कुछ भी हो मा जी, दफ्तर जाने वालो की बुद्धि कुछ और ही होती है।'

एक मिनट तक तो मदाकिनी वहा खडी रही फिर बोली, 'कष्ट नही होता तो अच्छी ही बात है।' और इतना कहकर अपने कमरे मे चली गई।

इतने वर्षों से मधु को मदाकिनी अपनी ही स्नेह छाया से सीचती आई थी, आज अच्छा बदला चुकाया मधु ने। पर यह बात क्या सिर्फ मधु की थी? जरूर मदाकिनी की अनुपस्थिति मे मधु के साथ आलोचना हुई होगी। न जाने और क्या क्या बातें होती होगी। गुस्से से दिशाहारा सी मदाकिनी यह हिसाब भी नही लगा सकी कि सुमित्रा जैसी मर्यादा शालिनी लडकी घर के नौकर के साथ घर-गृहस्थी की बात कर सकती है या नही? मदाकिनी के ही प्रश्रय से बेवकूफ मधु आज जो मुह मे आए बक पाने का साहस जुटा सका था। पर यह बात मदाकिनी को समझाए कौन?

'बाबू जी, मा जी ने कहलाया है कि बड़े भैया जी की चिट्ठी आई है सो पढिए।'

मधु के हाथ से चिट्ठी लेते वक्त शशि बाबू को थोडी हैरानी हुई। उनके नाम लिफाफे की चिट्ठी? मा बाप को चिट्ठी तो परेश बराबर पोस्टकार्ड मे ही लिखता था। चिट्ठी खाली हुई थी यानि मदाकिनी चिट्ठी पढ चुकी थी। शशि बाबू पढने लगे। शुरू मे आलतू फालतू की बहुत सारी बातें लिखने के बाद परेश ने सूचित किया था, 'बडी कोशिश करने के बाद मैं एक कमरे का फ्लैट जुगाड कर सका हू—खान-पीन की बडी दिक्कत है। होटल भी काफी दूर पडता है। इसलिए अगली छुट्टी मे मैं सुमित्रा को अपने साथ लेता आऊगा आदि-आदि। एक सुसमाचार-यहा आने के बाद उसे सहायक मनेजर का ओहदा मिला था, वेतन भी खूब बढा था, इसलिए सुमित्रा को अब और नौकरी करने की जरूरत नही। इसीलिए मैंने पहले से आप लोगो को सूचित करना आवश्यक समझा।

कब पहुचूगा, इसकी खबर अगली चिट्ठी मे दूगा।'

शशि बाबू ने दो बार चिट्ठी को उलट-पलट कर देखा। नही, मा बाप के वहा जाने का कही कोई उल्लेख पत्र मे नही था। लडके को खाने पीने की तकलीफ हो रही थी, इस बात का शशि बाबू स्वीकार नहा कर सक। अपनी पत्नी को अपनी नौकरी की जगह लिवा जाना उचित नही लगा। चिट्ठी पढकर शशि बाबू का दिल किसी दूसरे ही कारण से धडक उठा। बहू चली जाएगी, यानि मुन्ना भी उसके साथ ही चला जाएगा। और इन सबके जाने के बाद एक गहरा सूनापन । पिछले कुछ दिनो तक 'माया कानन' के मोह मे प्राण प्यारे पोते की जो अवहेलना हुई थी, इधर शशि बाबू उसे ब्याज के साथ चुकाने मे जुटे हुए थे। वे मुन्ना को रोज शाम घुमाने ले जाते और लौटते समय कोई न कोई खिलौना खरीद कर लाते, नही तो टॉफी, चाकलेट आदि। दद्दा और पाते के बीच शाम का गपशप की बैठक जमती। मधु भी इस सभा का एक महत्वपूर्ण सदस्य था। दिन अच्छे कट रहे थे। जीवन मधुर लगन लगा था, पर सहसा यह कसा छन्द पतन ?

चिट्ठी पढने के बाद से मदाकिनी अपनी आखो के आगे अधेरा देख रही थी। बहू और मुन्ना के चले आने के बाद इस गृहस्थी का चेहरा कसा होगा—मालिक, मधु और मदाकिनी ? हमेशा घर छोटा पडता था। अब वही घर खाने को दौडेगा।

लेकिन यह बात कही नही जा सकती थी। चाहे सब कुछ क्या न खत्म हो जाए, पर मान-मर्यादा का प्रश्न तो खत्म नही होता। तुम लोगो के लिए मन उदास हो जाएगा, घर मे सूनापन छा जाएगा—यह कहकर उनके आगे छोटा भी नही हुआ जा सकता था मन का जो कोना रिस रहा था, वही से असतोष, गुस्सा और विरोध, तरह-तरह से निकल रहा था।

मन ही मन मदाकिनी ने सकल्प किया—वह भी अब अपने भया के पास मधुपुर चली जाएगी। मालिक की मर्जी, वह यही रह। और रहग नही तो जाएगे कहा ? 'गृहस्थी उठा दूगा' कहने भर स ही ता गृहस्थी उठाई नही जा सकती न ?

परेश वहू को ले जाएगा, इस बात से सिफ मदाकिनी और शशि बाबू ही नाराज और असतुष्ट नही थे, वहू खुद भी मुश्किल मे पडी थी। पति क लिए उसका मन उदास तो रहता ही था। याद भी आती थी। खाने पीने की दिक्कत की बात सुनकर भी उसे अच्छा नही लगता था, पर उसके पास इसका इलाज भी क्या था ? उन्होने तो साहब की तरह हुक्म जारी किया था—तुम लोगो को लाने के लिए पहुच रहा हू, उसके पहले नौकरी छोडकर तैयार रहना। खूब अच्छा-सा एक बगला मिला है। पहले ता यह मैनेजर का ही बगला था, तस्वीर सा सुदर बगला है। आकर देखना, मुझे छोड उसी से प्रेम हो जाएगा। मुन्ना लान मे खेलेगा इसलिए खूब सफाई करवाई है आदि आदि। लुभावनी छवि थी इसम तो शका नही थी। फिर भी सुमित्रा काई पागल तो थी नही। अगर छुट्टी उट्टी मिल जाती तो पर छुट्टी भी कहा बची थी ? जमा पूजी यहा तक कि आगे मिलने वाली भी सारी छुट्टिया तो सुमित्रा ने खच कर डाली थी।

अब वह क्या करेगी ? पति के पास जाए या नौकरी पर टिकी रहे ? एकाएक रेखा घम स विस्तर पर आकर बैठ गई। बोली, 'क्या ? एक तरफ पति ? दूसरी तरफ नौकरी ? देखो, आखिर काटा किधर भुकता है।'

शादी के पहले रेखा थोडी गभीर प्रकृति की थी, बहुत मिलनसार भी नही थी। अपने अध्ययन म ही जुटी रहती। बडे भाई भाभी के प्रति उसके मन म आदर था। गप नप हसी मजाक वह सीतश के साथ ही करती थी। पर नादी के बाद उसम बदलाव आ गया था। वह काफी मिलनसार बन गई थी माना नादी के बाद उसकी हिम्मत बहुत कुछ बढ गई थी। बात बात म वह ननद भाभी क मधुर रिश्ते को ध्यान रखकर बात करती। और सुमित्रा भी धनी घर की वहू इस ननद को काफी मान दती। सुमित्रा की धारणा थी कि अपनी जाति के ससुराल वाला से दूसरी जाति के ससुराल वाले कही अधिक अच्छे होते हैं। सुमित्रा और रखा के बीच नागपुर जान की बात पर चचा हो रही थी। परश की चिट्ठी पाकर

सुमित्रा मुश्किल मे पड गयी थी। उसे गुस्सा भी आ रहा था। सास ससुर के व्यवहार से भी वह सहमी हुई थी। परेश को उसे यह सब लिखने के पहले उससे सलाह लेनी थी। सास ससुर तो सुमित्रा के जाने को निश्चित ही मानकर बैठे थे, इसलिए मुन्ने के विरह की आशका से शशि बाबू विह्वल थे, और बेटे ने मा के आने के बारे म कुछ लिखा नही था, इसलिए मदाकिनी अपमान से आहत थी। वैसे तो मदाकिनी जब भी मौका पाती वह सुनाती, बेटा मेरा वहा अकेला पडा है, नौकर के हाथ का खाना खा खाकर न जाने उसका क्या हाल हुआ होगा, और बहू यहा बग लटकाकर दफ्तर दौडी जाती है। ठीक ह तुम ससुर और बहू यहा रहो, मैं अपने बेटे के पास चली जाऊगी। उसे भी आराम मिलेगा, और मेरे मन म भी सतोष होगा।

पर परेश की चिट्ठी से तो मामला ही पलट गया था। मदाकिनी मन ही मन मरी जा रही थी। बेटे के पास जाकर रहने की उसकी बडी इच्छा थी। कितनी ही बार उसने यह बात दुहराई भी थी। जिन्दगी भर तो कलकत्ते मे ही बीती थी। कही और जाकर रहने की उसे बडी ही इच्छा थी। पर उसका दुख समझ पाने लायक अनुभूति सुमित्रा म कसे होती? उधर सुमित्रा का मन भी नही मान रहा था। नौकरी छोडना? वह भी असभव था। उपाय एक ही था। वह कुछ दिन छुट्टी लेकर नागपुर घूम-फिर आए। पर छुट्टी भी तो हाथ मे ज्यादा नहीं थी। खैर दो चार दिन के वास्ते ही थोडे से दिन हस खेलकर वापस आ जाएगी।

इधर सास-ससुर भी बात की गहराई म डुबकी नही लगा रहे थ। व एक बार स्पष्ट रूप से यह नही पूछ रहे थे 'आखिर बहू तुमने क्या निर्णय लिया? दफ्तर के बार म क्या सोचा है?' और जाने की तयारी मे थोडा हाथ बटाना चाहिए, कत्तव्य का यह छोटा-सा बोध भी उनम नही था। जो कुछ बात-चीत चल रही थी वह सब मुन्ने का उपलक्ष मानकर। मानो मुन्ने का अपने बाप के पास जाना कोई बडा अपराध था, और इस अपराध का सारा दोष मुन्ने के मत्थे ही मढा जा रहा था। तभी तो शशि बाबू दूधपीते बच्चे को जो स्पष्ट बात भी नही करता था, उससे कहते 'जा जा, भाग यहा से। दद्दा के प्रति प्यार जताने की कोई जरूरत नहीं।

दद्दा को तो तू ठेंगा दिखाकर जा रहा है। जो तेरा अपना है तू तो उसके पास जा रहा है। तेरा बूढा दद्दा तो मुझे याद ही नहीं आएगा, तो फिर क्यो तुझे कधे पर बिठाकर बाजार घुमाने ले जाऊ, या पार्क मे ले जाऊ ? बोल ?'

दद्दा की उपेक्षा से रोता हुआ मुन्ना मधु की गोद मे जाकर गिर पडता और बोलता—'दद्दा तो बिलकुल खराब है।' शशि बाबू बच्चे के दुख के आगे अपना दुख बडा मानकर टिप्पणी करते—'हा हा, दद्दा तो तेरा खराब है ही, क्योकि तू अब बडे पेड मे अपनी नाव जो बाध रहा है।'

दूसरी तरफ मदाकिनी पोते को दूध भात मसलकर खिलाती हुई दबी जबान मे बोलती—'दो चार दिन और सडे हुए हाथो का बनाया खा ले बेटा। इसके बाद तो तू अपने बडे बाप के पास बावर्ची के हाथ का चाप-कटलेट खाएगा। है न ?

मानो मुन्ने की उम्र चाप और कटलेट खाने की थी।

सुमित्रा अगर आसपास कही होती तो इनका आक्षेप और भी अधिक बढ जाता। और बातो के जहर से रात दिन सुमित्रा झुलसती रहती। पर इनके ये वाक्य उसके प्रति स्नेह की ही एक विकृत अभिव्यक्ति थी, यह समझकर वह उन्हे क्षमा करे, इसकी भी हम सुमित्रा से अपेक्षा नही कर सकते।

इन्ही सब कारणो से कभी तो सुमित्रा को लगता जैसे सब कुछ छोड छाड कर चले जाना ही ठीक रहेगा। नौकरी म टिकने का मतलब ही था, इनके बीच इस वातावरण मे अपने को बेच देना। उसे लगता जसे मूल बात थी जीवन से खुशी नामक वस्तु को छाटकर सिर्फ मशीन की तरह वह काम करती रहे, पसा कमाती रहे। क्या फायदा ऐसा पैसा कमाने का ? और फिर परेश के एक हुक्म पर वह अपनी आजादी छोड उसके आश्रय म जाकर रहे, यह भी तो एक भयकर हार थी। अब क्या किया जाए ?

सुमित्रा किसे छोडे—अपनी खुशी या अपनी आजादी ? अपने ही प्रश्नो का उत्तर ढूढ पाने मे असमर्थ सुमित्रा जब जर्जरित सी हो रही थी ठीक उसी समय रेखा ने भी आकर वही बात दुहराई, 'लो भाभी अब

दो म से किसको रखोगी ? यानि कि पति या नौकरी ? हिसाब जोडो, पति बडा है या नौकरी ?'

जवाब म सुमित्रा थोडी फीकी हसी हसकर बोली—'पति तो हाथ स निकलने वाली चीज नही है भई। लेकिन नौकरी को अगर पकड कर नही रखो तो हाथ से निकल जाती है। इसलिए ।' रेखा बात काटकर बोली, 'इसलिए तुम नौकरी को ही पकड रखोगी, यही बात है न ? पर भाभी तुम गलत कदम उठा रही हो, बहुत ही गलत कदम। यह कोई दो चार दिना की बात नही है। भैया को जब वहा का सहायक मनेजर बना दिया गया है तो फिलहाल वह वहा स्थायी रूप से रहेगा। हा सकता है भविष्य म उसे पाटनर भी बना लें। इसलिए इसे पूरी तरह से एक स्थायी व्यवस्था ही समझो। इस समय अगर तुम अपनी जिद मे अडी रहोगी ता हा सकता है स्वाभिमानवश भैया फिर तुम्हें कभी बुलाए ही नही। समझी कुछ ? पति हाथ से निकलने वाली चीज नही है, यह समझकर निश्चित रहना बेवकूफी है भाभी ! हो सकता है कानूनन वह तुम्हारा हक का हो, रहे पर उसके मन से तुम्हारा उतर जाना कोई असम्भव बात भी नही।'

सुमित्रा बोली 'तो क्या बुढापे तक अब छूटा तब छूटा मानकर सभल सभलकर डर के मारे थर्राकर चलना चाहिए ?'

'अवश्य। आखिरी उम्र तक। मन तो एक क्षणभगुर मिट्टी का भाड है। तुम्हारी क्षणिक गलत विवेचना से दूसरे का मन टूट सकता है। बात कुछ समझ म आ रही है ?'

'बडी पडिताइन बन रही हो। इस उम्र म इतनी बातें कहा से सीख ली ?

विश्लेपण कर-करके किसी व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के साथ उचित व्यवहार न होने के कारणो को ढूढना ही मेरा पेशा है। काय और कारणा पर विचार कर मैं बहुत जघय आचरण वाले व्यक्ति को भी माफ कर सकती हूँ।'

'तो तुम फिर महामानव के स्तर तक पहुच चुकी हो। मुश्किल तो मुझे है। मैं अपन स्वाथ के भडार को सभालने मे कही तुम्हार भैया की मिट्टी के बतन-सा हृदय तोड बठू और तुम्हारे भैया टूटे हुए दिल

से किसी नागपुरी कमला के प्रति आकृष्ट हो जाए तो रखा तुम अवश्य ही अपने भैया को माफ कर दोगी ?'

'मन के टूटने पर हर कोई कही और मन को दे बैठता है तुम्हारी यह धारणा ही गलत है भाभी ! मन टूट गया है, यही तो बडी भारी क्षति है। बाहर स शायद यह बात पकड मे भी नही आती, पर मन की गहराइ म शून्यता का बोध तो खटकता ही है। क्या भाभी, कैसी कवयित्री की तरह बोल रही हू ? है न !'—कह कर रेखा हस पडी।

हसी मजाक म सुमित्रा की इस समय कोई रुचि नही थी। इसलिए थोडा उत्तेजित होकर बोली—'ता फिर तुम लोगो का यही कहना है कि इतनी अच्छी जो नौकरी है उसे मुझे छोड देनी चाहिए ? पिछले ही महीन डीसट लिफ्ट मिली है, अब किस मुह से ।'

रखा सहानुभूति के साथ बोली, 'तुम्हारी हालत मैं समझ सकती हू भाभी ! तुम्हारी जो परिस्थिति है उस परिस्थिति मे मुझे भी निणय लना कठिन होता। फिर भी मुझे लगता है—प्यार स बढकर कुछ और है ही नही। आर्थिक आजादी के ऊपर उसे जगह दी जा सकती है। प्यार की खातिर एक बडा सा त्याग करने म एक आनन्द है।'

सुमित्रा खिन्न हसी हसकर बोली, 'आनन्द है। अगर इस त्याग की मर्यादा वह प्यार का आदमी समझे तब न ? समझेगा या नही, सदह ता इसी बात का है।'

रखा बोली, 'समझेगा क्या नहा। असल बात जरूर समझ म आती है। अच्छा भाभी ! भैया का गए हुए करीब एक साल हा रहा है न ?'

दस महीने करीब हो गए।

'एक ही बात है। सच म इतन दिन से भया बेचारा अकेला रह रहा है, इसलिए भी उदास हागा। इधर मुन्नी को छोडकर यहा अकेला रहना होगा यह साचकर पिताजी चिता म घुल जा रहे है। कमजोर पड गए हैं।'

'वह तो दग्ध ही रही हू।' सुमित्रा निष्प्राण भाव स बोली। इनकी बात खत्म भी नही हा पाई थी कि बाहर स मुकुदबाबू की आवाज आइ—'बटी कहा हो ?'

'मामाजी !' रेखा छलाग लगाकर उठ पडी। बोली—'मामाजी आप अभी मधुपुर से आ रहे हैं क्या ? कब लौटे ?' रेखा के पीछे पीछे सुमित्रा भी बाहर निकल आई।

मुकुदबाबू सभी के दोस्त थे। सभी के सलाहकार भी थे। ससुराल में एक इसी व्यक्ति पर सुमित्रा सच्चे मन से श्रद्धा करती थी। मानती भी थी, इस बार मामाजी काफी अरसे के बाद आए थे, इसलिए आकस्मिक खुशी का ज्वार कम होने पर सुमित्रा अपने कर्त्तव्य के बारे मे मामाजी की राय मागेगी, इसी सकल्प के साथ सुमित्रा चाय बनाने चली गई।

मुकुद बाबू शशि बाबू की चिट्ठी पाकर ही आए थे। बहन के बार मे ऐसी वैसी कोई बुरी खबर पाकर वे नही आए थे। शशि बाबू ने लिखा था, मदाकिनी मे मानसिक रोग के लक्षण दिखाई पड रहे हैं।

बहन को देखकर मुकुद बाबू हसकर बोले, 'क्यो री, तेरे कधे पर भी साहित्य चर्चा का भूत सवार हुआ है क्या ?'

मदाकिनी हैरान होकर बोली, 'साहित्य चर्चा ?'

शशिबाबू मुकुदबाबू को आखो से इशारा कर रहे थे। मुकुदबाबू ने अपने को सभाल लिया। बोले, 'ओ हो साहित्य चर्चा की बात कह रहा था न ? वहा एक दिन एक मैगजीन मे किसी मदाकिनी देवी का लेख देखा। रसोई के बारे मे कोई लेख था। सोचा शायद तूने ही लिखा होगा।'—

'हू !' मदाकिनी एक गहरी सास लेकर बोली, 'वो विद्या भी अगर आप सिखाते भैया तो इस युग म सबकी नजरो मे मैं अवहेलित तो नही होती।'

'फिर अपना दिमाग खराब कर रही है। कौन तेरी अवहेलना कर रहा है। इस उम्र मे क्या शशिभूषण तुझे सर प बिठाकर नाचेगा ?'

शशिबाबू बोले, 'देखो, तुम्ही देखो सालेजान, यह बात आखिर इसे समझाए कौन ?'

मदाकिनी नाराजगी से बोली, 'तुम चुप भी रहो। इतने दिना तक भैया प्रवास म रहकर आए हैं। मधुपुर कैसी जगह है, वहा क्या मिलता है

कुछ गप शप हो, वो सब कुछ नही । तुम साले बहनोई मिलकर मेरे पीछे पड गए । वहा कैसे रहे भैया ? दिन मजे से कट गए होगे ?'

'कैसा था यानी ? क्या मैं कभी खराब भी रहता हू ? मैं बुरे हाल मे कभी था, क्या यह तू याद करके बता सकती है ? 1922 मे एक बार मुझे सर्दी जुकाम हुआ था और 1941 मे सर दर्द । उसके बाद से अब तक तो दुरुस्त रह रहा हू ।

मुकुदबाबू की बात सुनकर सभी हस पडे । शशिबाबू बोले, 'इतना ही अगर स्वास्थ्य मजबूत था तो फिर आठ महीने सथाल परगने मे रहने क्या गए थे ?

मुकुदबाबू गभीर हो गए, 'हर वक्त शरीर के लिए ही जगह बदलने की जरूरत नही पडती है । मन के लिए भी स्थान परिवर्तन की जरूरत पडती है । कभी-कभार कुछ दिन बाहर बिताकर आने से मन का स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है । पर तुम लोग यह कब मानने वाले हो । गहस्थी गहस्थी का शोर मचाए फिरते हो । सदा बेचैन । मदा थोडे दिनो के लिए परेश के पास जाकर रह आ सकती थी ? अच्छी जगह है । अच्छा बगला भी मिला है ।

'अच्छा घर कहा मिला है ? शशिबाबू गभीर होकर बोले, 'परेश ने लिखा है बडी कोशिश के बाद उसे रहने के लिए एक फ्लैट जुटा है ।'

मुकुदबाबू बोले, 'क्या कह रहे हो ? मुझे तो उसने लिखा था खैर छोडो उस बात को । अच्छा या बुरा, कुछ भी हो, रहने की एक जगह तो है न ? यह सब तुम लोगो का सिर्फ बहाना है । मा और बेटा कुछ दिन इकट्ठा नही बिता सकते ? असल मे कलकत्ते की इस नमकीन हवा और नल के पानी का आकर्षण छोडना कठिन है । मैं तो यही कहूगा, मदा तू परेश के पास थोडे दिनो के लिए चली जा । कुछ दिनो के लिए घूम फिर आ । शरीर मन दोनो म बदलाव आएगा । बहू तो यहा है ही । तेरा घर घर नौकर भी है । शशिभूषण को कोई दिक्कत ही नही होगी ।'

बहू के रहने की बात पर मदाकिनी मौन रही । रेखा कुछ कहना चाह कर भी सहम कर रह गई । सिर्फ शशिबाबू व्यग से बोले, 'बहू कहा रह रही है ? वही तो जा रही है ।

बहू नौकरी छोड दे। वे पत्नी और पुत्र को अपने साथ लिवा ले जाएग। नौकरी कोई गुड्डे गुडियो का खेल है कि एक बात पर उसे छोड दे। मेरे साथ कोई सलाह मशविरा तक नही ठीक है ! इसलिए मैं भी मुह म ताला लगाए बैठा हू। क्या जरूरत है मुझे उनकी बातो मे पडने की ?

मुकुदबाबू मन ही मन मुस्कराए। वे जानते थे—शशिभूषण शुरू से बहू की नौकरी के विरोध मे थे, पर आज उनका सुर बदला हुआ था। वे ही अब नौकरी के महत्व को समझा रहे थे। इसका मतलब बडा सीधा था। बेटा अपनी पत्नी और पुत्र को अपने पास रखना चाहता था। मध्यम वर्गीय हिंदू गृहस्थी मे बेटे का यह न्याय पूर्ण अधिकार मा बाप प्रसन्न चित्त से नही ले पाते। पिछले युग म तो पति की नौकरी की जगह पत्नी का जाना और साथ रहना निदनीय पाप क समान था, इसलिए बहुए डर के मारे जाने की हिम्मत ही नही जुटा पाती थी। वैसे इस युग के लडके लड कियां इस बात को समझ गए हैं कि प्रशसा से सुख अधिक कीमती चीज है। इसलिए मा-बाप अपने मन की भडास किसी न किसी बहा। निकाल कर अपने लडके के मन की खुशी मे बातो से ठेस पहुचाकर जी की तसल्ली कर लेते हैं। यह बात अपने ही पैरो पर कुल्हाडी मारने जसी है, यह होश भी इनको नही रहता।

घर के मालिक का मालकिन के बिना गुजारा नही या मालिक के बिना मालकिन का बडी असुविधा होती है य बातें बुर्जुग लोग बडे आडम्बर के साथ कहने मे सकोच नही करते, लेकिन जवान बटा अपनी तरुणी पत्नी का साथ मागे, इस कामना के साथ मा।ा गहस्थी जमीन के नीचे धस जाती है।

मुकुदबाबू कुछ कहने ही जा रहे थे कि मदाकिनी बोली—"मैं भी भैया चुप हो गई हू। तुम कह रहे थे न कि मैं परश के पास जाकर कुछ दिन रहू। क्या कहू भैया—परेश ने बहू के जाने के बारे म लिखा है। मेर नाम का तो कही उल्लेख तक नहा है। परदश म अगर बेटा रह, या बहू वहा जाए तो मा ही जाकर उसकी घर गहस्थी बसाकर आती है। है कि नही तुम्हीं कहो ? पर मेरा बेटा तो लायक है, उसे मा की मदद का क्या जरूरत ?"

मुकुंदबाबू थोड़ा अवाक हुए, क्योंकि परेश को वे बराबर थोड़ा डरपोक और दब्बू ही समझते आए थे। ऐसा लड़का एकाएक मां-बाप को हूट आउट कर दे, ताज्जुब की बात थी। वे समझाने लगे कि यह मंदाकिनी की मनगढ़न्त बात थी। मंदाकिनी अपनी गृहस्थी संभालने के पीछे मरती खपती थी इसलिए मां को बुलाने की हिम्मत परेश नहीं कर पाया था। इत्यादि इत्यादि। पर मुकुंदबाबू के समझाने से ही समझ जाती, मंदा ऐसी धातु की नहीं बनी थी। वह अविश्वास के साथ बोली—'भैया तुम अपने सीधे मन से यही समझ रहे हो। मेरा बेटा परेश ऐसा नहीं था यह सच है, पर इस तरफ से उसे समझाया बुझाया जा रहा है।' कुछ और कह सके इसके पहले ही समझाने-बुझाने वाली स्वयं चाय नाश्ता लेकर हाजिर हो चुकी थी।

चाय रखकर सुमित्रा बोली, 'हीटर खराब हो गया था, इसलिए चाय बनाने में देर हो गई मामाजी।'

'देर कहां हुई है बेटी? मेरे मधुपुरी रसोईए की चाय बनाने की यदि सुनोगी बेटी तो ताज्जुब करोगी। सुबह मुझे चाय मिले, इसलिए रात ही को वो वह सब कुछ की तैयारी रखता है। सुबह मुझे एक प्याली में अधठंडी गमछा निचोड़े हुए पानी की तरह चाय देकर अपने को कृतकृतार्थ मानता है।'

सुमित्रा और रेखा दोनों ही हंस पड़ी—'ऊफ! मामाजी इतनी बात आप बनाकर भी कह सकते हैं।'

'बनाकर बोल रहा हूं? सच्चाई मालूम करना है तो चलो मेरे साथ, चलकर परख लो। मुझे यकीन है कि परेश भी ऐसे ही किसी नौकर के पल्ले में पड़ा है, इसलिए बहू की नौकरी छोड़कर जल्दी पहुंचने के लिए लिखा है।'

शशि बाबू बाजार जाने के लिए उठ पड़े, मंदाकिनी रसोई की तरफ गई—भैया को बिना खिलाए कैसे जाने देती? बाकी के लोग गपशप करते रहे।

सुमित्रा स्वाभिमान भरा बोली, 'मामाजी आप भी मुझे के लिए ही कहेंगे?'

मुकुदबाबू मीठी सी हसी हसकर बोले, 'मैं किसी पक्ष को लेकर कुछ नही कहता बेटी ! बिल्कुल निरपेक्ष व्यक्ति हू। सुनने मे आया इसीलिए कहा।'

'मुझे आपकी सलाह चाहिए मामाजी ! उसी भरोसे बैठी हू। आप ही कहिए मेरा कत्तव्य क्या है ?'

मुकुदबाबू प्रसन्न मुद्रा मे बोले, 'कई मामलो मे दूसरो की सलाह कोई कीमत नही रखती बेटी ! यह पूणत तुम्हारा निजी मामला है। सलाह सिफ अपने मन से मागो। देखो मन क्या कहता है।'

'यह तो कोई काम की बात नही हुई मामाजी ! कभी-कभी मन वत मान की खुशी को महत्व देकर भविष्य के लिए नुकसान मोल ले लेता है। आप लोगो की विलक्षण बुद्धि की कीमत इन मामलो मे सबसे अधिक है।

'अगर ऐसी बात है तो बेटी मैं कहूगा कि तुम चली आओ।

'इसका तो यही अथ मामाजी कि नारी की आर्थिक स्वतत्रता की कीमत आपकी राय मे कुछ भी नही ?'

'बिल्कुल नही है, यह कैसे कह सकता हू, कहो ? पर यह मामला कुछ जटिल है। जहा सब कुछ यथावत है, साथ मे आजादी भी रहे—तो सब ठीकठाक चलता है, जिस तरह इतने दिनो से चल रहा था। अच्छा ही चल था। पर अब हालात कुछ और ही हैं। अब तुम्हारे अपने स्वाथ आपस मे टकरा रहे हैं। यहा तुम क्या करोगी ? मुझे लगता है पति-पत्नी के बीच यदि कभी स्वाथ का टकराव हो तो पत्नी को ही चाहिए कुछ अधिक त्याग करे।'

सुमित्रा की आखो मे सहसा आग झलक उठी। वह तेज आवाज से बोली, 'क्या मामाजी ? औरत क्या इन्सान नही है ?'

मुकुदबाबू गभीर भाव से हसकर बोले, इन्सान है तभी तो। तभी तो उससे इन्सान जैसे व्यवहार की उम्मीद हम करेंगे। स्वाथ का त्याग तो कोई इन्सान ही कर सकता है। आजादी के लिए तुम पति के सुख को तुच्छ कर सकती हो, इसमे मुझे कुछ कहने के लिए नही है पर पति के सुख या दुख को कोई पत्नी कैसे नजरअन्दाज कर सकती है ? किस नीति या तक के बल पर ? वो लडका वहा नौकर के हाथ का खा-खाकर अपनी सेहत

खराब कर लेगा, पारिवारिक कोई सुख उसके पल्ले नही पडेगा, वह अपने प्यारे बच्चे को देख नही सकता, उसे दुलार नही सकता। तुम लोगो के प्रति स्वाभिमान वश वह अपने मन की दुनिया से दूर हट जाएगा, यह भी तो एक बहुत बडी क्षति है लेकिन अगर पलट कर तुम अधिकार का दावा करो तो बेटी, वह बिल्कुल अलग बात है। पर तुम्ही सोचो, अगर परेश नौकरी छोडकर यहा आकर बैठा रहे, यह दृश्य शोभनीय होगा या नही, तुम्ही विवेचना कर विचार करो।' कहकर मुकुदबाबू मुस्कुराने लगे।

उसी समय मधु ने आकर घोषणा की, 'मामाजी बिना खाना खाए आप जाइएगा नही। मा जी बहुत बढिया बढिया खाना बना रही है।'

'अच्छा! अच्छा! यह बात है? बेटी सुमित्रा! अपने मन से हर तरह की द्विधा सकोच को निकाल फेंको। दुनिया सिर्फ दुख की जगह है, गहस्थी भी समस्याओ से घिरी हुई है, ऐसा समझने का भी कोई कारण नही है। अभी भी दुनिया मे जिदादिली है, खुशिया है, जीने की न खत्म होने वाली चाह है।' मामाजी की इस बात पर सभी हस पडे।

सुमित्रा को बहुत बार लगा था, आज भी लगा—उसके ससुर यदि मुकुद बाबू जैसे होते? इस बात को भी यदि रहने दें तो मदाकिनी अपने भाई जैसी क्यो नही है? सहोदर भाई और बहन मे कितना फर्क है।

सुमित्रा को शायद मालूम नही, छोटी उम्र मे मदाकिनी भी मुकुदबाबू की तरह खुशमिजाज लडकी थी। पर सास, बुआसास आदि ऊपर वालो के शासन तले दबकर वो खुशमिजाज लडकी कब की मर चुकी थी। सूख चुकी थी। उसके बाद तो गहस्थी के कितने ही उतार-चढाव, उन सबके साथ जूझने मे उसे कितनी शक्ति का क्षय करना पडा था। और फिर शशिबाबू—वे भी क्या कभी आज की तरह थे? क्या पता मुकुद बाबू भी यदि गहस्थी बसाते तो कैसे होते? पर गहस्थी क्या है? क्या कुछ लोगो का एक साथ रहना? बस? नही। कुछ लोगो का इकट्ठा एक साथ एक घर मे सम्मिलित रूप से रहने का नाम गहस्थी नही है। कुछ लोगो की राय मे समन्वय का नाम गहस्थी है। पर एक साथ रहने से टकराना भी अनिवार्य है। परिवार के हर सदस्य के बीच एक टग-आफ वार चलता है और इससे कभी आपस मे तीव्र ईर्ष्या भी हो जाती है।

मुकुद बाबू ने कहा था, और दुविधा मे मत रहो, पर कई दिनो तक सुमित्रा दुविधा मे पडी रही। रेखा फिर आयी। नारी के अधिकारो पर फिर बहस हुई। परेश की एक और चिट्ठी आई थी। वह छुट्टी लेकर इन लोगो को लेने के लिए आ रहा था। वहा एक लालच और भी था कि किसी लडकियो के कॉलेज मे सह-अध्यापिका का पद खाली था। इसकी खबर पाकर परेश सेक्रेटरी के पास सुमित्रा के नाम की दरखास्त भी दे चुका था। सेक्रेटरी बडे सज्जन आदमी थे। परेश के दोस्त ही बन गए थे। उम्मीद तो थी कि यह नौकरी सुमित्रा को मिल जाएगी। यद्यपि तनख्वाह सुमित्रा के इस समय की नौकरी के बराबर की तो नही थी, फिर भी पति के आगे हाथ फैलाने जैसी बात भी नही रहेगी। अब सुमित्रा जैसा ठीक समझे। परेश से तो अब और अकेले रहा नही जा रहा था।

अब देवी का आसन हिला। अपनी स्थिति का पूरा बयान देकर सुमित्रा ने अपने इस्तीफे की अर्जी भेज दी।

परेश आया। लम्बे समय से परदेस मे रहे लडके का जिस तरह अभिनन्दन किया जाता है, वैसा कुछ हुआ नही। शशिबाबू ने अपने हृदय के सारे उल्लास के दरवाजे पर ताला लगाकर दो चार कुशल मगल का सवाल किया। दफ्तर के बारे मे पूछताछ की। मदाकिनी ने सूखी आवाज मे सेहत के लिए चिन्ता प्रकट की। परेश भी कुछ अपराध बोध से दबा था। पर मुन्ने के कारण वातावरण थोडा हल्का हुआ। मुन्ने के गुणो का बखान करने मे सभी एक थे। रेखा के पहुचने पर वातावरण मे और भी ठडक आई।

रेखा और परेश दोनो भाई-बहन खाना खाते खाते गपशप कर रहे थे। परेश इतने लम्बे समय तक किन मुसीबतो और मुश्किलो से गुजरा था इसका बयान करता रहा। खाने का कष्ट, रहने का कष्ट, सोने का कष्ट। नौकर चोरी करता था, धोबी कपडे खो देता था, कष्टो की कोई सीमा ही नही थी। यह सब बयान करते समय वह सोच रहा था, यह सब सुनकर मदाकिनी अफसोस करेगी, पर लगा मदाकिनी कुछ सुन ही नही रही थी। सिर्फ रेखा एक बार मुस्करा कर दबी जुबान मे सुमित्रा के कमरे की तरफ कटाक्ष कर बोली, 'मन भिगोने वाली और कितनी बातें करोग

भैया ? भाभी ने नौकरी तो आलरेडी छोड ही दी है। आप द्वारा वर्णित कष्ट के कारणो का पता उन्हें चल गया था।'

पर परेश का आक्षेप सुमित्रा के लिए नही था। मा के लिए था बोना, 'यहा आकर तो लगा सच मे मछली कितनी स्वादिष्ट और अच्छा बन सकती है। वहा तो लगता ही नही था कि क्या बना और क्या खाया सब का एक ही स्वाद। हालाँकि वहा का भी क्या दोष ? बर्फ से दबी मछलियो म स्वाद ही नही होता। मा अपन हाथा से वह फेमस हिलसा मछली बनाकर जरा खिलाना तो।' इसके बाद भी अगर मदाकिनी नरम नही पडी तो क्या किया जा सकता था। मदाकिनी आल्हादित सुर से तो नही पर बोली, 'उसम क्या, आज ही रात को बना दूगी। भैया भी यही खाना खाएगे। रेखा के पति को भी बुलाया है?' पर कृत्रिम लाड मा की नजर को छुपा नही सकती थी। इसीलिए किसी भी पक्ष म आतरिकता का सुर नही बज रहा था। पर इस हालत के लिए किसे जिम्मेदार ठहराया जाए ? बुजुर्गा को या उनके बाद की पीढी को ?

बहुत दिना के बाद आने के लिए परेश को थोडी शम सी आ रही थी, फिर घर पर मेहमान भी थे। मामाजी थे, रेखा का पति था, शाम को भी लोग बाग मिलने के लिए आए थे। अपने कमरे मे आत-आत रात काफी हो चुकी थी। सुमित्रा सो गई थी, पर परेश के आने पर उठकर बैठ गई। परेश मुस्कराकर बोला, 'लगता है हम लोग नये दुल्हा-दुल्हन है। है न ?'

'दुल्हा जैसा या चोर जैसा। मुझे तो सुबह से ही लग रहा है न मालूम कौन सी गलती कर बैठे हो, और अब दड देने वाला या शासन करने वाला के सामने खडे हो।'

'सच पूछो तो बडा अटपटा सा लग रहा है। मन की स्थिति भी अजीब सी हो रही है। मा और पिताजी मुन्ने को इतना प्यार करते हैं और लगता है मुन्ने को भी वहा ले जाकर कही मुश्किल म न पड जाए हम लोग।

'मुश्किल म पडने के लिए किसने कहा था ? अच्छा ही तो दिन कट रहा था।' सुमित्रा बोली।

'अच्छी तरह तो दिन सबके कट रहे थे सिर्फ इस अभागे के अलावा।

किसी को किसी के लिए मन मे प्यार हो तब न ?'

'मन जो पत्थर का बना है।'

'खैर अब अपने अख्तियार मे तो एक बार ले जाऊ बस।' कहकर परेश ने तकिए पर सर टिका दिया।

सुमित्रा थोडी ठडी हसी हसकर बोली, 'कष्टो की फेहरिस्त तो तुम्हारी खत्म ही नही हो रही थी, पर चेहरा देखकर ऐसा कुछ लग तो नही रहा है।'

बात झूठ भी नही थी। परेश के रग और स्वास्थ्य, दोनो मे काफी सुधार था। बलिष्ट बदन बनियान मे और भी दमक रहा था। परेश उठकर बैठ गया। बोला, 'नजर लगा रही हो ?'

'जान बूझकर तो नजर नही लगा रही हू। दिख पड रहा है इसलिए कह रही हू। इतनी बार अपने कष्टो का उल्लेख कर रहे थे कि मुझे लग रहा था कि तुम अपने किसी अपराध के लिए कैफियत दे रहे हो। मुझे बहुत बुरा लग रहा था।'

'खराब लगने वाली कौन सी बात है ?'

सुमित्रा गभीर भाव से बोली 'जो बात गलत नही है। उसे यदि कोई गलत कहे तो उसका विरोध करना चाहिए, उससे डरना नही।'

बातचीत मे तर्क की बू पाते ही परेश ने बात पलट दी। बहुत दिनो के बाद आकर पहली ही रात पत्नी के साथ तर्क म बिताना उसे पसन्द नही था। न मालूम सुमित्रा मे हर वक्त 'युद्ध देहि', वाला भाव क्यो रहता है। यूं तो वह शात स्वभाव नम्र धीमी आवाज, कम बोलने वाली थी, फिर भी इन सब के बीच भी उसमे इस्पात की जैसी एक कठोरता थी, 'जो झुकना नही जानती थी। वह किसी चीज के साथ समझौता नही करना चाहती थी—हर चीज मे एक चरम निर्णय लेना ही पसद करती थी।

इसलिए परेश एकाएक उसे अपनी तरफ खीचता हुआ बोला, जो अपराध नहा है, उस ही मन लोग गलत ठहरा रहे हैं। इसलिए अपनी सफाई म तरह-तरह के बहान का सहारा लेना पडा। अपराध तो मेरा इतना ही है कि अपनी पत्नी को अपने पास रखना चाहता हू। उसके जवाब म तुमने भी क्या झाड लगायी उफ !

सुमित्रा गंभीर मुद्रा में बोली, 'इस बात पर यदि तकरार करें तो रात बीत जाएगी। लेकिन यह बात बिल्कुल सच है कि हमारी जो समाज व्यवस्था है उसमें नारी के किसी भी काम को कभी मूल्य नहीं दिया गया, इसीलिए हम लोगों का दृष्टिकोण भी नहीं बदला। उसके परिश्रम को भी ठीक काम का दर्जा नहीं दिया जाता। पुरुष का काम चाहे तो कितना ही तुच्छ क्यों न हो, उसे क्या कोई कह सकता है। मन उदास हो रहा है, इसलिए चले आओ, या बड़ी दिक्कत उठानी पड़ रही है इसलिए सब छोड़-छोड़कर चले आओ।'

परेश आहत भाव से बोला, तुम बहुत निष्ठुर हो सुमित्रा।

'हो सकता है। लेकिन मैं बुद्धि-सम्पन्न नारी हूं। मुझमें व्यावहारिक बुद्धि है। दोपहर की कड़ी धूप को नीले शीशे में से देखकर उस सुबह की रोशनी का भ्रम नहीं करती, या मन को धोखे में रखना या उसके लिए उल्टी पट्टी पढ़ना मुझे हास्यास्पद लगता है।'

'तुम्हें इतना बुरा लगेगा, यदि पहले जानता तो ऐसा गलत दावा मैं शायद नहीं करता।'

'तुम दावा न करते, तो हो सकता था शायद मैं ही किसी दिन नौकरी चाकरी छोड़कर तुम्हारे पास चली आती। तुम्हारे माता पिता के साथ रहना मुझे अच्छा भी नहीं लगता।'

स्पष्टवक्ता सुमित्रा ने अपना स्पष्ट भाषण सुनाकर बड़े गर्व से पति की तरफ देखा। ऐसी स्पष्ट बात के बाद दूसरी किसी बात का चलाना मुश्किल था। 'अच्छा नहीं लगता।' क्या परेश को मालूम नहीं था, पर इस तरह स्पष्ट रूप से इसका उच्चारण करना? परेश को एक बार फिर लगा कि सुमित्रा वाकई बड़ी निष्ठुर है।

थोड़ी देर तक सुमित्रा ने मन ही मन सोची—'सच्ची बात जुबान से निकल जाए तो मानो महाअपराध है। यह भी एक प्रकार की असहनीय भावुकता है पर इस तरह मौन व्रत कब तक चलेगा? परेश को तो झट नींद आ जाती है। वह तो अभी सो जाएगा। अनेकों विरह की रातों के बाद आज मिलन की रजनी आयी भी तो कम से कम हे नारी! सारे मत-भेद और विरोध को आज रात के लिए तो परे कर देती। रोशनी बुझान

के साथ ही मान सम्मान और अधिकार के दावो तथा छोट बडे प्रश्नो को भूल जाती।

मोहिनी रात इस अधेरी कमर मे अपना मोह जाल फैलाए, इसके सिवा उपाय भी क्या था ? इन्सान को जीना तो पडेगा ही। असहाय आदमी रात के हाथ यदि आत्म समपण न करे तो शायद इस दुनिया मे स्त्री और पुरुष जाति इतने दिनो तक टिकी नही रहती। या तो आपस के द्वन्द्व और कलह से एक दूसरे को तबाह कर देती—या एक दूसर के प्रति स्वाभिमान वश आत्महत्या कर अपने को मिटा देती। पर ऐसा होता नहा है। इस दोना ही वर्गो का टिका रहना ही पडेगा। इसीलिए तो रात आती है—दृष्टिहीन अधी रात। आपसी विरोध थोडे क्षणो के लिए ही सही, मिट जाते हैं, आखो से परे हट जाते हैं। इसलिए तक और कलह के उत्ताप से जब बद कमरे की हवा भारी हो उठती है, विरोध से विक्षुब्ध दोना ही हृदय एक दूसर के पास न आने के लिए विद्रोह कर उठते है।

फिर भी उस वक्त सब कुछ पर एक पर्दा डालकर कहना ही पडता है—'क्या हुआ ? नाराज हो ? अच्छा अब तो गुस्सा थूक दो।'

आसू भरा गभीर चेहरा, टेढे वाक्यो और आहत स्वाभिमान के बीच परेश अपने पुत्र और स्त्री के साथ परदेस के लिए चल पडा। अनुष्ठान म कोई कमी नही रखी गई थी। बेटे बहू के माथे पर मदाकिनी ने दही का टीका भी लगा दिया था। परेश और मुन्न के पॉकिट तथा सावित्री के वैनिटी बग म पूजा के फूल भी रख दिए थे। मदाकिनी न निर्देशानुसार पूव की तरफ बैठकर सामने जल से भरा पूर्ण कलश लेकर यात्रा करनी पडी थी। ट्रेन क लिए मदाकिनी न खाना भी बना दिया था। मुन्ने के लिए बिस्कुट टाफी, थमस म दूध—कहीं किसी बात की कमी नही थी।

यद्यपि सुमित्रा की इच्छा थी कि कोई अच्छी सी सिल्क की साडी डाले पर ऐसा वो नहीं कर पायी, क्योंकि शशिबाबू अपनी बहू की यात्रा के लिए साडी खरीद लाए थ। लाल बाहर जिस पर भौर बने हुए थे, और तात की साडी—सुमित्रा को वही साडी पहननी पडी, फिर भी

उतना बुरा नही लगा था। प्रसन्न मन ने इसे मान लेने की उसने कोशिश की, पर उसे भारी क्रोध तब आया जब मदाकिनी ने सुमित्रा की पतली माग मे सिंदूर की हल्की पतली रखा पर मा काली के मंदिर का ढेर सारा सिंदूर थोप दिया, और सजी-सवरी सुमित्रा के माथे पर गीले सिंदूर की बिंदी नही, बडा सा गोला आक दिया। फिर भी मुह लाल कर सुमित्रा बेचारी यह भी सह गई। मदाकिनी अपने पुत्र की मगल-कामना के लिए यह सब कर रही थी, सुमित्रा कैसे मना कर सकती थी।

आखिर म महीन आरगडी के ब्लाउज पर कोरे लाल बाडर वाली साडी, हाई हील सडल के साथ पैरा मे लिपे आलता का चौडा लेप, रोल किए हुए जुडे के ऊपर मुठठी भर सिंदूर और चौरस फ्रेम के चश्मे के ऊपर माथे पर सिंदूर का बडा सा गोला लिए सुमित्रा पति पुत्र के साथ हावडा स्टेशन के लिए रवाना हुई।

यह सब क्या सुमित्रा का त्याग नही था? पर इस त्याग को समझे कौन? दिन रात आधुनिक लडकिया की समालोचना ही सुननी पडती थी।

घर मे तीन ही प्राणी शेष रह गए थे। मालिक मालकिन और मधु। पर इसके लिए घर के काम म कुछ कमी नही आयी थी। थोडा ही सही, पर हो सब कुछ रहा था सब्जी भाजी-रसोई पानी, चाय वाय, बाजार जाना आना, जूतो की सफाई, किसी का कोई काम रुका नही था। फिर भी गहस्थी का चक्कर कही फसकर थम गया था। पूरे घर पर श्मशान-सी एक शून्यता छायी हुई थी।

हालाकि काम तो सारे ही थे, पर कम तो हो ही गए थे। सुबह की चाय अब हीटर पर केटली म नही बनती थी। चूल्हा जलाने के बाद एक कटोरी मे बन जाती। बरामदे मे टोकरी भर सब्जी लेकर काटने के लिए अब मदाकिनी नही बैठती थी। रसोई के ही किसी कोने मे बैठकर सब्जी काट लिया करती थी।

मधु मसाला थोडा ही पीसता, फिर भी ज्यादा हो जाता और डाट

मधु को सुननी पडती थी। शशिबाबू सब्जी बाजार जाते और तीन दिन के लिए उन्हे छुट्टी मिल जाती, लेकिन आखिर मुन्ना तो अधिक कुछ खा नही पाता था। इधर सुमित्रा ने भी दिन मे चावल खाना छोड दिया था, फिर भी उन दोनो के बिना गृहस्थी न मालूम क्यो इतनी छोटी पड गयी थी।

मदाकिनी हाफ गयी। आजीवन तो वह खट खटाकर हाफी थी, अब खट नही पाने से चलते खाली बैठकर हाफ रही थी। उसका शरीर थक चुका था। इधर काम के नाम पर उसे डर लगता था—फिर बिना काम के वह और भी थक गई थी। समय की कमी के कारण अडोस-पडोस की औरतो के साथ उसने दो बातें कभी नही की थी—आज इस उम्र मे नए सिर से दोस्ती भी तो नही की जा सकती थी। सबसे पास की पडोसन के साथ तो उस 'मायाकानन' मे आते जाते ही दोस्ती का सूत कट चुका था।

शशिबाबू की मानसिक स्थिति तो और भी सोचनीय थी। पोते के लिए उनकी अन्तरात्मा हाहाकार कर रही थी, इसलिए अब वे और भी देर से पाक से घूम फिर कर लौटते। अखबार के विज्ञापनो तक को पढ जाते। अब तो वे शतरज खेलने के शौक को भी दुहराना चाहते थे।

और मधु ? वह जब न तब मदाकिनी को ताने सुनाता। मदाकिनी के कारण ही गृहस्थी का यह हाल हुआ था। घर की मालकिन यदि चौबीसो घटे 'अब मुझसे काम नही होता' रटती रहें तो क्या भगवान भी नाराज नही हो जाएगे।'

कई दिन से सौमेश की कोई चिट्ठी नही आई थी। शशिबाबू मुश्किल मे पडे थे। मदाकिनी ने उन्हें तग कर छोडा था। मानो गलती शशिबाबू की ही थी। शशिबाबू क्या स्वय चितित नही थे। परदेश मे बैठे सतान के लिए या बीमार लडके के लिए माए उद्वेग जताकर ही चुप नही बैठती, पति को चुभा चुभा कर बातें सुनाने मे भी कोई कसर नही छोडती। नितात पतिव्रता सती नारी भी सतान के मामले मे अपने पति के प्रति निष्ठुर और निमम हो जाती है।

तग आकर शशिबाबू सौमेश के नाम टेलीग्राम कर आए थे, पर उसका भी कोई जवाब नही आया था। एक दिन दोपहर मे मुकुदबाबू आए तो

मदाकिनी ने बड़े जोर शोर से उन्हें बताया, 'भैया टेलीग्राम तो एक छल था। मुझे बेवकूफ बनाया गया था। असलियत तो यही है कि टेलीग्राम उन्होंने लगाया नहीं होगा।'

पति दोपहर को सो रहे थे, इसी अवसर का लाभ उठाकर मदाकिनी भाई के पास अपने मन की व्यथा उगल रही थी। लेकिन शशिबाबू की नींद खुल गई थी। कान सजग कर मदाकिनी का अभियोग सुनकर वे निस्तब्ध रह गए। मदाकिनी का उन पर भरोसा नहीं। और मन का संदेह मन में न रखकर भाई के पास उगल भी रही थी। इससे अधिक पति का और कैसे अपमान किया जा सकता था। मदाकिनी गुस्सा करती थी, स्वाभिमान करती थी, रोती धोती भी थी, पर वो ऐसा कर सकती थी, शशिबाबू ने कल्पना में भी कभी सोचा नहीं था।

सीधे-सादे आदमी शशिबाबू कभी किसी बात को गहराई से लेकर सोचते नहीं थे। कभी मामूली सी बात पर किसी को डाट डपट देते थे, हा हंगामा मचाते, और कभी दूसरा सचमुच की गलती करता तो भी उसकी अनदेखी कर देते। शशिबाबू ऐसे ही एक इंसान। बाजार जाएंगे, खाना बनेगा। सभी मिलजुलकर बढ़िया सा खाएंगे, हंसेंगे खेलेंगे, घर में उनका थोड़ा रोब चले, बस इतना ही। इससे अधिक या इससे महत्वपूर्ण किसी प्रकार के जीवन की आकांक्षा उनमें नहीं थी और उसकी धारणा भी उनमें नहीं थी। बीच में थोड़े दिनों के लिए जतीनबाबू के साथ 'माया कानन' में आना-जाना था, वो भी अधिक दिनों तक टिका नहीं।

अचानक दोपहर के इस सन्नाटे में, तुरंत नींद से जगे शिथिल मन पर मदाकिनी की संदेह वाणी शशिबाबू के हृदय में शूल की तरह जा बिंधी। यह उनकी पत्नी थी? इसी पर उन्हें गर्व था? सचमुच आज तक शशिबाबू बराबर अपने को स्त्री भाग्य से परिपूर्ण समझते आए थे, पर आज मानो वे आकाश से जमीन पर छिटक कर गिर पड़े थे। हा! सामने सामने तो शशिबाबू के प्रति मदाकिनी हमेशा ही शिकायत करती रहती थी— लड़कों के सामने, भाई के सामने, आजीवन ही तो शिकायत करती आयी थी। दो चार बात ही क्यों, हजारों बातें सुनाकर दम लेती थी, पर शशिबाबू के पीछे उनके प्रति गलत शंका? वो भी घर-गृहस्थी की कोई बात

होती तो कोई बात नहीं। विदेश गए बेटे के लिए दुश्चिंता उन्हें क्या कम थी ? क्या मदाकिनी ही सिर्फ स्नेह से सराबोर थी और शशिबाबू बिल्कुल पत्थरदिल ? एक बार उनकी इच्छा हुई कि वे उठकर इसका विरोध करें, पर तुरत उन्हें 'मोह मुद्गल' का वह चिर परिचित श्लोक याद आ गया। कितने युगों पहले की लिखी बात। इसके रचनाकार ने किस तरह से संसार को पहचाना था। नहीं, विरोध करने की कोई जरूरत नहीं। वे श्लोक को मन ही मन बडबडाने लगे—'को तव कान्ता कस्ते पुत्र। को तव कान्ता

मन ही मन वे भले ही 'मोहमुद्गल' के श्लोक को दुहरा रहे हों, पर कान उनके सजग थे। मुकुंदबाबू बहन को भर्त्सना के स्वर में बोल रहे थे, 'क्या बकती है ? ऐसा भी कहीं होता है ? तेरे पास माँ का दिल है जो दुश्चिंता से फटा जा रहा है तो उसके पास भी बाप का दिल है या नहीं ?'

'बाप का दिल ?' मदाकिनी अवहेलना से बोली, 'बाप का दिल यदि मेरी तरह उचाट होता तो चिंता की कोई बात ही नहीं थी। अगर ऐसा होता तो मेरी ऐसी असहाय दशा क्या होती ?'

'क्या मुश्किल है। रो क्या रही है ? कितने दिनों से चिट्ठी नहीं आयी ?'

'कोई बीस एक दिन हो गए होंगे।'

'यह बात है।' मुकुंदबाबू ने बात को उडा दिया। बोले, 'हट पगली ! बीस बाईस रोज भी कोई समय होता है क्या ? बच्ची उम्र है, विदेश में गया है, घूम फिर रहा होगा, देख सुन समझ रहा होगा, समय से शायद चिट्ठी नहीं लिख पाया होगा। एक दो दिनों में चिट्ठी आ जाएगी। 'टेलीग्राम किया है' कहकर टेलीग्राम नहीं किया होगा, शशिभूषण ऐसा कर नहीं सकता। तुम्हारी बात बिल्कुल बेबुनियाद है।'

'तुम आखिर उन्हें कितना पहचानते हो भैया ? मेरे गुस्से के डर से उस समय कुछ भी बात बनाकर उन्होंने मुझे चुप करा दिया होगा। मैं तो ऐसा ही समझती हूँ।'

'समझा मानव दुर्बोधा तो तू है जो उस बूढे आदमी में भी भूठ कहना समझती है।' कहकर मुकुंदबाबू ठहाका लगाकर हँस पडे।

इस वाक्य को सुनने के बाद शशिबाबू अब नींद से उठ सकते थे। और इसीलिए वे मानो अभी-अभी नींद से जगे हों, ऐसे भाव से उठकर कमरे के दरवाजे के पास आकर खड़े हुए। फिर एकाएक चप्पल फट फटाकर नहान की तरफ चल दिए। उनके चप्पल की आवाज धीमी पड़ी ही थी कि बाहर से सुनाई पड़ा 'टेलीग्राम।'

धरती मां तू फट जा, मैं तुझी में समा जाऊं—इसी मनोदशा में मदा किसी चुपचाप खड़ी सौतेश के टेलीग्राम को सुन रही थी पिता का तार पाकर उसने लिखा था—'मैं बिल्कुल ठीक हूं। समय की कमी के कारण चिट्ठी नहीं दे सका था। आशा है कि जल्दी ही घर लौट सकूंगा।'

सौतेश आ रहा है, इस बात के लिए जितनी खुशी दिखायी जा सकती थी उसका कोई उपाय नहीं रहा। टेलीग्राम आने के साथ ही साथ मुकुंद बाबू जोर से चिल्ला पड़े—'देख टेलीग्राम का जवाब आया कि नहीं? और तू खामख्वाह शशिभूषण को दोषी ठहरा रही थी कि 'तार' उसने भेजा ही नहीं होगा।'

'कलकी चाद देखा था मैंने भैया!

मैं तो आजीवन ही देखता आया हूं'—'कहकर शशिबाबू वहां से खिसक गए। कहना फिजूल था कि इसके बाद मजलिस जमी नहीं। दो चार बातें कर मुकुंदबाबू ने भी विदाई ली। मदाकिनी चुपचाप बैठी रही। शशिबाबू एक अधमैला कुर्ता और दूध सी धुली धोती डालकर किसी अनिर्दिष्ट लक्ष्य की खोज में घर से निकल पड़े।

पर आखिर घर से निकल कर शशिबाबू गए कहां? उद्देश्यहीन लापता हो गए क्या? या 'मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक' की तरह पार्क के बेंच जैसे परम तीर्थ में जाकर चुपचाप बैठ गए। धूप तब भी ढली नहीं थी लोग-बाग का आना शुरू नहीं हुआ था। एक पूरी बेंच खाली पड़ी थी। चुपचाप बैठकर शशिबाबू सोचने लगे। अखबार के पन्ने पर उनकी उम्र के किसी व्यक्ति के लापता होने की खबर उन्होंने पढ़ी थी कि नहीं, एक आध ऐसे समाचार उनकी नजर में आए तो थे पर खोए हुए व्यक्ति के के नीचे यह भी जुड़ा रहता, दिमाग थोड़ा कमजोर है। क्या मालूम वाले अपनी सफाई के लिए ही ऐसा लिखते होंगे। मानो समझाना

हा कि यदि दिमाग खराब नहीं होता तो परिवार छोडकर वह लापता होता ही क्या ?" या हो सकता है पत्नी और बाल बच्चो के व्यवहार से वह सचमुच ही पागल बन गया हो। बुढापे मे जग हसाई करना नाभता नही, तो अन्यथा एक बार लापता होकर वे भी देखना चाहते थे कि आखिर यह होता क्या है।

शाम ढल गई। रात का ठडा झोका सर पर लगते ही सर से वैराग्य का पारा नीचे उतर गया। और शशिबाबू धीरे धीरे घर की तरफ लौट पडे।

घर मे घुसे, इससे पहले शशिबाबू ही चौंक कर रुक गए। जोर शोर हसी मजाक की आवाज आ रही थी। उसमे मदाकिनी की भी आवाज मिली हुई थी। बात क्या हो सकती थी ? सीतेश आ पहुचा था क्या ? मिनट भर शशिबाबू वही के वही खडे रहे। दो तरह की आवाजें थी, दोनो ही आवाज महिलाओ की थीं। मदाकिनी किसके आने की इतनी खुशी मना रही थी ? जो हो ! अब समझ मे आया। मदाकिनी की बडी बहन विन्दुवासिनी आयी हुई थी। यह एक ऐसी औरत थी जिसका नाम सुनते ही शशिबाबू जल उठते थ। लेकिन पूछा जाए कि उसने शशिबाबू की क्या हानि पहुचाई थी तो उत्तर यही मिलेगा कुछ भी तो नही। पति के न होते हुए भी आजीवन ससुराल 'भाजन घाट' मे पडी रहती थी। विधवा थी। हालात भी कोई अच्छे नही थे अब तो और भी हाल खराब होगा। गरीब है क्या इसीलिए मुझे यह फूटी आख नही भाती ?—शशिबाबू ने अपने मन से ही पूछा। मन इस बात को सरासर अस्वीकार कर बैठा। अपनी साली के प्रति शशिबाबू की वितृष्णा अकारण ही थी, जलाने के लिए यहा भी आ धमकी थी। लेकिन क्या ?

ईश्वर की बडी कृपा है कि मन का भाव उच्चारित नहीं होता, नहीं तो आठ साल के बाद बहन के घर आयी हुई विन्दुवासिनी यदि बहनोई का मन स्थिति भाप जाती तो कदापि यहा का पानी तक नहीं पीती, वापिसी ट्रेन का समय की परवाह किए बिना ही स्टेशन लौट जाती।

मनुष्य पर ईश्वर की यही एक करुणा है। मन की भाषा नीरवता के बीच ही मुखर रहती है। तभी तो शशिबाबू चप्पल फटफटाते हुए बराम-

मे आकर आकस्मिक विस्मय से चौक कर बोले—'दीदी आयी है क्या ?'

विधवा होने के बाद बहनोई के साथ बिन्दुवासिनी की यह पहली मुलाकात थी। यद्यपि सात आठ वर्ष पुरानी बात थी, फिर भी बिन्दुवासिनी अपने हसते हुए चेहरे पर पत्थर रखकर झटपट रोनी सी सूरत बनाकर बोली, 'पहचान पा रहे हो, यही बडी बात है। मैं तो सोची थी 'आसू से उसका गला रुव आया।

'आपको पहचानूगा नही ? क्या कह रही है ?—' शशिबाबू ने कैसे यो ही यह बात कही थी। बिंदुवासिनी आचल से नाक पोछती हुई बोली, 'भगवान ने पहचानने का कोई रास्ता भी मेरे लिए छोडा है क्या ?

'किसके साथ आयी दीदी ?'

'और किसके साथ आऊगी बाटुल के साथ आयी हू।'

बाटुल !'

मदाकिनी झल्लाकर बोली—'आकाश से क्या गिर रहे हो ? बाटुल दीदी का पोता है—शाति का लडका।'

'ओ !'

बिंदुवासिनी पोते की तरफदारी करती हुई बोली, 'आते ही बाबू को कलकत्ता देखने का शौक चढा। और उसी के साथ कलकत्ता आ भी सकी। उनके गुजर जाने के बाद से तो वह मेरे ही पास है। शाति बोली थी, 'कोई यदि तुम्हारे पास न रहे तो तुम कैसे रह सकोगी ? कौन देख भाल करेगा तुम्हारी ?' और तब से नानी की देखभाल करते-करते उसकी लिखाई पढाई भी नही हो पाई।'

बाटुल की उम्र का अदाज शशि बाबू को नही था, फिर भी अदाज से बोले—'क्यो वहा कोई अच्छा स्कूल नही था ?'

'था क्यो नही। सब कुछ था। पर लडका बडा ही चचल था, कौन उसकी देखभाल करता। चौबिस घटे वीर हनुमान की तरह पेड पर लटका रहता।' पोते के गुणो का बखान कर खुशी से पोपले मुह से बिंदुवासिनी खिल खिलाकर हस पडी।

थोडे दिनो के लिए मदाकिनी ने अपने निर्लिप्त भाव को ताक पर धर दिया। दीदी और उसका नाती—दो परम आदरणीय अतिथियो के आदर-सत्कार मे थोडी भी कसर न रह जाए, मदाकिनी इसका पूरा ध्यान रख रही थी। दोनो के लिए अलग-अलग तरह का खाना बनता था। इसलिए मधु को बार बार टोकना पडता। मदाकिनी बार बार हाव भाव से उसे समझाना चाहती कि चूकि बादुल के अपने नाना अब नही रहे, इसलिए शशि बाबू को उसके नाना की तरह बर्ताव करना चाहिए। और इन दिनो शशि बाबू बेकार भी थे। घर पर ही तो बैठे रहते थ। इसलिए उन्ही को चाहिए कि वे बादुल को साथ लेकर कलकत्ता घुमा दें और बाजार से गाव मे जो चीजे नही मिल पाती, अच्छी साग सब्जी फल, मिठाई, लाकर दे। क्या यह शशि बाबू का कर्त्तव्य नही था। आखिर बिदुवासिनी ऐसी वैसी कोई नही, मदाकिनी की सगी बहिन थी और उसके नाती की बात थी।

सिनेमा विनेमा का पैसा तो मदाकिनी खुद ही दे सकती थी, पर कॉलेज स्ट्रीट के दालमोठ, न्यू मार्केट के अगूर भीम नाग के सदेश, गडिया बाजार की तपासे मछली, इन सबो के लिए शशि बाबू की ही शरण म जाना जरूरी था।

शशि बाबू म आग्रह की कमी देखकर मन ही मन मदाकिनी जलभुन जाती, पर जुबान नही खोल पाती। सोचती दीदी जब अपने घर चली जाएगी तब वह इसका बदला जरूर लेगी।

आखिर इतनी अवहेलना क्या? गरीब थी इसलिए? पर शशि बाबू के भी ता एक गरीब रिश्तेदार थे जिन्ह हर महीने पैसा की मदद करनी पडती थी, उनके लिए ता शशि बाबू के मन म उपेक्षा नही था। चलो फिर ? असल मे यह उपेक्षा बिदुवासिनी मदाकिनी की बहन थी इसी कारण स थी। शशि बाबू की गृहस्थी म मदाकिनी का यही मान रह गया था ?

लेकिन शशि बाबू की अपनी बहन अन्नपूर्णा जब आती थी तब उनके आने की खबर से ही सारा घर थर्रा जाता था। उसके लिए अलग पानी का ... अलग बर्तन, अलग बिस्तर और कम्बल। छोटे छोटे बच्चे भी

जान गए थे कि बुआ के आने के बाद बासी कपडा मे कोई नही रह सकता। जहा तहा जूते, चप्पल नही रखे जा सकते थे। मदाकिनी की बहन के साथ यह सब झमेले तो नही थे।

अन्नपूर्णा बडी धार्मिक ठहरी। कुछ खाती-पीती नही, पर उसके एक शाम का खाना बनाने मे मदाकिनी हाफ जाती थी। एक-एक दिन निकलता था, माना पसीना छूटकर बुखार उतर रहा था। उससे तो सौ गुना अच्छा था बिंदुवासिनी का आहार के प्रति लोभ। दुकान से मगवा लिया, झमेला खत्म। पर इसमे भी जलना पडता था। मधु मुहजला उस दिन झट से बोल पडा, 'मासी जी विधवा इसान है, दुकान से पकोडे मगवाकर वे कैसे खाएगी मा जी? वे तो सब कुछ मे प्याज मिलाते हैं या छुआ तो देते ही हैं।'

'करती हैं तो करने दे। तेरा क्या रे मुहजले!'

उस दिन शशि बाबू भी आख सर पर उठाकर बोले, तुम्हारी दीदी सडक से आईसक्रीम मगवाकर खा रही थी। अच्छी बात है?'

मद आदमी का सब तरफ इतना ध्यान क्यो? मदाकिनी सातो जनम मे यह सब कुछ नही खाती, पर शशि बाबू को कभी इसका ख्याल तो नही आता था। विधवा हुई तो क्या? वह कोई चोरी तो नही कर रही थी। उनके गाव मे यह सब कुछ मिलता नही, फिर हमेशा से पैसो की कमी रही थी। छोटी बहन का घर सम्पन्न था। घर आई दीदी का अगर थोडा आदर-सत्कार कर कुछ अच्छा-वच्छा खिलाए तो उस पर नजर गडाने मे शर्म आनी चाहिए।

इन सब बातो को लेकर मदाकिनी मन ही मन एकतरफा तक करती रहती। कभी सोचती—छोडो आगे से कुछ नही करूगी। पर दीदी यदि कुछ लाड से कहे तो मदाकिनी के पास क्या चारा था?

'अजी सुन रहे हो! दीदी तो जाना चाहती थी पर मैंने कहा, 'अम्बूवाची व्रत के बाद ही चली जाना।' (अम्बूवाची एक व्रत है जो ब्राह्मण तथा विधवाए तीन दिन के लिए रखती हैं जिसमे एक भी दिन गर्म खाना नही

खाया जा सकना। तीन दिनो तक फलाहार या पहले की बनी नमकीन मट्ठी या मिठाई ही खाई जा सकती है।)

शशि बाबू बोले, 'अच्छी बात है। मुझे क्यों सुना रही हो ?'

'तुम्हें नही सुनाऊगी तो क्या सडक से आदमी पकडकर सुनाने जाऊगी 'अम्बुवाची' के दिना मे व्रत रहने से उसका अलग इन्तजाम करना पडेगा।'

'यही न ? आम, केले, शहद, मिठाई, फल आदि। वो तो मधु लाकर दे सकता है।'

मदाकिनी नाराज होकर बोली, 'तुम्हारी पुण्यवती बहन की तरह मेरी दीदी फलाहारी नही हैं। वे सब कुछ खाती हैं। बस बासी होने से मतलब है।'

ओ ! यह भी चलता है ? क्या चाहिए कहो ?'

मुह जबानी क्या-क्या बताऊ ? पर्चा लिख रखा है लेते जाओ।'

'पर्चा ?

'हा पर्चा ! यह कर मदाकिनी ने एक लम्बा-चोडा सामाना का पर्चा शशि बाबू को थमा दिया।

मदाकिनी भी लाचार थी। छोटी बहन के पास आकर बिंदुवासिनी को थोडा अच्छा खाने का शौक हुआ था। इसलिए सुबह आठ बजे स रात के आठ बजे तक मदाकिनी रसोई म ही अटकी रहती। अब यह 'अम्बूवाची' व्रत की तैयारी मे जुटी रही।

शशिबाबू का जो लाना था, ला दिए। मधु और बाटुल तो था ही। पैसे दने पर बाटुल चुप चाप बाजार स जो जो मन चाहे लाकर दे सकता था।

उस दिन बिंदुवासिनी अपने भाई मुकुद बाबू क घर गई थी मिलन क लिए। शाम को लौटकर खुशी-खुशी पूछन लगी, क्या क्या बनाया ?'

मदाकिनी मुलायम सी हसी हसकर बोली, 'कुछ खास तो नहीं कर सकी। थोडा मालपुआ बनाया, थोडे से शकरपारे, नारियल और खोया मिलाकर लड्डू बनाया है। नमकीन म चिउडा भूनकर रखा है। नमक-

पारे बनाए हैं। खस्ता कचौडी भी बनाकर रखा है। और अभी थोडी पूरिया उतार रही हू ताकि कल खा सको। और तुम्हारे बहनाई ने बाजार से फल, मिठाई, दही सब कुछ लाकर रखा है। कलकत्ता की सबसे बढिया दुकान का दही है।'

बिंदुवासिनी खुशी के साथ बोली, 'इतना सब कुछ करने की क्या जरूरती थी ? एक औरत का तीन दिन का ही तो खाना है न ? पापी पेट तो मानता नही, इसलिए कुछ भरना ही पडता है, नहीं तो इस जलेमुह को खाना ही नहीं चाहिए। पूरी के साथ और क्या बनाया ? परवल की भाजी, आलू की रसेदार सब्जी और खट्टी चटनी, चटपटी सी ? खैर जो किया है बहुत किया है। दाल पीसकर उससे तवे पर रखकर तेल म परौठे जैसा तल कर फिर चौकोर टुकडो मे काटकर उसकी सब्जी बनाती तो अच्छा रहता।'

मदाकिनी आतकग्रस्त होकर बोली, 'बासी दाल की पीठी की सब्जी ? बीमार नहीं पड जाओगी ?'

'लो सुन लो बहन की बात। हमारे गाव मे तो यही सबसे प्रमुख खाना है। कलकत्ते की तरह पूरी-वूरी का झमेला नही। जब मेरी यह हालत नही हुई थी, सास और दाना बुआ सास के लिए पाच दिन पहले से खाने का जुगाड करती फिरती थी। उनके लिए तो मुरमुरे, चने, भुने मटर तथा सत्तू तक का इतजाम करना पडता था। तूने भी मगवाया है क्या ?'

मदाकिनी बोली, 'सत्तू ? हा मधु ने लाकर रखा है। सत्तू मूगफली, भुने मटर और चने सब कुछ।'

'हा तो मैं कह रही थी कि, तुम्हारे शहर की तरह वहा रसगुल्ले, पडे तो मिलते नही। वहा तो पाच दिन पहले से दूध गाढा कर-कर खोया बना-कर रखती थी। नारियल मिलाकर तरह तरह की मिठाईया बनाती थी। मुरमुरे के साथ गुड की चासनी मिलाकर लड्डू बनाती थी। पहले के लोग तो खा भी सकते थे। पाचन शक्ति भी उनकी मजबूत थी। हम लोग खा ही कितना सकते हैं। तले हुए पापड के दो टुकडे क्या खा लिया, मुह म खट्टा पानी आ जाता है। पर लालच ऐसा कि बिना खाए भी रह नही सकती। तेरे बहनोई को भी पापड बहुत पसद थे। एक काम कर—पूरी

तल रही है न ? उसी घी मे दो चार पापड भी तलकर पीतल के डब्बे मे बद करके रख दे। करारे ही रहेगे।'

'तले हुए बासी पापड ?' मदाकिनी ने साश्चर्य कहा।

'तू रख तो सही, कल तुझे खिलाकर दिखाऊगी। अच्छे डब्बे म ठीक ठाक रखने पर समझ ही नही पाएगी कि बासी है या ताजा। मेरी समधिन तो 'अम्बुवाची' के दिनो मे चाय तक बासी पीती है।'

मदाकिनी हस पडी। बोली, 'बको मत दीदी।'

'बक रही हू ? झूठ कह रही हू क्या ? अरे भई यह भी एक कला है। क्या तो कहते हैं उसे, थर्मोफ्लास्क, उसी मे चाय भरकर रख दिया करती थी। शाति तो कहती है कि 'अम्बुवाची' के पन्द्रह दिन पहले से ही यह जिद करती थी वह य बनाओ, वे बनाओ।' मुझे तो वैसा लालच है नही। बाप रे ले अब बस भी कर। तेरे बनाते-बनाते 'अम्बुवाची' शुरू भी हो जाएगा। ए बाटुल घडी तो जरा देख। समय रहे तो कुछ आलू उबाल कर रखना मदा। पीसी हुई कालीमिर्च और इमली की चटनी के साथ खाने म बडा मजा आता है।'

तीन दिन तक रसोई बद। इसलिए कान भरना और छोटी बहन को बुरी सलाह देने के लिए विदुवासिनी के पास काफी समय था। विदुवासिनी कह रही थी, 'पढी लिखी बहू लाकर बडा बेटा तो हाथ से निकल ही गया छोटे बेटे के लिए कोई अनपढ लडकी ला। वह बेटा तो काबू म रहेगा। मेरे जेठानी की एक लडकी है। बहुत ही खूबसूरत। इसी कलकत्ते म नागारी टोला म रहती है। चल न एक दिन चल कर लडकी देख आए।'

मदाकिनी ने दो एक बार आपत्ति भी की। बोली 'पहले लडके को तो यहा आने दो। आजकल के लडके ।' पर विदुवासिनी के तर्क के आगे मदाकिनी की कुछ भी नहीं चली।

'आने-जाने से लडके का क्या मतलब ? तू उसकी मां नहीं है ? लडके की बात पर चलकर ही तूने अपने आखिरी के दिनो को बिगाड रखा है। अब तुरुप अब भी तेरे हाथ म है। लडकी वाकई खूबसूरत है। तेरा बेटा उस

देखेगा तो मोहित हो जाएगा। शादी की सारी तैयारी तू कर ले, बस लडके की आने की देर है, चारा हाथ एक कर देना। उसके बाद देखना, बच्चू की बोलती बद हो जाएगी।'

मदाकिनी के टूटे हुए मन म बिंदुवासिनी ने मानो आशा के बीज बो दिए। बात भी सच थी, एक जमीदारी तो हाथ से निकल ही गयी थी, पर उस बात को लेकर मन खराब करने से भी तो कोई फायदा नही था। एक बची जमीदारी को बचाना था।

और एक दिन मधु को साथ लेकर दोनो बहनें लडकी देखने के लिए निकल ही पडी। परम सुन्दरी न भी हो तो भी लडकी वाकई मे सुन्दर थी। सीतश देखते ही मोहित हो जाएगा, बेहोश हो जाएगा, यह बात भी मदाकिनी को अच्छी नही लगी। पर लोग वाग बहू देखकर वाह वाही देंगे इसमे कोई सदेह नही था, यही सोचकर मदाकिनी खुश भी थी।

एक बार देखने क्या गई, मदाकिनी लडकी वाला को बात ही दे आई। गरीब की लडकी थी तो क्या ? मदाकिनी को पसे नही चाहिए था।

शादी की बात पक्की करवाकर बिंदुवासिनी अपने घर चली गई और साथ म यह भी आश्वासन दे गई कि शादी के दस दिन पहले मे आकर वह बहन के बेटे की शादी के काम मे हाथ बटाएगी। शशि बाबू इन बातो स बिल्कुल बेखबर थे। यहा तक कि मुकुद बाबू को भी इस बात का पता नही चला। वह ठहरे खुशमिजाज तबियत के आदमी। उनके पट मे बात नही ठहरती। इसके अलावा चाहे बहन ही क्यो न हो, मुकुद बाबू को वह पसद नही थी, इसलिए वे इस घर पर कुछ कम ही आए थे।

दीदी के पल्ले पडकर मदाकिनी शादी की बात पक्की तो कर आई, पर शशि बाबू को बताए बिना भी उसे चन नही पड रहा था। अब कहे भी तो कैसे ? मौका ही नही निकाल पा रही थी। मुश्किल आसान करन के लिए उसन एक दिन कुल-पुरोहित को बुलवा भेजा। 'शुभ दिन भी तो निकलवाना था। सीतू की चिट्ठी आई थी वह आने ही वाला था।

इन बातों मे शशि बाबू को उत्साह नही था। बडी साली क आन क बाद तो व बिल्कुल ही असहाय से हो गए थे। गुस्सा करे या ताना मार, फिर भी उन्हें मंदाकिनी का साथ तो मिलता था। बहन के आन के बाद

से तो वो दिखाई भी नहीं पड़ती थी। इसलिए उन्होंने भी दूसरा रास्ता अपनाया था।

एक दिन मंदाकिनी उन्हें सब बातें कहने ही वाली थी कि मधु की आवाज सुनाई पड़ी,—'मालिक! नारान (नारायण) बाबू बैठक में आपका इन्तजार कर रहे हैं।'

शशि बाबू व्यंग से बोले, 'अच्छा किया। अब झटपट चाय बनाकर ले आ। जा।

बेवक्त किसी के आने की खबर से मंदाकिनी खुश नहीं हुई। बोली, 'अचानक नारायण बाबू को कैसे बुलवा भेजा?'

शशि बाबू को भी दिल की भड़ास निकालने का मौका मिल गया। वे मंदाकिनी से भी अधिक झल्लाकर बोले 'न बुलवाता तो करता क्या? जीना तो पड़ेगा न? मुन्ना के नागपुर चले जाने के बाद से घर में दो क्षण टिकना मुश्किल। और तुम तो अपनी दीदी और उसके नाती में इतनी खोई हुई हो कि बाकी दुनिया का पता ही नहीं। इसलिए फिर से शतरंज खेलना शुरू कर दिया है। आज मेरी तबियत भी ठीक नहीं थी, वर्ना मैं ही उसके पास जाने वाला था। मधु! अदरक वाली चाय बनाकर लाना।'

दीदी के लिए ताना मंदाकिनी चुपचाप कम सहन कर पाती। इसलिए खिन्न सुर में बोली, 'मायके वालों के साथ मैं कब खुशी से भर आत्मविभोर रही, तुम्हीं कहो? भैया तो बिन बुलाए ही कभी-कभार आ जाते हैं इसलिए क्षण दो क्षण बातचीत हो जाती है। और दीदी तो आठ साल के बाद आई थी। जीजाजी के अंतिम समय में एक शाम के लिए एक बार गई थी और उसके बाद अब भेंट हुई। तुम्हारे लिए मन बहलाने के कई उपाय हैं—पार्क में जाते हो, बाजार-दुकान जा सकते हो, पर कभी तुमने मेरे हाल पर गौर किया है?'

'मन उचट जाए इसका अवसर ही हम लोगों का आया नहीं। दिन भर तो रसोई गृहस्थी में ही बीत जाता है। खैर, छोड़ो इन बातों को। मेरे शतरंज का सेट कहाँ रखा हो जरा देखकर दो। हाथी, घोड़ा, राजा, सभी सब ठीक-ठाक तो हैं या तुम्हारे प्यारे नाती ने उन्हें गुमा

डडा खेलकर उन सबकी अत्येष्टि कर दी है ?' बोलते-बोलते शशि बाबू का भी गला रुंध आया।

'सब कुछ सही सलामत है।' मदाकिनी बिल्कुल ही रुंधी आवाज मे बोली, 'मैंने उसके हाथ से छीनकर उठाकर रखा था।'

बैठक मे शशि बाबू और नारायण बाबू अकेले बैठे थे चुपचाप। शशि बाबू का आज खेलने म मन नही लग रहा था—इसलिए दोनो के बीच थोडी सुख दुख की बातें होने लगी, पर नारायण बाबू खेलन के लिए उत्सुक हो रहे थे। खेलते-खेलते नारायण बाबू बोले 'क्या बात है शशि बाबू ! आज आप अपनी चाल भूल रहे हैं ?'

शशि बाबू सहम कर बोले, 'गलत चाल दे बैठा न ? न मालूम क्या आज पोते की वडी याद आ रही है। मन उचाट हो रहा है।'

पोते के चले जाने की खबर शशि बाबू ने अपने सारे दोस्तो को सुनाया था पर किसे क्या याद रहता है ? इसलिए अनमने से नारायण बाबू ने कहा—'लो यह मेरी चाल रही। अब बताओ पोते को हुआ क्या ? मामा के घर गया है क्या ?'

'मामा के घर नही। अपने बाप के घर गया है। सारे लोग नागपुर चले गए हैं।'

नारायण बाबू गभीर हसी हसकर बोले 'अच्छा ही हुआ शशि बाबू ! मोह जितना कम रखो उतना ही अच्छा होता है। बेटो के जब पर निकल आते हैं तब वह सब कुछ को अपना ही समझने लगते है। तो फिर मोह के जाल मे फसकर खीचातानी करने का क्या फायदा ?'

शशि बाबू बोले, 'क्या आपके चारो बेटे तो आप ही के पास हैं न ?'

नारायण बाबू दार्शनिक की हसी हसकर बोले 'बाहर स देखन म तो ऐसा ही कुछ लगता है भाई, पर मन से हम एक-दूसरे से हजारो मील दूर हैं। मुझे तो लगता है उनकी गहस्थी मे मैं ही एक फालतू चीज हू। पुरान युग में वानप्रस्थ मे जाने का जो नियम था, वडा अच्छा नियम था।

शशि बाबू भी उदास हसकर बोले, 'इस युग म भी उस नियम को

चालू किया जाए तो अच्छा ही रहेगा। आपकी क्या राय है ?'

पर नारायण बाबू शशि बाबू के मन म फिर से जीने की, खुश रहने की उमग पैदा करने की चेष्टा करते हुए बोले, 'आप ऐसा क्यो कह रहे हैं ? सबसे बढ़कर आपकी पत्नी आपके पास है। आप रिटायर्ड हैं, और कोइ झमेला नही। बेटे के पास जाकर क्या नही रहते ? मेरा यदि एक ही लडका होता तो मैं उसी के पास रहता । यहा की तो हवा ही स्वार्थी है। दूर गाव मे रहने वाला का मन अच्छा रहता है।'

मुकुद बाबू का भी यही कहना था।

सब सुन कर हमेशा से आलसी शशिबाबू का मन भी डोल उठा। सच बात थी उन्ह भी जाना चाहिए। परन्तु तो अच्छा ही लडका था। उसने क्या गलती की थी ? खाने-पीने का कष्ट था, इसलिए पत्नी को साथ ले गया था। यह कोई अपराध तो था नही। शशि बाबू अपने बेटे पर खफा थे। तभी तो बेटा भी स्वाभिमानवश नही, नारायण बाबू ने ठीक ही कहा था। शशि बाबू जरूर जाएग। हमेशा के लिए न सही, दो चार महीने रहकर आएग। बेटे-बहू-पोते सब को देख आएगे।

शतरज का खेल जमा नही। शशि बाबू उठ पडे। दोस्त को विदा कर अदर आते ही देखा कि पुरोहित जी पचाग खोलकर बठे थे।

आज क्या था ? शिवरात्रि या नीलपष्ठी का व्रत ? शशि बाबू—हैरान होकर कुछ पूछने इसके पहले ही पडित जी ने कहा, 'यह दखिए जी, शुभ दिन निकालकर रखता हू। तिलक के लिए दो तारीखें निकाली हैं, अब बस लडके के आने की देर है।'

मन्दाकिनी हतबुद्धि-सी बैठी रही। घबरा उठी। सोचा थी पडित जी शाम को आएग और उसस पहले शशि बाबू को यह सारी स्थिति समझा चुकेगी। पर बीच म मुहल्ले नारायण बाबू ने आकर सब बिगाड दिया। अब वह अपना मान कैसे बचाए ?

शशि बाबू विस्मय स बोले किसकी शादी ? किसका तिलक ? आप किसकी बात कर रहे हैं पडित जी ?'

मन्दाकिनी की तरफ पडित जी की नजर पडी तो वे सारा माजरा भाप गए। महिला जगत म ही उनका उठना-बैठना अधिक होता था। यहाँ सब

करते-करते उनके बाल सफेद हो गए थे, उन्होंने स्थिति संभाल ली। बोले, माजी कह रही थी कि 'कोई शुभ दिन निकालकर रखिए पंडित जी। महीने के अंदर ही लडका विलायत से लौटकर आ रहा है। आते ही शादी लगवा दीजिए। सच, अच्छी बात ही तो है।'

शशि बाबू आखें फाडे खडे रहे। लडका आ रहा है? पंडित जी सीतेश की बात कर रहे थे क्या? शादी के लिए दिन निकाल रहे थे। घोडो के बिना ही दाने-पानी का इंतजाम हो रहा था। शशि बाबू बोले, 'आपकी माजी का तो दिमाग खराब हो गया है पंडित जी! एक काम कीजिए, आप माजी के लिए एक तावीज बना दीजिए।

मंदाकिनी ने सोचा—आज जो कुछ घटना है घट ही जाए तो अच्छा है। यही मौका था सब कुछ कह डालने का। शशि बाबू बाहर के आदमी के सामने मंदाकिनी का अपमान करने की हिम्मत नही कर पाएगे। इस लिए तेजी से वह बोल गई, 'क्या सीतेश की शादी की उम्र हुई नहा है क्या? मैंने उसके लिए लडकी ढूढ रखी है। यहा आते ही उसकी शादी कर दूगी। लडकी तय कर रखी है। दीदी के जेठ की लडकी? दीदी के साथ जाकर देख आई थी, निहायत खूबसूरत!'

शशि बाबू थोडी देर तक चुप रहे। फिर बोले, 'तो यह बात है। अच्छी बात है। शादी भी फिर दीदी की मदद से कर लेना। मैं जल्दी ही परेश के पास जा रहा हू।'

पंडित जी का लगा, वे कहा गह कलह के बीच आ फसे। वे व्यस्तता दिखाते हुए बोले, 'आज तो मैं चलता हू माजी। आप शशिभूषण बाबू के साथ सलाह मशविरा कर मुझे खबर कर दीजिएगा।'

पंडित जी के जाते ही बडे दिनो से बर्फ से ढकी इस गहस्थी मे जमकर लडाई हो गई। शशि बाबू क्रोध के मारे सारे घर मे नाचने लगे थ चिल्ला चिल्लाकर सारा घर सर पर उठा लिया। मंदाकिनी ने भी तीक्ष्ण टिप्पणी की—लडका उसका था, उसकी जो मर्जी वह कर सकती थी। यह अधिकार उसका था। शशि बाबू अपने बडे बेटे के पास जाना चाहते हैं तो जाए। शादी मे बडे बेटे बहू को यदि शामिल न होने दें तो न होने दें, मंदाकिनी को इसकी परवाह नही थी। मंदाकिनी अकेली ही कितनी

क्षमता रखती है, इसकी भी परीक्षा हो जाएगी । लोग हँसेंगे, तो हँसे घर के मालिक की ही जब ऐसी इच्छा थी तो मदाकिनी क्या कर सकती थी ?

शनि बाबू तेज कदमों से कमरे में जाकर परेश को लिखने लगे कि वे जल्द ही उसके पास पहुंच रहे हैं, और कुछ दिनों के लिए वहीं रहेंगे। वे अकेले आएंगे या दोनों ही यह स्पष्ट रूप से उन्होंने नहीं लिखा। शादी के बारे में भी उन्होंने कुछ नहीं लिखा। क्या पता परेश मां की हां में हां मिला बैठे। फिर तो मां-बेटा मिलकर शनि बाबू को ही बेवकूफ बना देंगे। वहां पहुंचकर वे मदाकिनी के दुस्साहस और निर्बुद्धिता की अच्छी तरह व्याख्या करेंगे।

अगले दिन से शनि बाबू जाने की तैयारी में जुटे रहे। पत्नी के साथ बातचीत बंद थी। मधु का चिल्लाकर बोले— जा बाबी के घर से तमाशा घर आ। तकिए की खाली साबुन से अच्छी तरह धो दे। बिस्तरबंद कहां है लेकर आ, उसे धूप में डाल' आदि आदि।

सुनते-सुनते मदाकिनी भी अभय पड़ी। तीखी आवाज में बोली, 'बड़े ठाठ से जा तो रहे हो पर बेटे की बहू कितना सर पर चढ़ाकर नाचेगी, वो भी देखूंगी। पानी की घुंघट से आसू पोंछते हुए घर नहीं लौट आए तो मैं भी मरूंगी नहीं अभी सब कुछ देखूंगी।

दीवार की सुनाकर दोनों अपनी-अपनी कह रहे थे। शनि बाबू बोले, 'जो खुद छोटे दिल का होता है वही दूसरे को छोटा समझता है।

'वह तो दिखेगा ही। मुंह के बल इस संकुचित चित्त वाली के पास वापस नहीं आ गिरे तो समझूंगी।

देखा जाएगा।'

देखी जाएगी।

इस तरह के कथोपकथन से शनि बाबू और भी जम गुन गए। उन्होंने अपना सूटकेस जमा लिया और मुन्ना के लिए क्या उपहार ले जाएं यह सोचने लगे। फुटबाल बना था टॉय रखा। बात नहीं करता तो क्या, दोनों हाथों से पकड़ना, उसी में मजा आएगा। टॉफी का डिब्बा, लॉजेंस, बिस्कुट का डब्बा, प्लास्टिक का गुड्डा—इस उम्र के बच्चे के लिए यही

सब ठीक रहता है।

शशि बाबू जान बूझकर दिखा दिखाकर बार बार बाजार जा आ रहे थे। एक बार जाते एक उपहार का पैकेट लाकर टेबुल पर रखते दुबारा जाते तो दूसरा पैकेट लाकर रखते। दो दिनो तक यात्रा करना ठीक नही था, नही तो शशि बाबू दो दिन पहले ही निकल जाते।

लेकिन आखिर म शशि बाबू क्या अपने बेटे के घर जा पाए ? नही। अचानक उससे भी बडी बाधा सामने आकर खडी हो गई। रात को गाडी थी। सुबह परेश का टेलीग्राम आया, अभी आने का प्रोग्राम स्थगित रखिए पिताजी। कारण चिट्ठी मे लिख रहा हू।'

इसके बाद शशि बाबू कैसे जाते ? पर कारण क्या हो सकता था ? शशि बाबू तरह-तरह से चिंता करने लगे। क्या हो सकता है कोई बीमार है, ऐसा लगता तो नही था। तो फिर ? कही दूसरी जगह बदली तो नही हो रही थी। सारी बुरी चिंताओ का परे हटाकर शशि बाबू ने बदली की बात को ही प्रमुख कारण मन मे मान लिया।

मदाकिनी के साथ बात-चीत तो बद ही थी। मधु को बुलाकर उसी स बात कर मन को हल्का करना चाह रहे थे मदाकिनी भी छटपटा रही थी पर आपस म सलाह न कर पाने के दुख मे दोनो के ही प्राण सूख रहे थे।

चिट्ठी आई, बेटे की नही, बहू की। परेश ने अपने पिता को नही लिखा था। बहू ने सास को लिखा था। चिट्ठी पढते पढते मदाकिनी का चेहरा गुस्से और अपमान से लाल हो उठा और उसके बाद ही मदाकिनी के चेहरे का भाव पलट गया। एक क्रूर हसी उसके चेहरे की प्रत्येक रेखा से फूट रही थी। जो हुआ ठीक ही हुआ, अब उन्ह उचित शिक्षा मिलेगी। व्यग भरी मुस्कान लिए मदाकिनी ने पति के कमरे म पहुचकर खुली चिट्ठी शशि बाबू के सामने रख दी। अब और बात चीत बद करना उचित नही था। ताना कसने का इससे बढिया मौका जल्दी नही मिलता।

कमरे म आते ही मदाकिनी बोली बेटे के घर से चिट्ठी आई है जो!'

पिछले चार दिनो से बात चीत बद थी, और उसके बाद ही एसा सुभाषण सुनकर शशि बाबू चौंक उठे। दूसरे ही क्षण आजीवन की प्रयसी

का कठोर हसता चेहरा देखकर शशि बाबू का दिल धड़क उठा। नही परेन की विपत्ति की कोई खबर नही थी। बाप को आने के लिए मना करने का भी कोई अनिवार्य कारण नही बताया गया था। कोई और बात होगी। शशि बाबू चोरी चोरी ताकने लगे।

मदाकिनी कठोर हसी हसकर गर्व के साथ बोली, 'क्या सोच रहे हो ? तुमने जाने की इच्छा जाहिर की और बेटे-बहू ने तुम्हारे लिए पालकी भेज दी ? तुम्हारे बेटे ने तो चिट्ठी लिखने तक का कष्ट नही उठाया है। प्रधानमत्री को ही अपना कर्तव्य समझ दिया होगा। बहू ने सोचा कि शायद बूढी सास भी आकर उनके यहा डेरा जमाएगी, इसलिए बहुत सोच समझकर चिट्ठी लिखी है। लो पढो। कुछ ज्ञान ही मिलेगा।'

चिट्ठी मदाकिनी ने टेबुल पर रख दिया, फिर भी शशि बाबू उसे उठा नही पा रहे थे। मदाकिनी तो पति को सान्त्वना देने आई ही थी। बोली, 'पास म चश्मा न हो तो पढकर सुनाऊ बहू तीन-तीन डिग्री पास की हुई लडकी है। भाषा की कही कोई गलती नही। लो सुनो

पूज्यनीया माजी ! आपका टेलीग्राम समय से मिल गया। आपके आने का समाचार पाकर हम बडी खुशी हुई थी। मुन्ने ने तो 'दद्दू आएग' कहकर सारा घर सर पर उठा रखा है। सचमुच आपके आने पर हम कितनी खुशी होगी। मा जी आप लोग तो यहा आएगे, पर अभी हमारा रसोइया घर चला गया है। बदले म अभी जो नया आदमी आया है बिल्कुल बोदा है उसे रसोई का कुछ भी ज्ञान नहीं। किसी तरह से गुजारा हो रहा है। जो भी बनाता है वह खाने लायक नहा होता।'

पिताजी ने लिखा था, उनकी तबियत ठीक नही रहती, बगलोर के लिए ही यहा आना चाहते हैं। ऐसी हालत मे यदि खान पान की ही सहूलियत नहीं रही तो स्वास्थ्य म सुधार कम होगा ? पुराना रसोइया करीब दो महीने बाद लौटेगा, ऐसा कहकर गया है। उसके आने पर आप लोगो को सूचित करूगी। तब कोई बाधा नहा रहेगी। आशा है आप सभी लोग सकुशल होंगे। छोटे देवरजी की एक चिट्ठी आई थी। लिखा था जल्दी ही वापस आ रहे हैं। जानकर बडी खुशी हुई। रमा का क्या समाचार है ?

क्या ?'

मुकुल आश्चर्यचकित होकर बोला, 'गया तो था, क्यों आप लोगों को मालूम नहीं ?'

शशिबाबू ने धीरे से सर हिलाया।

मुकुल बोला, 'ताज्जुब है, दीदी ने आपको कुछ लिखा नहीं। बड़ी लम्बी चौड़ी चिट्ठी तो आप लोगों को लिख रही थी। और सिर्फ मैं ही क्या ? बड़ी दीदी बड़े जीजाजी, बड़ी दीदी की लड़कियां सभी तो गए थे। बड़ी दीदी तो वहीं रह गई। जीजाजी और मैं चले आए।'

नहीं हम लोगों को कुछ भी नहीं मालूम।'

मालूम भी कैसे पड़े ?' मुकुल हंस हंसकर बोला, 'इतना हो-हंगामा चल रहा था उन दिनों—इधर घूमना, उधर घूमना। किसी को किसी बात का ध्यान ही नहीं रहता था। हालांकि मुझे भी उचित था कि जाने से पहले आप लोगों से मिलकर जाऊं, पर जल्दी में ।'

उचित ? किसलिए ? तुम्हारे लिए उचित अनुचित का क्या प्रश्न है ? एकाएक मंदाकिनी की कड़वी तीखी बात सुनकर मुकुल सहम गया। डरा-डरा-सा बोला, 'नहीं। मानें मिलकर जाता तो शायद आपको जो कुछ भेजना-वजना था भेज पाते। मां ने तो उनके लिए मूंग की दाल, बड़ियां पापड़, परवल और न जाने क्या-क्या दिया था।'

'हम लोग कुछ देते नहीं। हमारे पास देने के लिए है ही क्या ?' वह कर मंदाकिनी उठ गईं। और वो बुद्धू लड़का, वह भी सहमा-सहमा थोड़ा देर चुपचाप बैठकर चलने के लिए उठ खड़ा हुआ।

शशिबाबू रूखी हुई आवाज में बोले, 'जा रहे हो ?

'हां मौसाजी। रेल की थकान अभी तक पूरी उतरी नहीं।'

मुकुल के चले जाने के थोड़ी देर बाद मंदाकिनी फिर लड़ाई के मैदान में हाजिर हो गईं। बोलीं दीदी ने जेठ की लड़की को अनपढ़ गंवार कहा था न ? अब और दिखावा कहां गया। एक साल में कानिम और दूसरे साल पर घूमा धाम किया न ?'

वाणो से विंधे वाक्यो को सुन-सुनकर शशि बाबू गुस्से से पागल हो उठे। बोले, मेरे चेहरे पर कालिख पुती है इसलिए खुशी से समा नही रही हो। पर याद रखो—तुम्हार भाग्य मे भी यही है विलायत से लौटे बेटे के लिए उसकी राय के बिना लडकी पसद कर आई। अब तुम भी दखो भाग्य मे क्या लाछन लिखा है।

मदाकिनी हसकर बोली, 'डरने की कोई बात नही। सीतेश मेरा तीन चार डिग्री धारी विद्वान लडका नही है। वह तो मूख है, लोहा पीटन का काम करता है वही सीखने तो विदेश गया है, वहा के चाल चलन सीखने तो गया नही।

अगले ही दिन मुकुद बाबू आए। मदाकिनी के दुस्साहस का समथन उन्होने भी नही किया। बोले, 'इतनी जल्दबाजी किस बात की है ? सीतेश को यहा लौटने तो दो।'

पर मदाकिनी की व्यग्रता दूसरे कारणो मे थी। बेटे, बहू, पति, बेटिया, सबो को वह दिखा देना चाहती थी कि वह बिल्कुल रिक्त नही हो गई थी। उनके पास एक और जमीदारी भी थी। इसलिए शादी की तैयारिया होती रही। दूल्हा चाहे अभी समुद्र मे ही क्यो न तैरता हो।

उदास मन से शशि बाबू बैठक म बठे थ। जाते वक्त मुकुद बाबू ने उन्ह देखा। थोडे आश्चयचकित हुए। बोले, 'अरे तुम घर पर ही थे ?'

'हा। जब तक यमराज की तरफ से बुलावा नही आए तब तक इस घर के अलावा और जगह भी कहा है भाई ?'

'यह तो औरतो जसी बात हो गई शशिभूषण।'

'औरतो जैसी ? हो सकता है। शशि बाबू उदास होकर बोले, 'परश और बहू के व्यवहार क बार म तुमने कुछ सुना ?'

'सुना तो है। पर इसके लिए इतना उदास होने की भी जरूरत नही।

शशिबाबू गभीर होकर बोले, तुम ठहरे आधे योगी। यह कैसी जलन है, समझ नही सकते भाई। हमारी सबसे अधिक बेइज्जती बहू के भाई के सामने हुई। परेश की सास और साले उसके घर घूमने के लिए गए थे, इस बात का हम लोगो से छुपाने की क्या जरूरत थी।'

मुकुद बाबू मुस्कुराने लगे। बोले, 'जरूर छुपाने जसी कोई बात होगी

शशिभूषण ! कारण के बिना कोई कार्य नहीं होता। छिपाने की बात कहाँ से पैदा होती है मालूम है—डर से। जरूर परेश तथा उसकी पत्नी के मन में यह भय रहा होगा कि बहू के रिश्तेदारों के उनके घर जाकर खुशी मनाना तुम लोग पसंद नहीं करोगे। उसी भय से यह गोपनीयता पैदा हुई।'

'यह तुम्हारी गलत धारणा है भई।'

'नहीं शशिभूषण, यह मेरी गलत धारणा नहीं है। मैं बिल्कुल ठीक कह रहा हूँ। बुजुर्ग छोटों के सामने अपनी एक ऐसी डरावनी छवि छोड़ते हैं कि डर, संकोच, घबराहट के मारे उनमें सब छुपाने की इच्छा जागती है। फिर क्षोभ और स्वाभिमान मन को बेचैन कर देता है। मेरे एक दोस्त की भतीजी ऐसे भय के समय क्या करती है मालूम है? उसी ने मुझे बताया था, 'पति के साथ सिनेमा जाती तो सास के सामने माँ की बीमारी का बहाना बनाकर उसे देखने जाने के लिए घर से निकलती थी।' उसे मालूम था कि बस इसी एक बात के लिए घर से बाहर निकलने का पास पोर्ट मिल सकता था। अब तुम्हीं इसका मतलब निकालो।'

शशिभूषण बोले 'मेरे घर में वैसा ही शासन है, यह तुम देखने आए हो क्या?'

'यह देखने की चीज नहीं है शशिभूषण ! मजे की बात तो यही है। खुद ही सोचो ! मन्ना ने सीतेश की शादी के लिए कितना हो-हंगामा मचा रखा है। यह भी एक तरह का गलत शासन है कि नहीं?'

'तुम ठीक कहते हो।' शशिभूषण एकाएक उत्तेजित होकर बोले, 'तुम ठीक कहते हो। तुम्हारी कहना ही सारी विपत्तियों की जड़ है।'

शशिभूषण बाबू का भाग्य अच्छा था कि मंदाकिनी आस-पास नहीं थी, नहीं तो चालीस साल से इस गृहस्थी की सेवा करती आई मंदाकिनी शशिभूषण बाबू के दिए गए इस सर्टीफिकेट को पाकर शायद धरती को फट जाने के लिए कहती।

'माँ जी। माँ जी ! आ गए हैं आ गए हैं, छोटे भैयाजी आ गए हैं।

तरह की कहानी सुनती। पर नहीं, मदाकिनी का ऐसा भाग्य कहा ? रेखा वाली थी, उसके यहा कोई त्योहार है इसलिए उस दिन तो नहीं आ सकेगी पर अगले दिन सुबह-सुबह पहुच जाएगी। पर अभी तक तो वह आई नही थी। उसके आने से मदाकिनी की जान मे जान आ जाएगी।

रेखा पहुच भी गई। दरवाजे से ही शोर मचाती हुई बोली, 'कहा है रे साहब बाबू, देखें-देखें तू क्या बनकर लौटा है ?'

'छोटी दीदी !' नीतेश खुशी से उछल पड़ा। वह जल्दी जल्दी नीचे उतर रहा था, पर रेखा ही चप्पल फटफटाती हुई ऊपर चढ़ गई। उसके बाद ? उसके बाद तो दोनो भाई और बहन रह रहकर जोर-जोर से हसते। उनकी हसी की आवाज नीचे तक गूज रही थी। उनकी गपशप खत्म ही नही हो रही थी पर पहले भी कब उनकी गपशप खत्म हो पाती थी ? हमेशा ही इन दो भाई-बहनो मे बड़ी दोस्ती थी। इनकी गपशप खत्म ही नही होती थी। फिर भी आज रेखा का आचरण मदाकिनी के लिए असहनीय हो उठा। अचानक ही उसे लगा, रेखा का आचरण कैसा था। औरत जात इतना शोर मचाए ? छि छि उसके ससुराल का वह उत्सव आज क्या नही रहा। शायद तब नीतेश रसोई मे आकर पहले की तरह पूछता— मा क्या बना रही हो ?'

सुबह से मदाकिनी रेखा के नाम की माला जप रही थी पर अब उसका आना मदाकिनी को भा नहीं रहा था। उसे लगा, रेखा की जगह अगर कमना आती तो और अच्छा रहता।

बहुत देर तक सहन के बाद मदाकिनी नाराजगी के साथ मधु से बोली 'मधु छोटी दीदी से जाकर पूछ कि आखिर खाना पीना होगा कि नहीं ? दिन भर गपशप करने से ही पेट भर जाएगा क्या ?'

मिनटो मे रेखा धम्धमाकर नीचे उतर आयी और मदाकिनी के प्रश्न का जवाब दिए बिना खुले बालो को लपेटती हुई बोली 'मा तुम यह क्या रही हो ? एक बार भी ऊपर नहीं आया। हम लोग सोच रहे थे अब आओगी तब आओगी। सारी मजेदार बातें तो हमने सुन ली। सालो तो मा हो। मजाकिया है निशर और भी हंसी की खबर जुटा लाया है। हंसते हंसते जान ही निकल गयी।

मदाकिनी कलछी चलाती हुई बोली, 'पैर फैलाकर मजेदार बातें सुन सकू, ऐसी किस्मत लेकर तो जन्मी नहीं थी बेटी ! प्राण भी खटते खटते ही जाएंगे ।'

बेसुरी बात, रेखा समझ गयी । वह भी तुनक कर बोली 'तुम लोगों का भी काम तो ऐसा फैला हुआ होता है कि कभी खत्म ही नहीं होता । एक दिन थोडा कम ही खाना बना लेती । इत्ता सारा खाना बनायी हो, क्या जरूरत थी इसकी ?'

'मेरा कोई भी काम तो तुम लोगों की आंखों में जरूरी नहीं होता ।' मदाकिनी गभीर होकर बोली, 'इतने दिनों तक न जाने क्या उल्टा सीधा खाता रहा । आज उसकी थाली में उबली सब्जी और चावल रोटी मैं नहीं रख सकती, यही मेरा अपराध है न ।'

तुम तो मा बस । या तो छत्तीसो किस्म के व्यजन बनाओगी या फिर ऊबले खाने की बात करोगी । सौ तरह की सब्जी खाने की अपेक्षा ज्यादा खुशी सीतेश को थोडी देर तुम्हे उसके पास बैठने में होगी । उसने कितनी ही बार पूछा होगा—मा अभी तक नीचे क्या कर रही है ?'

मदाकिनी थोडी ठडी पडी गई । बोली, 'अगर पूछ ही रहा था तो यहा बैठकर भी तो बात हो सकती थी । ले अब खाने की तैयारी कर । बैठ जाओ सब एक साथ ।

'पिताजी और मामाजी को पहले दे दो । मैं तुम और सीतेश इकट्ठे खाएगें ।

मदाकिनी को बात अच्छी लगी । उसी अवसर पर वह शादी की बात भी छेड देगी । खाना खाते समय ही तरह-तरह की बातें की जा सकती हैं । पर क्या सीतेश के बिना शशिबाबू खाना पसद करेंगे ? खर उन लोगों को समझा दिया जाएगा । यही एक सुनहरा मौका था नहीं तो क्या पता कौन सा मौका देखकर शशिबाबू बेटे का मन ही न फेर दें ।

मदाकिनी अपने दोनो बेटे-बेटी के साथ-साथ खाना खाने बैठी । मन का क्षोभ मिट चुका था । एक सुनहरा अवसर देख मदाकिनी ने बात छेडी । एकाएक वह बोली, मैंने तेरी शादी तय कर रखी है ।'

सीतेश ने पानी का गिलास मुह से हटाकर अवाक होकर पूछा, 'क्या

तय कर रखा है ?'

'तेरी शादी पक्की कर दी है।'

'अच्छा ? क्या चमत्कार है। छोटी दीदी, तू ने अभी तक इत्ती बड़ी खुशखबरी मुझसे छुपा रखी थी। छि छि!'

मंदाकिनी गंभीर होकर बोली, 'तू इसे क्या मजाक समझ रहा है ?'

'मजाक ?' सीतेश दिखावे के दुखी सुर में बोला, 'मरने जीने जैसी समस्या को मजाक कैसे समझूंगा ? क्या कहती हो मां ? अच्छा मां वह शुभ दिन कब है ?'

रेखा ने कुछ समझकर चुप रहना ही ठीक समझा। मंदाकिनी कह रही थी, 'मैं तुझे सच बता रही हूं सीतेश, यह कोई हंसी मजाक की बात नहीं है। मैंने वाकई तेरी शादी पक्की कर रखी है। तू नाराज मत होना सीतू।

'नाराज ?' सीतेश नाटकीय भंगिमा से बोला, 'तुमने इतनी बड़ी खुशखबरी सुनायी। मैं नाराज क्यों होऊंगा मां ? अहा! देश की मिट्टी पर पैर पड़ते ही कितनी खुशी की खबर मिली। छोटी दीदी, तूने उल्लू जैसा चेहरा क्या बना रखा है ? ईर्ष्या हो रही है क्या ?'

'हां, हो तो रही है।

'यही तो मैं सोच रहा था। जरूर लड़की छोटी दीदी से गोरी होगी ?'

मंदाकिनी को मौका मिल गया। बोली, 'तुम्हारी छोटी दीदी से ही गोरी नहीं बल्कि घर के सभी लोगों में सबसे गोरी है। बड़ी बहू से भी।'

रेखा तब भी चुप थी।

मंदाकिनी खुशी से डगमगा रही थी और रेखा मौन थी। सीतेश संदेह भरी नजरों से रेखा को देखने लगा। रेखा बड़ा मन लगाकर खा रही थी।

सीतेश ने पूछा क्या बात है छोटी दीदी ? मेरे खिलाफ कोई षड्यंत्र रचाया जा रहा है क्या ?

मंदाकिनी अन्यमनस्क सी बोली, षड्यंत्र कैसा ? कहा तो तेरी शादी मैंने पक्की कर रखी है। तुम्हारा काम पर जाने के पहले ही विवाह रचा

कर जाराम से जा सकेगा, इसलिए पहले से ही बात आगे बढा रखी है। और लटकी क्या है, बस लाखो मे एक। इत्ती खूबसूरत। तेरी बडी मौसी के जेठ की लडकी है। मैंने तो शादी का दिन भी निकलवा लिया है। अब तू आ ही गया है। एक बार पक्की तरह से तू भी देखकर आ। हम सभी साथ चलेंगे, मैंने पहले से ही कह रखा है।'

सीतेश खाना खाकर उठ पडा। बोला, 'वाह! बात इतनी दूर पहुच चुकी है। तुम लोग इतने चुस्त हो, पहले तो मुझे कभी मालूम ही नही पडा था। पर बात जब इतनी आगे बढ चुकी है तो बाकी के लिए मेरी प्रतीक्षा की क्या जरूरत थी?'

'लो सुन लो बात।' मदाकिनी कष्ट से हसकर बोली, 'बात आगे बढा रखी है इसलिए क्या शादी भी करा देती? लडकी इतनी खुबसूरत थी कि मैं अपने को सभाल नही सकी।'

पर सीतेश पर कोई असर नही पडा। उसने केवल इतना कहा 'लालच से अपने को बचाना-बचाना चाहिए मा।'

ताज्जुब था। यही सीतेश अब इतनी बात सीख चुका था। मदाकिनी के माथे पर पसीने की बूद छूटने लगी। फिर भी हिम्मत जुटाकर बोली, 'बडा लायक बन गया है। अब मुझे तेरे से उचित-अनुचित सीखना पडेगा? शादी तो तेरी मैं करवा कर ही रहूगी। आज दो तारीख है, उन्नीस को अच्छा दिन है। अगले महीने होगी नही, क्योकि तेरे जन्म का महीना है। और उतनी छुट्टी भी तेरी होगी नही।'

सीतेश होठ उलटाकर बोला, 'मेरे रहने नही रहने से क्या बनता-बिगडता है। कोई गुडडा खरीदकर काम चला लो न मा। तू क्या कहती है छोटी दीदी? मैं ठीक कह रहा हू न?' इतना कहकर सीतेश जाने लगा। रेखा अब भी चुप थी। पर मदाकिनी तो चुप रहने वाली नही थी। उत्तेजित होकर बोली, 'भाग क्यो रहा है? बात ध्यान से सुन।

इसमे सुनने को है क्या?'

है क्यो नही? बात टाल रहा है। क्या शादी कभी करेगा नही?'

मैंने तो ऐसी कोई प्रतिज्ञा नही की है।'

तो फिर? उपेक्षा क्यो दिखा रहा है? लडकी सुदर है। अच्छा

खानदान है। थोडे गरीब हैं तो क्या? मुझे रुपयो का लालच नही। मैंने उन्ह वचन दिया है, बटे।'

'वचन क्या इतना ही सस्ता है मा कि जब जी चाहे किसी बात का वचन दे दो।

मदाकिनी के चेहरे की पसीने की बूदें गुस्से के उत्ताप से सूख गया। रूधी आवाज म बोली, 'क्या कहा तूने?'

जो कुछ कहा है, ठीक कहा है।'

अचानक मदाकिनी तीव्र स्वर मे बोली, 'इन बातो के पचडा म मैं नही पडती सीतू। मैंने उन्ह बात दी है, शादी तुझे करनी ही पडेगी।'

मरे दो साल की मेरे मौजूदगी म तुम्हारा दिमाग बिल्कुल ही चौपट हो गया है मा, यह तो मुझे किसी ने लिखा तक नही। तुम तो वाकई दिमाग खो बठी।' कहकर सीतश हस पडा।

'सीतू, मैं तेरी एक भी नही सुनूगी। तू भी इस बात को गाठ बाध ल। मने उनकी लडकी के ब्लाउज का नाप मगवाकर कपडे-लत्ते, जेवर आदि सब बनवा लिए हैं। उनकी भी सारी तैयारी हो चुकी है। इस समय बात पलट नही सकती, यह मैं स्पष्ट कहे देती हू।'

सीतेश आज ही पहुचा था। इसलिए यथा सभव परिवश को वह हल्का ही रखना चाहता था। इसलिए अब भी हसकर बोला, मैं तो यही कह रहा था, सब कुछ जब मरे बिना ही हो गया है तो जो बाकी है वह भी हो जाए।

मदाकिनी गभीर होकर बोली, 'अब समझ रही हू, मुझसे गलती हुई है। तुम्हारी राय बिना मुझे अपने अधिकार का प्रयोग नही करना चाहिए था। उसके लिए मैं माफी माग रही हू। सोचो या मरा कहा मानू होगा। गर जा कर रही हू उसका तो कोई चारा नहीं। अब दूसरा के सामने मा का अपमान तो तू नही करवाएगा, यह उम्मीद तो कर सकती हू न?'

सीतेश मूर्ख निरस सुर म बोला, 'इसम मान-अपमान का प्रश्न कहा? शादी की बात पक्की होकर भी तो टूटती है। जाकर कह दो। सकता हूं ...[illegible] लिखा तक किस म था, मैं समझ नहीं पाया था। सहसा ... गया शादी के लिए राजी ... हो रहा है।

यद्यपि रेखा मा के इस तरह हठ के पक्ष मे तो नही थी, मा को बहुत समझाया भी था। पर इस समय मा को देखकर उसका दिल भर आया। इसलिए वह झटपट बोली 'अच्छा ठीक है भई। इसी क्षण तो तुझे कोई सेहरा बाधने के लिए कह नही रहा। अभी से साफ 'ना' करने का क्या है? दो दिन सोच लो इसपर। फिर जो कुछ कहना है कहना।

सोचने-बताने का कुछ है नही छोटी दीदी। मा की तरह मैं भी साफ-साफ कह रहा हू शादी अभी मैं नही करूगा।

रेखा मा का पक्ष लेकर बोली, 'अभी नही करेगा, पर बाद मे तो करेगा न? फिर मा की आशा मानकर भविष्य को वतमान मे खीचकर ले आ न।'

'तू तो पक्की गृहिणी जैसी बात कर रही है छोटी दीदी। अच्छा खासा समझा बुझाकर बात बोल सकती है। लेकिन बात यह है मेरी बहना कि शादी कोई ऐसी चीज भी तो नहीं कि सिफ मात आज्ञा पालन हेतु उसे किसी तरह निगल जाऊ?'

मदाकिनी का गला रुध आया। बोली, 'बात देकर उसे मुकर जाने तो मरना बेहतर है। मेरा बेटा होकर तू मेरी बेइज्जती कराएगा?

सौतेश समझ गया। अब मा अनुरोध नही करेगी। रोना धोना मचाकर अपने आसुओ म बेटे के पैर फिसलवाने की चेष्टा करेगी। इसलिए उसने भी अपने को कठोर बना लिया। और कठोर स्वर मे ही बोला, 'जिस वचन को पूरा करना तुम्हारे हाथ मे नहीं था, वैसा वचन तुम दे ही कैसे सकी?' इतना कहकर सौतेश और रुका नही, कमरे से बाहर निकल गया। सर पर बिजली गिर पडी हो इस तरह से मदाकिनी निश्चल शून्य दृष्टि से बैठी रही। शशिबाबू की हार पर वह विजय की हसी हसी थी। पर मदाकिनी के भाग्य म सिफ हार नही बल्कि बाहर वालो के सामने बेइज्जती भी लिखी हुई थी। कितने अपमान और लज्जा की बात थी। लोग छीटाकशी करेंगे, उस पर हसेंगे।

मदाकिनी उन लोगो को क्या जवाब देगी? क्या कहेगी जाकर? उन लोगो के मन म तो आशका थी ही। पर मदाकिनी ही हमेशा से बोलती आयी थी बेटा मेरा उम्र मे बडा है पर स्वभाव उसका

बच्चा की तरह है। माकी बात वह टालेगा नहीं।' क्यो कही थी मदाकिनी ने यह बात ? यह बात मदाकिनी ने अहबोध से कही थी। माना वह दिखाना चाह रही हो — मैंने कैसा लडका पैदा किया है। उस पर कितना अधिकार है। बहू सुदर थी यह भी उसके पक्ष म एक बडा सम्बल था। माम की गुडिया सी लडकी थी। उतनी पढी लिखी नही थी, और शायद तभी चेहरे म एक बचपना सा था। कोमल-कोमल-सी थी। उसे देखकर ही मन्दाकिनी मोम की तरह पिघल गई थी। सोची थी, इस बहू के बल पर वह जीत जाएगी। और सीतेन को लडकी पसद आएगी ही।

वह विलायत की मजेदार गपशप नही सुन सकी थी। सीतेन खाना खाकर दोस्तो म मिलने निकल गया। रत्ना सतान-सभाविता थी, थककर सो गई। अकेली मदाकिनी सारी दुपहर आसू बहाती रही। शांति बाबू को इन बातो का कुछ भी नहीं मालूम पडा। उन्होने मुकुद बाबू को रोक लिया था। दोनो शतरज के खेल म मशगूल थे।

काफी देर रोने के बाद मदाकिनी की उत्तेजना थोडी कम हुई। आगे पीछे कर मदाकिनी सोचने लगी कि अब वह कौन-सा कर्तव्य पहले करे। यह सवाल उसके ही मान-सम्मान आनन्द और वेदना, हार जीत की बात नहीं थी यह तो जगहसाई थी। दुनिया के सामने उसका सर झुक गया था और उसने लडकी वालो को किस मुश्किल म डाल दिया था। बेचारे गरीब बिना दहेज लिए विलायत से लौटे दामाद पाने की खुशी म फूले नहीं समा रहे थे। मदाकिनी की दया की बात सबको बहुत फिर रहे थे। अपनी औकात के मुताबिक उन्होंने इन्तजाम भी कर लिया था। तिलक के आठ भर की क्या थी। पर अब तो उनके सर पर बिन बादल बिजली गिरने वाली थी। काफी देर तक सोचने के बाद मदाकिनी उठ पडी। चेहरे पर कठोर संकल्प का भाव था । जिस दिन बडा दामाद गुस्से म घर से जा रहा था—उस दिन इसी तरह की दृढता म मदाकिनी बोली थी 'जा रहे हो दामाद के पद पर पत्थर मारकर मान। उस दिन भी मदाकिनी के चेहरे पर यही दृढता था।

हा, बेटे के पैर ही पडेगी मदाकिनी। मन के सारे मान स्वाभिमान को तिलाजली देकर बाहर की दुनिया मे तो इज्जत बचाकर रखनी ही पडेगी।

मधु की बातचीत से पता लग गया कि सीतेश घर लौट आया था। मदाकिनी धीरे-धीरे बेटे के कमरे की तरफ गयी। पहले जो बरामदे से लगा हुआ कमरा परेश का था, सीतेश की आने की खुशी मे मदाकिनी ने इसी कमरे को सजाया था। कमरे के पास पहुच कर वह सहसा रुक गई। कमरे मे सीतेश अकेला नही था। रेखा भी थी। वहा रेखा क्या कर रही थी? मदाकिनी गुस्से से सर से पाव तक जल उठी। अकेले मे वह सारे अहकार को छोड अपने छोटे बेटे से विनती कर सकती थी, पर दूसरे किसी और के सामने तो ऐसा करना सभव नही था, चाहे वह सतान भी अपने ही पट की क्यो न हो। वह लौट रही थी पर उसके कान उसी तरफ थे। क्या बात हो रही थी भाई बहन म? जरूर मा की आलोचना कर रहे होगे। इसके अलावा वे कर भी क्या सकते थे। मदाकिनी वही खडी होकर सुनने लगी। रेखा कह रही थी,— क्या कहू बोल? मा को मैंने कुछ कम समझाया था? पिताजी के साथ तो इस बात पर उसकी धूम धडाका लडाई तक हो गई। यहा तक कि इस बात को लेकर मामाजी से भी रिश्ता करीब-करीब खत्म ही है। भीष्म प्रतिज्ञा है मा की। शादी तो वह करवाएँगी ही। अजीब जिद्दी किस्म की हो गई है मा।'

सीतेश बोल रहा था, 'जिस तरह आग पीछे सोचकर वह बात नही करती, उसका फल तो भोगना ही पडेगा। मैं अगले सप्ताह ही चला जाऊगा। तीन सप्ताह की छुट्टी मिली थी, पर जरूरत क्या है? जानती है छोटी दीदी, यह सारा कुछ अनपढ होने का फल है। हमारे देश की महि-लाएँ अधिकतर अशिक्षित होती है। इसीलिए सामाजिक बुद्धि भी उनमे कम होती है। दूसरी तरफ आत्म सम्मान का बोध पूरी मात्रा मे है। लेकिन सम्मान कोई किसी को नही द सकता समझी। अपन मान का खुद ही बचाना पडता है।'

सब कुछ सुनकर मदाकिनी धीरे धीरे वापस लौट आयी। उसकी आखो के चारो तरफ धुधला-सा लग रहा था। कितना समय हुआ

होगा ? शाम हो आयी थी।

शतरंज का खेल खत्म कर शशिबाबू अंदर आकर बोले, 'मधु अपनी माँजी से जाकर कह कि मामाजी जा रहे हैं।'

मधु रसोई में चूल्हा जला रहा था। बाहर आकर बोला, 'माँजी सो रही हैं मालिक।'

'सो रही हैं? ऐसे बेवक्त? शाम को ही!'

'जी मालिक, मुझे भी ताज्जुब हो रहा है। छोटी दीदी के घर से गाड़ी आयी थी। दीदी मुझे चुपचाप बोलकर गयी—'मधु, माँ सो रही हैं इसलिए उन्हें जगाए बिना ही जा रही हूँ। कह देना आज जा रही हूँ, हो सकेगा तो कल सुबह आऊँगी।' छोटे भैया जी को भी उधर ही कहीं जाना था, दीदी की गाड़ी में ही चले गए।'

'इसका मतलब? वह सो रही हैं और बेटा-बेटी दोनों घर से बाहर निकल गए? चाय पीकर गए हैं क्या?'

'जी हाँ, चाय तो पी थी। दीदी ने बिजली के हीटर में चाय बनायी। बिस्कुट, मूँगफली के साथ चाय पी।'

'इतना सब कुछ हुआ पर उसे किसी ने जगाया नहीं? बेवक्त सो रही है?' तबियत तो खराब नहीं? देखूँ जाकर—।

नींद या विस्मृति? क्या सच में मन्दाकिनी सो गई थी? बहुत दिनों की थकान के बाद वह जी भरकर सो रही थी पर पूरी नींद आयी कहाँ थी उसे। मधु का बार-बार बुलाना क्या मन्दाकिनी के कानों में नहीं पहुँचा था? पर जवाब देने की उसकी इच्छा नहीं हो रही थी, इसलिए चुपचाप पड़ी थी।

अब उठना चाहिए था। पर फिर वह उठे क्या? क्या जरूरत थी उठने की? एकाएक उसे लगा जीवन का सारा काम ही खत्म हो गया। आखिर में शायद कार्य में उसका आग्रह खत्म हो गई थी। वह पति की आवाज सुनकर चौंक कर उठी। शशिबाबू खिड़की से कह रहे थे, 'होगा ही तो। शरीर को कभी शरीर समझती है? घर-गृहस्थी में अपने को भूली रहती है। शरीर के अन्दर कुछ रह नहीं गया है।'

शशिबाबू की आवाज में कितनी ममता थी? पर अब वह किस

का देना कितना अनुचित था। उम्मीदें टूटने के लिए जी भर कर ताना सुना गई लड़की की मां और बुआ।

और मंदाकिनी? नहीं वह दुबारा बेहोश नहीं हुई। उसमें बड़ी ग्लानि थी। किसी भी तरह अपने होशोहवास काबू में रखने के लिए मंदाकिनी प्रतिबद्ध थी। तभी वह ओंठ तले ओंठ दबाकर बैठी रही, लेट नहीं गई।

थोड़ी देर में शशिबाबू कमरे में आए। मंदाकिनी ने आंखें उठाकर देखा अब बाजी शशिबाबू के हाथ में थी। क्या पता वो भी क्या-क्या सुनाएं। इधर-उधर ताककर शायद बैठने की जगह की कमी की वजह से शशिबाबू पलंग के एक कोने में बैठ गए। थोड़ी भूमिका तो बांधनी ही पड़ती है। गला खखारकर बोले, 'अजीब औरत थी? कितनी खरी खोटी सुना गई। औरत थी, इसलिए मुझे भी चुप रहना पड़ा। नहीं तो इच्छा हो रही थी कि मैं भी कुछ सुनाकर छोड़ूं।'

मंदाकिनी को लगा यह शशिबाबू की भूमिका थी, इसलिए धीमी आवाज में बोली, 'मैंने जैसा काम किया था उसका फल तो भोगना ही था। तुम्हें भी अगर कुछ कहना है तो कह डालो। मैं सह लूंगी।'

'छि मंदा।'

बहुत युगों के बाद, भूले बिसरे हुए जमाने का यह सम्बोधन कर शशिबाबू ने पहले ही की तरह पत्नी की पीठ पर थोड़ा स्नेह का हाथ रखा। अब मंदाकिनी काठ की नहीं बनी रह सकी। उस विस्मृत युग की तरह ही वह पति की गोद में मुंह छुपाकर सिसक सिसक कर रो पड़ी। रोते हुए बोली— तुम मुझे धिक्कारोगे नहीं? शर्मिंदा नहीं करोगे? मुट्ठी भर धूल मुझ पर क्या नहीं छिड़कोगे?'

ऐसी इन जगहों पर शशिबाबू कुछ कह नहीं पाते, इसलिए चुपचाप रोती हुई पत्नी की पीठ पर हाथ फिराते रहे। बार बार एक ही बात कहते। छि मंदा! ऐसा नहीं कहते।'

शायद इतने दिनों के बाद भी मंदाकिनी उसी तरह पति की गोद में पड़ी रहीं। अब बेटे का दुर्व्यवहार उतना नहीं चुभ रहा था। [illegible] मुस्कराते [illegible] भी [illegible] हो गयी थी। अब

सिर्फ उसे याद आ रहा था कि बड़े बेटे के आगे शशिबाबू की हार पर उसने किस तरह खुशी मनायी थी।

मुकुंदबाबू आकर बोले, 'क्या बात है शशिभूषण! अचानक बुलवा भेजा?'

शशिबाबू हमेशा की तरह, 'आओ भाई' कहकर शांत भाव से बोले, 'बैठो, तुमसे कुछ खास बात है।'

मुकुंद बाबू बैठ गए। अब इस गृहस्थी में पहले जैसी जान नहीं रह गई थी। इसलिए आजकल यहां आकर मुकुंदबाबू भी बुझे बुझे से हो जाते।

शशिबाबू बोले, 'तुम्हारी बहन ने जिद पकड़ ली है कि अब इस घर-गृहस्थी को छाती से लगाकर नहीं रखेंगी। काशी में जाकर रहूंगी।'

मुकुंदबाबू फीकी हंसी हंसकर बोले, 'क्या जोर की लड़ाई हुई है क्या?'

शशिबाबू इस मजाक में शामिल नहीं हो सके। गंभीर भाव से ही बोले, 'बात मजाक की नहीं है भाई, बच्चों के व्यवहार से वह बिल्कुल बुझ गई है। तुम्हें सब कुछ तो मालूम है। खासकर सीतेश के आचरण से वह मन-ही-मन खत्म हो चुकी है।'

मुकुंदबाबू अधिक गंभीर भाव से बोले, 'हो सकता है तुम्हारे बेटा की गिनती आदर्श पुत्रों में नहीं है, पर उनके आचरण की इतनी बुराई भी नहीं की जा सकती शशिभूषण! दोनों आंखें खुली रखकर बात करो तो देखोगे कि उन लोगों ने तुम लोगों का अपमान नहीं किया, बस अपने को बचाने की कोशिश की है।'

'वह तो मैं समझता हूं।' शशिबाबू बोले, 'मैंने भी तो मना किया था, तुम क्या नहीं जानते? फिर भी सुशिक्षित अच्छे घर का लड़का मां के मान अपमान का ख्याल नहीं रखेगा, ऐसी उम्मीद तो कोई नहीं रखता। मां के आंसुओं से उसका मन नहीं भीगा? हमारे युग में तो मां की आंखों में आंसू देखकर बेटा अपना गला भी अपने हाथों से काट सकता था।'

मुकुंदबाबू बोले 'अपनी बात का जवाब तुमने खुद ही दे दिया। वह तुम्हारा युग था। यह युग हमारा-तुम्हारा नहीं है। इस युग में आदर्श और भावना के बीच सौतेला रिश्ता है। और मेरी राय में यह कोई बड़ी भारी भूल भी नहीं।'

'गलत बात नहीं है?' शशिबाबू ने आश्चर्य से पूछा।

'मेरी राय में तो नहीं है। प्राचीन काल में वानप्रस्थ का नियम था। क्यों था? क्योंकि चिंताशील लोग समझ चुके थे कि हर चीज का एक वक्त होता है, और उस वक्त का एक अंत भी होता है। पका फल यदि पेड़ पर ही लटककर रहना चाहे तो यह गलत बात होगी। यह घर-गृहस्थी काफी लम्बे अरसे से तुम लोगों की मुट्ठी में थी, यह सच है, पर धीरे-धीरे नियमानुसार गृहस्थी बढ़ी है और उधर तुम्हारी मुट्ठी शिथिल पड़ चुकी है। और उस शिथिल मुट्ठी में यदि पहले की तरह गृहस्थी को जकड़कर रखना चाहोगे तो यह कोई बुद्धिमानी की बात नहीं होगी। प्राचीन युग में भी मातृ-पितृ भक्ति का आदर्श होते हुए भी वानप्रस्थ का नियम क्यों था मालूम है? वे जान गए थे कि बड़े बुजुर्गों के गृहस्थी से शांतिपूर्वक हट जाने में ही गृहस्थी का कल्याण है। अधिक उम्मीद रखने पर मान टिकता नहीं।'

शशिबाबू फिर फीकी हँसी हँसकर बोले, 'लायक बेटा अपने बूढ़े माँ-बाप का मान रखेगा, उनका मान करेगा यह क्या बहुत बड़ी आशा होती है?'

मुकुंदबाबू गंभीर भाव से हँसकर बोले, 'बूढ़े माँ-बाप का मान रखेगा, आदर में रखेगा यह कोई बड़ी आशा नहीं। यदि सचमुच ही वे बाप-दादाओं की तरह बेटों पर निर्भर होकर रह सकें तो। पर यदि तुम अस्सी साल की धुंधली दृष्टि से उनके जीवन के हर क्षेत्र में हर पहलू पर नजर रखोगे और उनके हर आचरण को गलत करार देते रहोगे तो भी लाचार हो जाएंगे। जीवन का पूर्ण विकास त्याग में है, समझे शशिभूषण! हम [illegible] त्यागना जानते हैं तभी हमें इतना कष्ट और दुःख उठाना पड़ता है। [illegible] भी आज मान कर [illegible] यदि उस सुख [illegible] से त्याग कर सकता तो हम लोग सुखी होते, सच है पर वह ऐसा नहीं कर सका, इसलिए उनसे [illegible] भी नहीं की जा सकती। त्यागी का अर्थ सिर्फ एक दिन घर पर गृहस्थ

बाधना तो नही होता। शादी का अथ है, जीवन को जीने के लिए एक सही जीवन साथी का चुनाव। इतनी बडी बात म उनकी अपनी कोई आजादी या राय नही होगी, यह आशा रखना नितात अमानवीय है।'

'तो फिर तुम्हारी राय म हमारा काशी जाकर रहना ही ठीक रहेगा ?'

'नही, मैं ऐसा कुछ नही सोचता। काशी या व दावन की क्या जरूरत ? मेरी राय मे वानप्रस्थ ही उत्तम व्यवस्था है और वह इस घर मे रहकर भी हो सकती है। उसके लिए जगल जाने की जरूरत नही, दूसरो से उम्मीद न रखना ही असली 'वानप्रस्थ' है।'

'ठीक है। यही बात अपनी बहन को जाकर समझाओ।'

मदाकिनी एक तावे के लाटे को माज माज कर चमका रही थी। मुकुद बाबू अदर आकर हसकर बाले, लोटा तो हाथ म है ही, बस कम्डल का जुगाड करना है।"

मदाकिनी कुछ बोली नही, सिफ आखें उठाकर भाई को देखा।

शशि बाबू व्यस्तता दिखा कर बोल, अपन भया की बात जरा सुनो। तुम्हारे भैया बता रहे है कि जीवन म वराग्य आने स ही घर गहस्थी छोड छाडकर कही चले जाना पडेगा, इसका काई मान नही है। घर बठे भीजप तपपूजा-पाठ हो सकता है।

मदाकिनी का चेहरा लाल हो उठा। बोला, 'जप, तप करने बात किसने कही ?'

'ओह हो ! इसम कहने का क्या है।'

'काशी जाकर रहने का मतलब ही यही है।

'नही ऐसा नहा है। कहकर मदाकिनी अपने काम म लगी रही।

शशि बाबू मुकुद बाबू को साक्षी बना कर बोले, 'अच्छा तुम्ही बाला भाई रेखा की तबियत ठीक नहा चल रही है। पहली बार रेखा मा बनन जा रही है, ऐसी हालत म मा बाप होकर उसे छोटकर चला जाना कहा तक ठीक रहेगा ?'

मदाकिनी बोली, 'सास-ससुर पास म है ही। पति भी है, फिर उस किस बात की चिंता है ?'

शशि बाबू मन ही मन घबरा उठे, 'बाप रे ! यह तो बिल्कुल पत्थर का टुकड़ा बन गई है।'

शशि बाबू मंदाकिनी को लक्ष्य कर मुकुंद बाबू से बोले, 'घर छोड़कर चल जाएंगे, कहना जितना आसान है निकलना उतना ही मुश्किल। तुम्हीं कुछ बोलो न, मुकुंद ! पचास वर्षों से तिल तिल से बनाई यह घर-गृहस्थी हजारों चीजें, एक बात पर छोड़नी पड़ेगी, यह कोई खेल है ?'

मुकुंद बाबू चुप रहे, क्योंकि बोलते-बोलते शशि बाबू का गला रुंध गया था।

मंदाकिनी उठकर खड़ी हो गई बोली, 'तुम खामख्वाह मुझे बाधा मत दो। रोक नहीं सकोगे मुझे। मैंने जो संकल्प लिया है, उसे मैं पूरा करके ही रहूंगी।'

'सुन लो अपनी बहन का संकल्प मुकुंद भाई !' कहते-कहते शशि बाबू की आंखें गीली हो उठीं। रुंधी हुई आवाज में शशि बाबू बोले—'और मया की बात नहीं सोचोगी ? पांच सौ मील दूर मया को छोड़कर रह पाओगी ?'

मंदाकिनी थोड़ी मुस्कुराईं। बोली, 'पति पुत्र को छोड़कर भी जब रहना पड़ता है तो लोग रह लेते हैं। मया को छोड़कर रह नहीं पाऊंगी, यह तो हंसने लायक बात है।'

'ऊफ !' शशि भूषण ने लम्बी सांस ली।

शशि बाबू की 'ऊफ' सुन कर मुकुंद बाबू हंस पड़े। बोले, 'शशि भूषण गलती कर रहे हो। इतनी आसानी से थोड़े ही मुक्ति दूंगा। जब तब 'माया' के मकान में जाकर धरना दूंगा। अच्छा ही होगा भाई हमारे लिए तो अच्छा ही होगा। जब मरजी, हवा परिवर्तन के लिए पहुंच जाऊंगा। और अपने साथ बोझ भी नहीं ढोना पड़ेगा। गाड़ी से उतरते ही गरम गरम साग की कचौड़ी क्या मंदा, खिलाओगी न ? अच्छा तो अब मैं चलता हूं।' कह कर मुकुंद बाबू तुरंत घर से निकल गए।

इस तरह एकाएक चला जाना शोभा नहीं देता, पर मुकुंद बाबू के हृदय में जो सुख-दुख का ज्वार भाटा चल रहा था, यह वे किसी को मालूम नहीं होने देना चाहते थे।

मुकुद बाबू के चले जाने के बाद शशि बाबू क्षोभ के साथ बोले, 'तुम्हारा हृदय भी कुछ कम कठोर नही है। भैया के मुह पर कसे बोल सकी इतनी बडी बात, मैं तो हैरान रह गया। बोलते समय तुम्हारा मन नही घबराया ?'

मदाकिनी शांत भाव से बोली, 'औरत का मन बडे ताज्जुब की वस्तु है, समझे ? वह एक बार जब टूटता है तो उसमे फिर किसी के लिए कोई जगह नही होती। रसोई, भडार घर से मोह औरत जरूर अधिक रखती है यह सच है, पर मन के अदर का भडार जब टूट जाए तो जमा जमाया घर, गृहस्थी, भडार का सामान कोई उसे बाध नही सकता। भैया के साथ मेरा स्वार्थ का कोई सघर्ष नही है, इसलिए भैया के प्यार मे खोह भी नही है। स्वार्थ का टकराव होता तो क्या होता, कह नही सकती। और तुम्हे तो अब भी जकडी हू—शायद मन के किसी कोने मे अभी थोडी उम्मीद बची हो। नही तो टिकट कटवाकर 'काशी' तक जाने की जरूरत नही पडती यहा गगा मैया की गोद में ।' भाई की तरह बहन भी बात पूरी किए बिना उठकर चली गई।

इसान इसान के बधन से कितनी जल्दी छुटकारा पा लेता है, पर वस्तु का मोह छोडना वाकई असभव सी बात है। वैराग्य की भावना चाहे कितनी ही प्रबल क्यो न हो, पर यह पलग, अलमारी, अलगनी, टेबल कुर्सी बतन भाडे, हडा, कलश, टोकरी, हसुआ कटारी हजारो चीजो के भार से लद इस घर को खुला छोडकर तो तीर्थ मे निकला नही जा सकता न ? अतएव इनके उत्तराधिकारियो को सूचना देकर बुलाना जरूरी था।

मदाकिनी ने शशि बाबू से बेटा और बेटियो को चिट्ठी लिखवाई कि वे आकर इन सबो की जिम्मेदारी ले और उन्हे रिहाई दे। चिट्ठी डाक मे डालन के बाद से मदाकिनी मन ही मन आशकित हो रही थी कि कहा यदि वे आए ही नही तो ? अगर उन्हे इन चीजो की परवाह न हो। कई दिन बीत गए पर कोई नही दिखाई नही पडा। कोई चिट्ठी पत्री भी नही। शशि बाबू पूछ रहे थे, 'अगर वे लोग नही आए तो कसे जाना होगा ?'

मदाकिनी बोली, 'आना तो होगा ही। मधु को वे महीना बाध उसे ही घर की देख भाल करने छोड देंगे।'

'हर महीने इस घर के पीछे नाहक पैसा बर्बाद करना पडेगा ?'

'उपाय भी क्या है ?'

'तुम क्या पैसा भरोगे ? परेश को लिखकर पूछ लो कि कलकत्ता का घर रखना है या नहीं। किराया भर सकता है तो रखेगा। तब घर मधु की हिफाजत म रहेगा।'

यह सुनकर मधु भी कहा चुप रहने वाला था। जोर-जोर कहने लगा, 'मधु कोई पगला नही है माजो ! और उस भूत ने भी नही पकड रखा है कि वह खाली घर की चौकीदारी करता रहे।'

ठीक इसी समय सीतेश की चिट्ठी आई। उसने लिखा था, 'कोई भला आदमी 'काशी' म जाकर रहता हो, ऐसा उसने जीवन म कभी सुना नहीं। ठीक है। मा, बाप अपनी मर्जी के मालिक है। और सामान, बासन की यदि भाभी भया का जरूरत हो तो वे ले जाए। उसे एक तिनका भी नहीं चाहिए।

परेश उसी दिन आ पहुचा। अकेला ही आया था। बीवी बच्चा को साथ नहीं लाया था। आते ही बोला, 'सामान-वासन मुझे भी कुछ नहीं चाहिए। मैं तो बस आपको मनाने आया था।'

आखिर यह भी कोई बात थी ? नलिन बाबू की उम्र के किसी व्यक्ति को घर बार छोड़कर 'काशी' म निवास करते परेश ने तो कभी देखा नहीं था। नलिन बाबू ने कभी इस यात्रा का समर्थन नहीं किया था पर आज उन्हें भी रंग चढ़ गया, इसलिए मधु हँसकर बोले, 'जो नहीं जाते उन्हें अपने कामों से छुटकारा नहीं मिला होगा। पर हम लोगों ने तो अपनी सारी जिम्मेदारियां पूरी कर ली हैं। अब किस लिए घर-गृहस्थी को संभालते रहें ?'

परेश बोला, इसीलिए तो कह रहा हूं कि अब तो आपको किसी झंझट झमेले का सामना नहीं करना पड़ता। कोई हरना-गुनना भी नहीं। चारों ओर मौज ही मौज है। फिर घर छोड़ने की क्या जरूरत है ?'

नलिन बाबू सभार भाव में बोले, हम दोनों बिल्कुल अकेले हो गए हैं

तभी तो आश्रय की आशा मे दौड़े जा रहे है। अगर बाबा विश्वनाथ हमे आश्रय दें। अब घर गहस्थी को मेरी जरूरत तो है नही। इससे तो अच्छा है कि हमी गृहस्थी को छोड दें। इससे मन मे ठेस कम पहुचती है। यही बात है बेटे!'

परेश सर झुकाकर चुपचाप खडा रहा।

परेश कुठित था। शशि बाबू और मदाकिनी बुझे-बुझे से दीख रहे थे। सिर्फ मधु की आवाज का गम किए हुए थी। दिन भर उसने मालिक-मालकिन के 'काशी जाने की तैयारी करने म सारा घर सर पर उठा रखा था। घर मे उसने सामान का ढेर लगा दिया था। न मालूम कब कौन-सी चीज की जरूरत पड जाए। मदाकिनी उसे कितना भी समझाए कि उन्ह किसी चीज की जरूरत नही, पहनने के कुछ कपडे और कुछ बतन के सिवाय उन्ह और कुछ भी नही चाहिए, पर मधु काहे को मानने वाला था। वो भी बार बार समझा रहा था कि परदेश म छोटी बाता के लिए भी दिक्कत हो जाती है। इसलिए सामान वह बढाता ही जा रहा था।

पर जाने के दिन एकाएक मधु जब गरम ठडे पानी का थैला निकाल कर धूल साफ करने लगा तो मन की थकान को परे हटाकर मदाकिनी झल्ला उठी—'तू इसे क्या ऊपर से लाद रहा है? इससे तो अच्छा होगा कि तू इस पूरे घर को ही अपन मालिक के कधो पर लाद दे। उस लेकर ही वे काशी म रहन जाए । हुक्का, शतरज, गठिया का तेल, इतने स भी चैन नही पडा। अब ऊपर से यह जजाल लाद रहा है। मैं सब उठाकर बाहर फेंक दूगी। पहले से कह देती हू मधु!'

मधु भी गभीर भाव से बोला, 'मालिक को जब घुटने म और आपक सिर मे दद होगा, तब इसकी जरूरत नही पडेगी?'

'तुझे कुछ सोचने की जरूरत नही। जहा जो कुछ था वही जाकर रख द। परेश की इच्छा हागी ता लेकर जाएगा, नही तो सडक पर फेंक देगा।'

मधु अपना काम करता रहा। पर मुह से बाला, 'फेंक दूगी'। राजकुमारी जसी हुक्म चला रही हैं मा जी। सर दद के मारे फटन का होगा तब पता चलेगा थैला न लाकर कितनी बेवकूफी की थी। मधु को कुछ सोचन की जरूरत नही है, पर मधु के सिवा सोचेगा भी कौन?

सोचने के लिए जतीन बाबू का नौकर आएगा क्या ?'

'अच्छा अब चुप कर ! जो मर्जी लाद कर धर दे। इसी दालान में सब छोड़कर चली जाऊंगी।'

मधु, ठीक है।' कहकर सामान पैक करने लगा। मधु के जुटाए हुए सामानों के ही करीब चार पांच अदद हो गए थे।

पर होने में क्या होता है। सच में मधु ने कितना सोच सोचकर आग्रह के साथ सामानों को जचाया था। मदाकिनी हर्गिज लेने के लिए राजी नहीं हुई। और सच में मालिक के नहाने का पीढ़ा, और बैठने का मोढ़ा भी मधु ने जरूरी सामान समझ कर बांध दिया था तो भी मदाकिनी लाचार थी।

मधु को मदाकिनी की बात से दुख पहुंचा था। वह मुंह लटकाए खड़ा था। उसका चेहरा भी भारी हो गया था। उनके चलते उसने पैर तक नहीं छुआ था, पर मदाकिनी क्या कर सकती थी ? मदाकिनी ने तो सभी को किसी न किसी तरह से दुख पहुंचाया था। एक नौकर के स्वाभिमान को वह अब क्या मान देने लगी ?

चलते समय शशिबाबू बोले, 'तू भी स्टेशन तक चल मधु ! हम लोगों को गाड़ी में बैठाकर आ जाना।'

मधु सामानों के ढेर में खड़ा जिद से बोला—'आप लोग जाइए। मधु का स्नेह दिखाने की जरूरत नहीं।'

ये लोग भी क्या कर सकते थे ?

आखिर में ठाकुर को प्रणाम कर ईश्वर का नाम लेते हुए शशिबाबू और मदाकिनी यात्रा के लिए प्रस्थान कर गए। घर अभी छोड़ा नहीं गया था, क्योंकि मन ही मन फिर दोबारा लौटकर वापसी होकर आना था।

स्टेशन पहुंचकर मदाकिनी हैरान रह गई। स्टेशन में माता पूनम की चाची छोड़ने आई थी। कितने लोग उनसे मिलने के लिए आए थे। मुकुंद बाबू जो इन दिनों नाराज होकर बहू के घर आना छोड़ रखा था, वे अपने साथ मदाकिनी के लिए और कुछ खाद्य भी साथ लाए थे। शशिबाबू का एक भांजा भी आया था। उसका अस्त-व्यस्त शरीर

को लेकर आई हुई थी। उसके साथ उसका पजाबी पति और पजाबी समधी और समधिन भी आए हुए थे। सबसे बडी बात, न मालूम सीतेश भी कैसे आ पहुचा था। वह थोडी ही देर पहले हावडा पहुचा था।

घर जाकर भीड न बढाकर सभी सीधे स्टेशन पहुचे थे। सब सभी के हाथ मे कुछ-न-कुछ उपहार था। फल, मिठाइया से डब्बा भर गया।

किसे छोड किससे बात करे मदाकिनी ? सौजन्य को प्रमुखता दे या स्नेह को ? सौजन्यता वश बात करने म तो ट्रेन छूटने का समय हो जाएगा। मदाकिनी बोली, 'ऐसी हालत म इतनी भीड मे रेखा तू क्यो आई बेटी ?'

'नही आऊगी ? कही अगर मर गई तो तुम लोगो को देख भी तो नही पाऊगी न ?'

'राम राम ! ऐसी बात जबान पर भी नही लाते बेटी।' मदाकिनी का हृदय काप उठा। दो महीने बाद अगर वह काशी जाती तो रेखा क प्रति मा का कत्तव्य पूरा कर जा सकती थी। सच म रेखा के लिए उसने कभी कुछ नही किया।

'यह क्या रेखा ? तसर की साडी लाई है ? पिताजी के लिए तसर की धाती और चादर। क्या होगा इन सबका ?'

'होगा क्या ? इसे पहनकर पूजा करोगी। हम लोगो का मोह त्याग करने के लिए जा रही हो। वही करना।'

'धत पगली कही की। तुम लोगो का मोह काट सकू, ऐसा दिन कब आएगा री ? क्या इतने सारे रुपये खच किए ? बोल छि ! छि।'

'मदा याद है न ? एकाएक पहुचकर तुम्हे चौका दूगा।' मुकुद बाबू बोले।

'भया ! यह भी कोई कहने की बात है ? देख लेना अत तक तुम्ह भी काशी मे ही बसाकर छोडूगी।

'मैं भी वही सोच रहा था।'

शशिबाबू का भानजा बोला, 'मामीजी ! इसी उम्र म काशी' बसन के लिए जा रही हो, साथ मे हमारे मामाजी को भी लेकर भाग रही हो—।' भाजा दशहरे के दिन प्रणाम करने के लिए आया था, पूरे साल

घर में यही एक बार मिलना होता था, फिर भी वह आज विदाई की वेला में मिलने के लिए आया था। मंदाकिनी का मन भर आया।

'सीतू!'

'हाँ माँ।'

'तू कैसे आ पहुँचा रे?'

'क्यों नहीं आता? मुझ पर नाराज होकर तुम घर-गृहस्थी त्यागकर चली जाओगी, मैं सोच भी नहीं सकता था माँ। अगर पहले इतना पता चलता तो तुम्हारी वह मोम की गुड़िया से ही—।'

'अरे! अरे! इतना बड़ा लड़का होकर तू रो रहा है?' मुकुंद बाबू ने सीतू को अपने पास खींच लिया। रेखा भी अपने को और रोक नहीं सकी, रो पड़ी। यहाँ तक कि उसकी पंजाबी सास भी ओढ़नी से अपनी आँखें पोंछ रही थी। ट्रेन के डिब्बे में एक शोकाकुल परिस्थिति बन चुकी थी।

मंदाकिनी और मणिबाबू अवाक् नयनों से सबको देख रहे थे। उनके जाने के दुःख में ये लोग इतने विचलित हो रहे थे। इनके मन में उनके लिए कितनी जगह थी?

मणिबाबू और मंदाकिनी का मन इस समय विचलित हो उठा था। इसलिए वे समझ नहीं पा रहे थे कि ऐसा भी होता है। जब तक आदमी सब कुछ मुट्ठी में बाँधकर रखना चाहता है वह मुट्ठी से निकल जाने की कोशिश में लगा रहता है। और जिस मुहूर्त में आदमी त्याग के मंत्र का उच्चारण करता है, उसी क्षण सब कुछ उसकी मुट्ठी में आ जाता है।

टन टन टन। गाड़ी की घंटी बज उठी।

हड़बड़ाकर सभी गाड़ी से उतर पड़े। उसी भीड़ में पर्वत समान भारी पोटला सर पर लिए हनुमान नहीं, श्रीमान् मधु का प्रवेश हुआ।

मंदाकिनी के छोड़े हुए सारे सामान को मधु अपने साथ बाँध लाया था। [illegible] [illegible], [illegible], कचनारी छड़ी, बेंत का मोढ़ा, काठ का पीढ़ा, जर्दा तम्बाकू, [illegible] का तेल, छाता, ताश की पत्तियाँ, [illegible] की डिबिया और [illegible] टूटे वाला घड़ा, गरम और ठंडे पानी का [illegible], धुएँ और धूल में [illegible] का एक पुराना [illegible] साहित्य [illegible]। [illegible], छोटे [illegible] [illegible] जासूसी किताबें, जो [illegible]

शशिबाबू की चीज समझ म आई, वह उठा लाया। मदाकिनी का सामान भी था। पान का सामान, डब्बा डब्बी, जिल्द उतरी हुई रामायण, महा भारत ऐसा ही बहुत कुछ।

कुलिया के हो-हल्ला, उपस्थित लोगा का विस्मय और मधु का चिल्लाना, सबने मिलकर माना कमरे के अदर एक आधी ला दी। थोडी देर पहले की उदासी को भूलकर मदाकिनी डाट कर बोली, 'रे मुहजले, फिर तू इन चीजा का पोटला उठाकर मेरे कधा पर लादने चला आया। इतना तग करता है तू कि मेरी मर जान की इच्छा होती ह।'

सारे सामान को ठीक-ठाक रखत हुए मधु बोला, 'यह तो मेरा सौभाग्य है मा जी! कि इतना जलन के बाद भी मधु के तग करन स आपको मरने की इच्छा होती है?

शशिबाबू अभी तक गभीर चुपचाप बैठे थ। गाडी के हिलते ही बोले, 'उतर जा मधु! गाडी छूटने वाली है।'

पर मधु बिस्तर बद खालन म व्यस्त था। बाबू का बिस्तर लगाए बिना वह हिलेगा नही। गाडी तज रफ्तार ले रही थी। शशिबाबू ने उसे धकेल कर दरवाजे तक लाने की कोशिश की। नीचे से सभी पुकारन लग, उतर आ मधु। उतर। बेवकूफ कही का। पागल है क्या? गाडी छूट रही है, होश नही?'

पर कौन किसकी बात सुनता।

गाडी तेज रफ्तार से चलने लगी। गाडी की तेज आवाज म सबकी बात दब गई। प्लेटफाम पीछे छूट गया। मधु निर्विकार था। उसने उठकर दरवाजे का अच्छी तरह से बद कर दिया।

मधु के बिछाए हुए बिस्तर पर शशिबाबू असहाय की तरह बठ गए। बोले, 'बेवकूफ की तरह जो मर्जी कर बैठता है। अब बोल किस मुश्किल मे हम तुमने डाल दिया।

'मुश्किल किस बात की है बाबूजी?' मधु ने बडी सरलता स पूछा।

शशिबाबू बोले, 'पता चलेगा बच्चू जब टिकट चेकर डिब्ब म आएगा। तुझे क्या? दड म तो मेरे ही पैसे जाएगे। यह गाडी तो अब बदवान मे जाकर रुकेगी।'

'बर्दवान में गाड़ी रुक सकती है पर मधु वहां भी नहीं उतरेगा बाबूजी यह मैं कह देता हूं। मैं तो सीधे काशी '

'क्या कहा तू ने? काशी जाएगा?'

'जी बाबूजी। परदेश में दो बुड्ढा-बुड्ढी जा रहे हैं। साथ में एक नौकर न रहे तो सफर में, परदेश में, कितनी तकलीफ होती है, मुझे क्या नहीं मालूम?'

मंदाकिनी मृदु आवाज में बोली, 'अगर तेरे मन की यही इच्छा थी तो पहले क्यों नहीं कहा? टिकट इकट्ठा मंगवा लेते। अच्छी तरह तैयार होकर चलता।'

'टिकट!' मधु सहजभाव से बोला, 'माजी मधु कच्चा काम नहीं करता। यह रहा मेरा टिकट। टिकट चेकर टिकट मांगेगा तो उसके मुंह पर दे मारूंगा।' कह कर मधु ने अपने फतुए से फर्स्टकलास का एक टिकट निकाल कर शशिभूषण बाबू के सामने रख दिया।

'यह क्या?' शशिबाबू ताज्जुब में पड़कर बोले, 'तूने फर्स्ट क्लास का टिकट खरीदा है?'

'जी बाबूजी। प्रथम श्रेणी का ही टिकट ले लिया। मैं ठहरा मूर्ख आदमी। मुझे किस बात की समझ है? टिकट बाबू कहीं दिक्कत न करें इसलिए।'

मंदाकिनी की आंखें गीली हो आयीं, पर चेहरा खिल उठा बोली, 'बस तो तू कुछ नहीं जानता पर मुझे तंग करना खूब जानता है।'

'इतने दिनों में माजी आपने अब मधु को ठीक तरह से पहचाना।

गाड़ी तेज रफ्तार से भाग रही थी। रात के अंधेरे में बाहर का दृश्य कुछ दिखाई नहीं पड़ता था, पर किसी स्टेशन के पास आते ही जगमगाती रोशनी देखने को मिलती। नगर, जंगल और नदी के बीच-बीच में उदास धरती का कोलाहल था, खिड़की से बाहर की तरफ मुंह करके मंदाकिनी चुपचाप बैठी थी। आकाश के तारे भी मानो मंदाकिनी के साथ-साथ दौड़ रहे थे। जीवन में पहले कभी मंदाकिनी ने इन तारों को देखा था, उसे याद नहीं।

जीवन के बारे में कुछ सोचने के बोझ को हटाकर इन तारों का दर्शन

से मानो यह आश्वासन मिलता है कि नहीं। सब कुछ खत्म नहीं हुआ। जीवन मे और भी बहुत कुछ है। जीवन की राह म सभावनाओ का कोई अत नही।

बहुत दिना से सचित क्षोभ, ग्लानि, और कड़ुआपन, मान,स्वाभिमान को मदाकिनी अब ढूढे भी नही पा रही थी।

कैशोय की कौतूहल भरी नजरा से मदाकिनी बाहर की दुनिया को देख रही थी। आखें फाडकर प्रकाश और अधकार की आख मिचौली देख रहा थी। और शशिबाबू ?

शशिबाबू मधु के साथ जमकर गपशप कर रहे थे।

□□□